वृहत्

जैनपद संग्रह

(स्व० पं० दौलतरामजी, पं० भूधरदासजी, पं० भागचंदजी पं० बुधजनजी, पं० द्यानतरायजी पं० जिनेश्वरदासजी, पं० महाचंदजी)

की

चुनी हुई कविताओंका संग्रह ।

संग्रहकर्त्ता:—

पं० सतीशचन्द्रजी न्यायतीर्थ ।

प्रकाशक:—

दुलीचन्द पन्नालाल परवार,

मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय, कलकत्ता ।

प्रथमावृत्ति १०००

वीर निर्वाण सं० २४५२

न्यो० सादी २)
रेशमी जिल्द २॥)

प्रकाशक—

दुलीचंद पन्नालाल परवार,

८३, लोअर चितपुर रोड,

कलकत्ता ।

मुद्रक—

बाबू नरसिंहदास अग्रवाल,

श्रीलक्ष्मी प्रिंटिङ्ग वर्क्स,

३७०, अपर चितपुर रोड,

कलकत्ता ।

हमारा निवेदन

प्रिय पाठकों ! यह संग्रह १ वर्ष पूर्वमें ही निकल गया होता परन्तु इस कर्यालयके मालिक श्री पन्नालालजी सिंघईका अचानक स्वास्थ्य खराब हो गया था इसी कारण उनकी इच्छानुसार कार्य स्थगित कर दिया गया, अन्तमें श्री पन्नालालजी ता० ११-८-२६ को स्वर्गवासी हो गये परंतु उसके पूर्व यह इच्छा प्रगट कर गये कि इसका प्रकाशन शीघ्र ही होना चाहिये। अतएव उक्त स्वर्गीय आत्माकी इच्छानुसार इस कामकी पूर्तिका करना हमारा प्रधान कर्त्तव्य है, बस यही लक्ष्यमें रख कर इस संग्रहका प्रकाशन किया गया है।

इस संग्रहमें प्राचीन उत्तमोत्तम भजनोंका ही समावेश किया गया है। नवीन कवियोंकी कृतिका दूसरा भाग बहुत शीघ्र हम निकालनेका आयोजन कर रहे हैं, अगर समाजने इसे अपनाया तो दूसरा भाग शीघ्र ही आपकी सेवामें लेकर उपस्थित होऊंगा। सीकर-निवासी बा० छोगालालजी सेठीने पं० महाचन्दजी कृत भजनोंको संग्रह करके दिया है इसके लिए हम कृतज्ञ हैं। हमारे श्रद्धेय मित्र पं० सतीशचन्द्रजीने सदैवकी तरह बहुत सहायता दी है, इसके लिये हम पंडितजीको धन्यवाद दिये बगैर नहीं रह सक्ते।

शीघ्रताके कारण दृष्टि दोषसे प्रूफ सम्बन्धी अशुद्धियोंका रह जाना बहुत संभव है इसके लिये विज्ञ पाठक क्षमा ही करेंगे।

समाज सेवकः—मैनेजर, नृपेन्द्रकुमार जैन।

नई चीज ! न देखी होगी !! और न सुनी होगी

श्रीहरिवंशपुराण चित्रावली ।

सूची
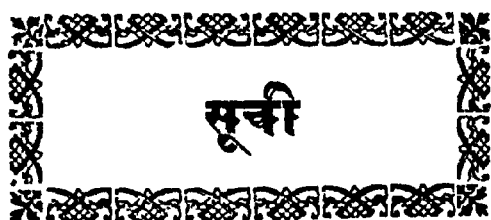
नोट—कुल पदसंख्या ६३५ और पृष्ठसंख्या ४०० है।

वृहत् जैनपदसंग्रह में क्या है ?

जिस संग्रह के लिये जैन समाज के कोने कोने से आर्डर आ रहे थे और हम उन्हें बराबर आस्वासन देते रहे थे-वही आज ६३५ पदों का संग्रह ४०० पृष्ठोंमें छप कर तैयार हो गया इसमें बुधजनजी, द्यानतजी, भूधरजी, भागचन्दजी, जिनेश्वरजी, दौलतरामजी और महाचन्दजी, जैसे महान विद्वानोंकी चुनी हुई उत्तम २ राग रागनियों का संग्रह है। एक ही पुस्तक मंगा लेने से तमाम कवियों की कविताओं का स्वाद आनन्द से मिल सक्ता है। न्योछावर इतने वड़े ग्रन्थ की सिर्फ २) रेशमी जिल्द का २॥) रुपया रक्खा गया है। संग्रह वड़े २ अक्षरों में पुष्ट कागज पर शुद्धता पूर्वक छपाया गया है। मुख पृष्ट पर भाव पूर्ण सुन्दर चित्र भी दिया है। इतना सव होने पर भी सदैव की तरह कार्यालय के ग्राहकोंको पौना कीमत में भेजा जायगा।

पत्र व्यवहार का पताः—

नृपेन्द्रकुमार जैन मैनेजर,

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय, ६७४८, कलकत्ता।

ग्राहक होनेके नियम।

१—१) रुपया प्रवेशफी देनेसे हर कोई भाई ग्राहक हो सकते हैं परंतु प्रकाशित ग्रंथोंमें कमसे कम ५) रु०के ग्रंथ लेने होंगे।

२—ग्राहकोंको १ वर्षमें कमसे कम १०) रुपयाके नवीन ग्रंथ जो प्रकाशित होंगे वह लेने ही होंगे।

३—जिन ग्राहकोंकी वी० पी० वापिस आयगी उनको सूचना दे कर उनका नाम ग्राहक श्रेणीसे पृथक् कर दिया जायगा।

४—२०) रु०से ज्यादा ग्रन्थ मंगाते समय ५) रुपया पेशगी भेजना चाहिये, अन्यथा वी०पी० नहीं भेजी जायगी।

५—रास्तेमें अगर पार्सल खो जाय या खराब हो जाय तो उसके लिये कार्यालय दायी न होगा।

६—ग्रंथ तैयार होते ही ग्राहकोंको सूचना दी जायगी अगर १० दिन तक उनकी इन्कारीका पत्र न आयगा तो वी० पी० भेज दी जायगी—अगर हिसाबमें कुछ भूल हो तो पार्सल छुड़ा कर यहां पत्र लिखें ठीक कर दी जायगी। पर पार्सल लौटानेसे उभयपक्षकी हानि ही है।

नृपेन्द्रकुमार जैन—मैनेजर,
जिनवाणी प्रचारक कार्यालय.
८३ लोअर चितपुर रोड कलकत्ता।

श्री गोमट्टसारजी बड़े ।

२१) रुपयामें १०० ग्राहकोंको दिया जायगा ।

पृष्ट संख्या ४१०० से भी अधिक होगी लब्धिसार क्षपणासार सहित खुले पत्रोंमें पद्मपुराणको साइज और बड़े २ मोतीकी तरह सुन्दर अक्षरोंमें शुद्धता-पूवक छपाये जांयगे । ६१) रुपयामें मिलनेवालेसे उत्तम बनाया जायगा । १०० ग्राहकोंकी स्वीकारता आनेपर छपना प्रारम्भ कर दिया जायगा अतएव शीघ्र ही ग्राहक श्रेणीमें नाम दर्ज कराइये । प्रत्येक जैनमन्दिर, पाठशाला, श्राविकाश्रम, सरस्वती भवनोंमें इसकी प्रति का रखना अत्यन्त जरूरी है । आज ही पत्र लिखें अन्यथा १०० ग्राहक हो जाने बाद दाम बढ़ जायगा ।

निवेदक—

नृपेन्द्रकुमार जैन,

मैनेजर—जि० प्र० का० ६७४८, कलकत्ता ।

बुधजन विलास

१ प्रभाती।

प्रात भयो सब भविजन मिलिकै, जिनवर पूजन आवो ॥ प्रात० ॥ टेक ॥ अशुभ मिटावो पुन्य बढ़ावो, नैननि नींद गमावो ॥ प्रा० ॥ १ ॥ तनको धोय धारि उजरे पट, सुभग जलादिक ल्यावो। वीतरागछवि हरखि निरखिकै, आगमोक्त गुन गावो ॥ प्रा० ॥२ ॥ शास्तर सुनो भनो जिनवानी, तप संजम उपजावो। धरि सरधान देव गुरु आगम, सात तत्त्व रुचि लावो ॥प्रा०॥३॥ दुःखित जनकी दया ल्याय उर, दान चारिविधि द्यावो। राग दोष तजि भजि निज पदको, बुधजन शिवपद पावो ॥ प्रा० ॥ ४ ॥

२ प्रभाती।

किंकर अरज करत जिन साहिब, मेरी ओर

निहारो ॥ किंकर ॥ टेक ॥ पतितउधारक दीन-दयानिधि, सुन्यौ तोहि उपगारो । मेरे औगुनपै मति जावो, अपनो सुजस विचारो ॥ किं० ॥१॥ अवज्ञानी दीसत हैं तिनमैं, पक्षपात उरझारो । नाहीं मिलत महाव्रतधारी, कैसैं ह्वै निरवारो ॥ किं० ॥ २ ॥ छवी रावरी नैननि निरखी, आगम सुन्यौ तिहारो । जात नहीं भ्रम क्यों अव मेरो, या दूषनको टारो ॥ किं० ॥ ३ ॥ कोटि बातकी वात कहत हूं, यो ही मतलब म्हारो । जौलौं भव तौलौं बुधजनको, दीज्ये सरन सहारो ॥ किं० ॥ ४ ॥

३ तिताला ।

पतितउधारक पतित रटत है, सुनिये अरज हमारी हो ॥ पतित० ॥ टेक ॥ तुमसो देव न आन जगतमैं, जासौं करिये पुकारी हो ॥ प०॥१॥ साथ अविद्या लगि अनादिकी, रागदोष विस्तारी हो । याहीतैं सन्तति करमनिकी, जनममरनदु-खकारी हो ॥ प० ॥ २ ॥ मिलै जगत जन जो

भरमावै, कहै हेत संसारी हो। तुम विनकारन शिवमगदायक, निजसुभावदातारी हो ॥प०॥३॥ तुम जाने विन काल अनन्ता, गति गतिके भव धारी हो। अब सनमुख बुधजन जांचत है, भव-दधि पार उतारी हो ॥ पतित० ॥ ४ ॥

४ तिताला।

और ठौर क्यों हेरत प्यारा, तेरे हि घटमें जाननहारा ॥ और० ॥ टेक ॥ चलन हलन थल वास एकता, जात्यान्तरतैं न्यारा न्यारा ॥ और० ॥ १ ॥ मोहउदय रागी द्वेषी ह्वै, क्रोधादिकका सरजनहारा। भ्रमत फिरत चारौं गति भीतर, जनम मरन भोगतदुख भारा ॥ और० ॥ २ ॥ गुरु उपदेश लखै पद आपा, तबहिं विभाव करै परिहारा। ह्वै एकाकी बुधजन निश्चल, पावै शिवपुर सुखद अपारा ॥ और० ॥ ३ ॥

५ तिताला।

काल अचानक ही ले जायगा, गाफिल होकर रहना क्या रे ॥ काल० ॥ टेक ॥ छिन हूं

तोकूं नाहिं बचावैं, तौ सुभटनका रखना क्या रे ॥ काल० ॥ १ ॥ रंच सवाद करिनके काजै, नरकनमैं दुख भरना क्या रे। कुलजन पथिकनिके हितकाजैं, जगत जालमें परना क्या रे ॥ काल० ॥ २ ॥ इंद्रादिक कोउ नाहिं बचैया, और लोकका शरना क्या रे। निश्चय हुआ जगतमें मरना, कष्ट परै तब डरना क्या रे ॥ काल०॥ ३ ॥ अपना ध्यान करत खिर जावैं, तौ करमनिका हरना क्या रे। अब हित करि आरत तजि बुधजन, जन्म जन्ममें जरना क्या रे ॥ काल०॥४॥

६ भजन।

म्हे तो थापर वारी, वारी वीतरागीजी, शांत छवी थांकी आनंदकारी जी ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ इंद्र नरिंद्र फरिंद मिलि सेवत, मुनि सेवत रिधिधारी जी ॥ म्हे० ॥ १ ॥ लखि अविकारी पर-उपकारी, लोकालोकनिहारी जी ॥ म्हे० ॥ २ ॥ सब त्यागी जो कृपातिहारी, बुधजन ले बलिहारी जो ॥ म्हे० ॥ ३ ॥

७ भजन।

या नित चितवो उठिकै भोर, मैं हूं कौन कहांतैं आयो, कौन हमारी ठौर ॥ या नित०॥टेक॥ दीसत कौन कौन यह चितवत, कौन करत है शोर। ईश्वर कौन कौन है सेवक, कौन करे झकझोर॥ या नित० ॥ १ ॥ उपजत कौन मरैको भाई, कौन डरे लखि घोर। गया नहीं आवत कछु नाहीं, परिपूरन सब ओर ॥ या नित० ॥ २ ॥ और और मैं और रूप है, परनतिकरि लइ और। स्वांग धरैं डोलौ याहीतैं, तेरी बुधजन भोर ॥ या नित० ॥ ३ ॥

८ भजन।

श्रीजिनपूजनको हम आये, पूजत हो दुख-दुंद मिटाये ॥ श्रीजिन० ॥ टेक ॥ विकलप गयो प्रगट भयो धीरज अदभुत सुख समता वरसाये। आधि व्याधि अब दीखत नाहीं, धरम कलपतरु आँगन थाये ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ इतमैं इन्द्र चक्रवति इतमैं, इतमैं फनिँद खरे सिर नाये।

मुनिजनवृंद करैं थुति हरषत, धनि हम जनमैं पद परसाये ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ परमौदारिकमैं परमातम, ज्ञानमई हमको दरसाये । ऐसे ही हममैं हम जानैं, बुधजन गुन मुख जात न गाये ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥

९ राग—ललित एकताली ।

बधाई राजै हो आज राजै, बधाई राजै, नाभिरायके द्वार । इन्द्र सची सुर सब मिलि आये, सजि ल्याये गजराजै ॥ बधाई० ॥ १ ॥ जन्मसदनतैं सची ऋषभ ले, सौंपिदये सुरराजै गजपै धारि गये सुरगिरिपै, न्हौंन करनके काजै ॥ बधाई० ॥ २ ॥ आठ सहस सिर कलस जु ढारे, पुनि सिंगार समाजै । ल्याय धरयौ मरुदेवी करमैं हरि नाच्यौ सुख साजै ॥ बधाई० ॥३॥ लच्छन व्यंजन सहित सुभग तन, कंचनद्युति रवि लाजै । या छबि बुधजनके उर निशि दिन, तीनज्ञानजुत राजै ॥ बधाई० ॥ ४ ॥

१० राग—ललित तिताली ।

हो जिनवानी जू, तुम मोकौं तारोगी ॥

हो० ॥ टेक ॥ आदि अन्त अविरुद्ध वचनतै, संशय भ्रम निरवारोगी ॥ हो० ॥ १ ॥ ज्यौं प्रतिपालत गाय बत्सकौं, त्यों ही मुझकौं पारोगी। सनमुख काल बाघ जब आवै, तब तत्काल उबारोगी ॥ हो० ॥ २ ॥ बुधजन दास वीनवै माता, या विनती उर धारोगी। उलझि रह्यौ हूं मोहजालमें, ताकौं तुम सुरझारोगी ॥ हो० ॥ ३ ॥

११ राग—विलावल कनड़ी।

मनकै हरष अपार—चितकै हरष अपार, वानी सुनि ॥ टेक ॥ ज्यौं तिरषातुर अम्रत पीवत, चातक अंबुद धार ॥ वानी सुनि० ॥ १ ॥ मिथ्या तिमिर गयो ततखिन हो, संशयभरम निवार। तत्त्वारथ अपने उर दरस्यौ, जानि लियो निज सार ॥ वानी सुनि० ॥ २ ॥ इन्द नरिंद फनिंद पदीधर, दीसत रंक लगार। ऐसा आनंद बुधजनके उर, उपज्यौ अपरंपार ॥ वानी सुनि० ॥३॥

१२ राग—अलहिया।

चन्दजिनेसुर नाथ हमारा, महासेनसुत

लगत पियारा ॥ चन्द० ॥ टेक ॥ सुरपति नरपति फनिपति सेवत, मानि महा उत्तम उपगारा। मुनिजन ध्यान धरत उरमाहीं, चिदानंद पद-वीका धारा ॥ चन्द० ॥ १ ॥ चरन शरन बुधजन जे आये, तिन पाया अपना पद सारा । मंगल-कारी भवदुखहारी, स्वामी अद्भुतउपमावारा ॥ चन्द० ॥ २ ॥

१३ राग—अलहिया विलावल--ताल धीमा तेताला ।

करम देत दुख जोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ टेक ॥ कैइ परावृत पूरन कीनैं, संग न छाँड़त मोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ १ ॥ इनके वशतैं मोहि बचावो, महिमा सुनि अति तोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ २ ॥ बुधजनकी विनती तुम-हीसौं, तुमसा प्रभु नहिं और, हो साइँयां ॥ करम० ॥ ३ ॥

१४ राग—सारंग ।

तन देख्या अथिर घिनावना ॥ तन० ॥ टेक बाहर चाम चमक दिखलावै, माहीं मैल अपावना ।

बालक ज्वान बुढ़ापा मरना, रोगशोक उपजावना ॥ तन० ॥ १ ॥ अलख अमूरति नित्य निरंजन, एकरूप निज जानना। वरन फरस रस गंध न जाकै, पुन्य पाप विन मानना ॥ तन० ॥ २ ॥ करि विवेक उर धारि परीक्षा, भेद--विज्ञान विचारना। बुधजन तनतैं ममत मेटना, चिदानंद पद धारना ॥ तन० ॥ ३ ॥

१५ राग सारंग लूहरी।

तेरो करि लै काज वखत फिरना ॥ तेरो० ॥ टेक ॥ नरभव तेरे वश चालत है, फिर परभव परवश परना ॥ तेरो० ॥ १ ॥ आन अचानक कंठ दबैंगे, तव तोकौं नाही शरना। यातैं विलम न ल्याय बावरे, अब ही कर जो है करना ॥ तेरो० ॥ २ ॥ सब जीवनकी दया धार उर, दान सुपात्रनि कर धरना। जिनवर पूजि शास्त्र सुनि नित प्रति, बुधजन संवर आचरना ॥ तेरो० ॥३॥

१६ राग—लूहरी मीणांकी चालमें।

अहो ! देखो केवलज्ञानी, ज्ञानी छवि भली

या विराजै हो--भली या विराजै हो ॥ अहो० ॥ टेक ॥ सुर नर मुनि याकी सेव करत हैं, करम हरनके काजै हो ॥ अहो० ॥ १ ॥ परिग्रहरहित प्रातिहारजुत, जगनायकता छाजै हो । दोप बिना गुन सकल सुधारस, दिविधुनि मुखतैं गाजै हो ॥ अहो देखो० ॥ २ ॥ चितमैं चितवत ही छिनमाहीं, जन्म जन्म अघ भाजै हो । बुध-जन याकौं कबहुं न विसरो, अपने हितके काजै हो ॥ अहो० ॥ ३ ॥

१७ राग—सारंग लूहरि ।

ओजी तारनहारा थे तो, मोनैं प्यारा लागो राज ॥ ओ ॥ टेक ॥ बार सभा बिच गंधकुटीमें राज रहे महाराज ॥ ओ० ॥ १ ॥ अनंत कालका भरम मिटत है, सुनतहिं आप अवाज ॥ ओ० ॥ २ ॥ बुधजन दास रावरो विनवै, थांसूं सुधरै काज ॥ ओ० ॥ ३ ॥

१८ राग—पूरवी एकताला ।

तनके मवासी हो, अयाना ॥ तनके० ॥ टेक

चहुंगति फिरत अनंतकालतैं, अपने सदनको सुधि भौराना ॥ तनके० ॥ १ ॥ तन जड़ फरस गंध रसरूपी, तू तौ दरसनज्ञान निधाना, तनसौं ममत मिथ्यात मेटिकैं, बुधजन अपने शिवपुर जाना ॥ तनके० ॥ २ ॥

१९ राग—पूरवी एकतालो।

नैन शान्त छवि देखि छके दोउ ॥ नैन० टेक ॥ अब अद्भुत दुति नहिं बिसराउं, बुरा भला जग कोटि कहो कोउ ॥ नैन० ॥ १ ॥ वड़ भागन यह अवसर पाया, सुनियो जी, अब अरज मेरी कहूं । भवभवमें तुमरे चरननको, बुधजन दास सदा हि बन्यो रहूं ॥ नैन० ॥ २ ॥

२० राग—पूरवी जल्द तितालो।

हरना जी जिनराज, मोरी पीर ॥ हरना० ॥ टेक ॥ आन देव सेये जगवासी, सर्यौ नहीं मोर काज ॥ हरना० ॥ १ ॥ जगमें बसत अनेक सहज ही, प्रनवत विविध समाज । तिनपै इष्ट अनिष्ट कल्पना, मैंटोगे महाराज ॥ हरना० ॥२

पुद्गल राचि अपनपौ भूल्यौ, विरथा करत इलाज। अबहिं जथाविधि वेगि बतावो, बुधजनके सिरताज ॥ हरना० ॥ ३ ॥

२१ राग—पूरवी।

भजन बिन यौं ही जनम गमायो ॥ भजन० ॥ टेक ॥ पानी पैल्यां पाल न बांधी, फिर पीछैं पछतायो ॥ भज० ॥ १ ॥ रामा-मोह भये दिन खोवत, आशापाश बँधायो। जप तप संजम दान न दीनौं, मानुष जनम हरायो ॥ भजन० ॥ २ ॥ देह सीस जब कांपन लागी, दसन चलाचल थायो। लागी आगि भुजावन कारन, चाहत कूप खुदायो ॥ भजन० ॥ ३ ॥ काल अनादि गुमायो भ्रमतां, कबहुं न थिर चित ल्यायो। हरी विषयसुख भरम भुलानो, मृग तिसनां-वश धायो ॥ भजन० ॥ ४ ॥

२२ राग-पूरवी।

तारो क्यौं न, तारो जी म्हें तो थांके शरना आया ॥ टेक ॥ विधान मोकौं चहुँ गति फेरत,

वड़े भाग तुम दरशन पाया॥ तारो०॥ १॥
मिथ्यामत जल मोह मकरजुत, भरम भौंरमें
गोता खाया। तुम मुख वचन अलंबन पाया,
अब बुधजन उरमें हरपाया॥ तारो०॥ २॥

२३

भवदधि-तारक नवका, जगमाहीं जिनवान॥
भव०॥ टेक॥ नय प्रमान पतवारी जाके, खेवट
आतम ध्यान॥ भव०॥ १॥ मन वच तन सुध
ज भवि धारत, ते पहुँचत शिवथान। परत अ-
थाह मिथ्यात भँवर ते, जे नहिं गहत अजान॥
भव०॥ २॥ विन अच्छर जिनमुखतैं निकसी,
परी वरनजुत कान। हितदायक बुधजनकों गन-
धर, गूंथे ग्रंथ महान॥ भव०॥ ३॥

२४ राग—धनासरी धीमो तिताली।

प्रभु, थांसूं अरज हमारी हो॥ प्रभु०॥
टेक॥ मेरे हितू न कोऊ जगतमैं, तुम ही हो
हितकारी हो॥ प्रभु०॥ १॥ संग लग्यौ मोहि
नेक न छांड़ै, देत मोह दुख भारी। भववनमाहिं

नचावत मोकौं, तुम जानत हौं सारी ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ थांको महिमा अगम अगोचर, कहि न सकै बुधि म्हारी। हाथ जोरकै पाय परत हूं, आवागमन निवारी हो ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

२५

याद प्यारी हो, म्हांनैं थांकी याद प्यारी ॥ हो म्हांनै० ॥ टेक ॥ मात तात अपने स्वारथके, तुम हितु परउपगारी ॥ हो म्हानैं० ॥ १ ॥ नगन छवी सुन्दरता जापै, कोटि काम दुति वारी। जन्म जन्म अवलोकौं निशिदिन, बुधजन जा बलिहारी ॥ हो म्हांनैं० ॥ २ ॥

२६ राग—गौड़ी ताल।

अरे हाँ रे तैं तो सुधरी बहुत विगारी ॥ अरे ॥ टेक ॥ ये गति मुक्ति महलकी पौरी, पाय रहत क्यौं पिछारी ॥ अरे० ॥ १ ॥ परकौं जानि मानि अपनो पद, तजि ममता दुखकारी। श्रावक कुल भवदधि तट आयो, बूड़त क्यौंरे अनारी ॥ अरे० ॥ २ ॥ अबहूं चेत गयो कछु नाहीं, राखि आपनी

नारी। शक्तिसमान त्याग तप करिये, तब बुध-
जन सिरदारी ॥ अरे० ॥ ३ ॥

२७ राग—काफी कनड़ी।

मैं देखा आतमरामा ॥ मैं० ॥ टेक ॥ रूप
फरस रस गंधतैं न्यारा, दरस-ज्ञान-गुनधामा।
नित्य निरंजन जाकै नाहीं, क्रोध लोभ मद
कामा ॥ मैं० ॥ १ ॥ भूख प्यास सुख दुख नहिं
जाकै, नाहीं वन पुर गामा। नहिं साहिब नहिं
चाकर भाई, नहीं तात नहिं मामा ॥ मैं० ॥ २॥
भूलि अनादिथकी जग भटकत, लै पुद्गलका
जामा। बुधजन संगति जिनगुरुकीतैं, मैं पाया
मुक्त ठामा ॥ मैं ॥ ३ ॥

२८ राग—काफी कनड़ी—ताल पसतो।

अब अघ करत लजाय रे भाई ॥ अब० ॥
टेक ॥ श्रावक घर उत्तम कुल आयो, भेंटे श्री-
जिनराय ॥ अब० ॥ १ ॥ धन वनिता आभूषन
परिगह, त्याग करौ दुखदाय। जो अपना तू
तजि न सकै पर, सेयां नरक न जाय ॥ अब०

॥ २ ॥ विषयकाज क्यौं जनम गुमावै, नरभव कब मिलि जाय । हस्ती चढ़ि जो ईंधन ढोवे, बुधजन कौन बसाय ॥ अब० ॥ ३ ॥

२९ राग—काफी कनड़ी ।

तोकौं सुख नहिं होगा लोभीड़ा ! क्यौं भूल्या रे परभावनमैं ॥ तोकौं० ॥ टेक ॥ किसी भाँति कहूंका धन आवै, डोलत है इन दावनमैं ॥ तोकौं० ॥ १ ॥ व्याह करूँ सुत जस जग गावै, लग्यौ रहै या भावनमैं ॥ तोकौं० ॥ २ ॥ दरब परिनमत अपनी गौंतैं, तू क्यों रहित उपायनमैं तोकौं० ॥ ३ ॥ सुख तो है सन्तोष करनमैं, नाहीं चाह बढावनमैं ॥ तोकौं० ॥४॥ कै सुख है बुध-जनकी संगति, कै सुख शिवपद पावनमैं ॥ तोकौं० ॥ ५ ॥

३० राग—कनड़ी ।

निरखे नाभिकुमारजी, मेरे नैन सफल भये निर० ॥ टेक ॥ नये नये वर मंगल आये, पाई निज रिधि सार ॥ निरखे० ॥ १ ॥ रूप निहारन

कारन हरिने, कीनी आंख हजार। वैरागी मुनि-
वर हू लखिकै, ल्यावत हरष अपार॥ निरखे०
॥ २॥ भरम गयो तत्वारथ पायो, आवत ही
दरबार। बुधजन रचन शरन गहि जांचत, नहिं
जाऊं परद्वार॥ निरखे०॥ ३॥

(३१) राग—बिलावल धीमो तेतालो।

नरभव पाय फेरि दुख भरना, ऐसा काज
न करना हो॥ नरभव०॥ टेक॥ नाहक ममत
ठानि पुद्गलसौं, करमजाल क्यौं परना हो॥
नरभव०॥ १॥ यह तो जड़ तू ज्ञान अरूपी,
तिल तुष ज्यौं गुरु वरना हो। राग दोष तजि
भजि समताकौं, कर्म साथके हरना हो॥ नर-
भव०॥ २॥ यो भव पाय विषय—सुख सेना,
गज चढ़ि ईंधन ढोना हो। बुधजन समुझि सेय
जिनवर पद, ज्यौं भवसागर तरना हो॥ नर-
भव०॥ ३॥

(३२) राग—बिलावल इकतालो।

सारद! तुम परसादतैं, आनंद उर आया॥

सारद० ॥ टेकं ॥ ज्यौं तिरसातुर जीवकौं, अम्रत जल पाया ॥ सारद० ॥ १ ॥ नय परमान निखेपतैं तत्वार्थ बताया । भाजी भूलि मिथ्यातकी, निज निधि दरसाया ॥ सारद० ॥ २ ॥ विधिना मोहि अनादितैं, चहुंगति भरमाया । ता हरिबेकी विधि सबै, मुझमाहिं बताया ॥ सारद० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त मति अलपतैं, मोपै जात न गाया । प्रचुर कृपा लखि रावरी, बुधजन हरषाया ॥ सारद० ॥ ४ ॥

(३३)

गुरु दयाल तेरा दुख लखिकैं, सुन लै जो फुरमावै है ॥ गुरु० ॥ तोमैं तेरा जतन बतावै, लोभ कछू नहिं चावै है ॥ गुरु० ॥ १ ॥ पर सुभावको मोस्या चाहै, अपना उसा बनावै है । सो तो कबहूं हुवा न होसी, नाहक रोग लगावै है ॥ गुरु० ॥ २ ॥ खोटी खरी जस करी कमाई, तैसी तेरै आवै है । चिन्ता आगि उठाय हियामैं, नाहक जान जलावै है ॥ गुरु० ॥ ३ ॥ पर अपनावै

सो दुख पावै, बुधजन ऐसे गावै है। परको त्यागि आप थिर तिष्ठै, सो अविचल सुख पावै है॥ गुरु०॥ ४॥

(३४) राग—असावरी।

अरज ह्मारी मानो जी, याही ह्मारी मानो, भवदधि हो तारना ह्मारा जी॥ अरज०॥ टेक पतितउधारक पतित पुकारै, अपनो विरद पिछा-नो॥ अरज०॥ १॥ मोह मगर मछ दुख दावा-नल, जनम मरन जल जानो। गति गति भ्रमन भँवरमैं डूबत, हाथ पकरि ऊंचो आनो॥ अरज० ॥ २॥ जगमैं आन देव बहु हेरे, मेरा दुख नहिं भानो। बुधजनकी करुना ल्यो साहिब, दीजे अ-विचल थानो॥ अरज०॥ ३॥

(३५) राग—असावरी जोगिया ताल धीमो तेतालो।

तू कांई चालै लाग्यो रे लोभीड़ा, आयो छै वुढ़ापो॥ तू०॥ टेक॥ धंधामाही अंधा ह्वै कै, क्यों खोवै छै आपो रे॥ तू०॥ १॥ हिमत घटी थारी सुमत मिटी छै, भाजि गयो तरुणापो।

जम ले जासी सब रह जासी, संग जासी पुन पापो रे ॥ तू० २ ॥ जग स्वारथको कोइ न तेरो, यह निहचै उर थापो । बुधजन ममत मिटावौ मनतैं, करि मुख श्रीजिनजापो रे ॥ तू० ॥ ३ ॥

(३६) राग—असावरी जोगिया ताल धीमो तेतालो ।

थे ही मोनैं तारो जी, प्रभुजी कोई न हमारो ॥ थे ही० ॥ टेक ॥ हूं एकाकि अनादि कालतैं, दुख पावत हू भारो जी ॥ थे ही० ॥१॥ बिन मतलबके तुम ही स्वामी, मतलबकौ संसारो । जग जन मिलि मोहि जगमैं राखैं, तू ही काढ़नहारो ॥ थे ही० ॥ २ ॥ बुधजनके अपराध मिटावो, शरन गह्यो छै थारो । भवदधिमाहीं डूबत मोकौं, कर गहि आप निकारो ॥ थे ही० ॥ ३ ॥

(३७) राग—आसावरी झांझ, ताल धीमो एकतालो ।

प्रभू जी अरज ह्मारी उर धरो ॥ प्रभू जी० टेक ॥ प्रभू जी नरक निगोद्यांमैं रुल्यौ, पायो दुःख अपार ॥ प्रभू जी० ॥ १ ॥ प्रभू जी, हूं

पशुगतिमैं ऊपज्यौ, पीठ सह्यौ अतिभार ॥ प्रभू जी० ॥ २ ॥ प्रभू जी, विषय मगनमैं सुर भयो, जात न जान्यौ काल ॥ प्रभू जी, ॥ ३ ॥ प्रभूजी नरभव कुल श्रावक लह्यौ, आयो तुम दरवार ॥ प्रभू जी० ॥ ४ ॥ प्रभू जी, भव भरमन बुधजन-तनों,मेटौ करि उपगार ॥ प्रभू जी० ॥ ५ ॥

(३८) राग—आसावरी।

जगतमैं होनहार सा होवै, सुर नृप नाहिं मिटावै ॥ जगत० ॥ टेक ॥ आदिनाथसेकौं भोजनमैं, अन्तराय उपजावै। पारसप्रभुकौं ध्यान लीन लखि, कमठ मेघ बरसावै ॥ जगत० ॥ १ ॥ लखमणसे संग भ्राता जाकै, सीता राम गमावै। प्रतिनारायण रावणसेकी, हनुमत लंक जरावै ॥ जगत० ॥ २ ॥ जैसो कमावै तैसो ही पावै, यों बुधजन समझावै। आप आपकौं आप कमावौ, क्यौं परद्रव्य कमावै ॥ जगत० ॥ ३ ॥

(३९) राग—आसावरी जलद तेतालो।

आगैं कहा करसी भैया, आजासी जब

काल रे ॥ आगैं० ॥ टेक ॥ ह्यां तौ तैंनैं पोल मचाई, व्हां तौ होय समाल रे ॥ आगैं० ॥ १ ॥ झूठ कपट करि जीव सताये, हर्या पराया माल रे । सम्पतिसेती धाप्या नाहीं, तकी बिरानो बाल रे ॥ आगैं० ॥ २ ॥ सदा भोगमैं मगन रह्या तू, लख्या नहीं निज हाल रे । सुमरन दान किया नहिं भाई, हो जासी पैमाल रे ॥ आगैं० ॥ ३ ॥ जोवनमैं जुवती संग भूल्या, भूल्या जब था बाल रे । अब हूं धारो बुधजन समता, सदा रहहु खुश हाल रे ॥ आगैं० ॥ ४ ॥

(४०) राग आसावरी जोगिया जलद् तेतालो ।

चेतन, खेल सुमतिसंग होरी ॥ चेतन० टेक तोरि आनकी प्रीति सयाने, भली बनी या जौरी चेतन० ॥ १ ॥ डगर डगर डोलै है यौं ही, आव आपनी पौरी निज रस फगुवा क्यौं नहिं बांटो, नातर ख्वारी तोरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ छार कषाय त्यागि या गहि लै, समकित केसर घोरी । मिथ्या पाथर डारि धारि लै, निज गुलालकी झोरी ॥

चेतन० ॥ ३ ॥ खोटे भेष धरैं डोलत है, दुख पावै बुधि भोरी। बुधजन अपना भेष सुधारो, ज्यौं विलसो शिवगोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

(४१) राग—आसावरी जोगिया जल्द तेतालो।

हे आतमा! देखी दुति तोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ टेक ॥ निजको ज्ञात लोकको ज्ञाता, शक्ति नहीं थोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ १ ॥ जैसी जोति सिद्ध जिनवरमैं, तैसी ही मोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ २ ॥ जड़ नहिं हुवो फिरै जड़केवसि, कै जड़की जोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ ३ ॥ जगके काजि करन जग टहलै, बुधजन मति भोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ ४ ॥

(४२)

बाबा! मैं न काहूका, कोई नहीं मेरा रे ॥ बाबा० ॥ टेक ॥ सुर नर नारक तिरयक गतिमैं, मोकों करमन घेरा रे ॥ बाबा० १ ॥ मात पिता सुत तिय कुल परिजन, मोह गहल उरझेरा रे। तन धन वसन भवन जड़ न्यारे, हूं चिन्मूरति

न्यारा रे ॥ बाबा० ॥ २ ॥ मुक्त विभाव जड़ कर्म रचत हैं, करमन हमको फेरा रे। विभाव चक्र तजि धारि सुभावा, अब आनंदघन हेरा रे ॥ बाबा० ॥ ३ ॥ खरच खेद नहिं अनुभव करते, निरखि चिदानंद तेरा रे। जप तप व्रत श्रुत सार यही है, बुधजन कर न अबेरा रे ॥ बाबा० ॥ ४ ॥

(४२)

और सबै मिलि होरि रचावैं, हूं काके संग खेलौंगी होरी ॥ और० ॥टेक॥ कुमति हरामिनि ज्ञानी पियापै, लोभ मोहकी डारी ठगौरी। भोरै झूठ मिठाई खवाई, खोंसि लये गुन करि बरजोरी ॥ और० ॥ १ ॥ आप हि तीन लोकके साहिब, कौन करै इनकै सम जोरी। अपनी सुधि कबहूं नहिं लेते, दास भये डोलैं पर पौरी ॥ और० ॥२॥ गुरु बुधजनतैं सुमति कहत हैं, सुनिये अरज दयाल सु मोरी। हा हा करत हूं पाँय परत हूं, चेतन पिय कीजे मो ओरी ॥ और० ॥ ३ ॥

(४४)

धर्म बिन कोई नहीं अपना, सब संपति धन थिर नहिं जगमें, जिसा रैन सपना ॥धर्म०॥टेक आगैं किया सो पाया भाई, याही है निरना। अब जो करैगा सो पावैगा, तातैं धर्म करना ॥ धर्म०॥ १ ॥ ऐसैं सब संसार कहत है, धर्म कियैं तिरना। परपीड़ा बिसनादिक सेवैं, नरकविषैं परना ॥ धर्म० ॥ २ ॥ नृपके घर सारी सामग्री, ताकैं ज्वर तपना। अरु दारिद्रीकैं हू ज्वर है, पाप उदय थपना ॥ धर्म० ॥ ३ ॥ नाती तो स्वारथके साथी, तोहि विपत भरना। वन गिरि सरिता अगनि जुद्धमैं, धर्महिका सरना ॥ धर्म० ॥ ४ ॥ चित बुधजन सन्तोष धारना, पर चिन्ता हरना। विपति पड़ै तो समता रखना, परमातम जपना ॥ धर्म०॥५॥

(४५) राग—टोडी ताल होलीकी।

कंचन दुति व्यंजन लच्छन जुत, धनुष पांच सै ऊंची काया ॥ कंचन० ॥ टेक ॥ नाभिराय मरुदेवीके सुत, पदमासन जिन ध्यान लगाया ॥

कंचन० ॥ १ ॥ ये तिन सुत व्योहार कथनमैं, निश्चय एक चिदानँद गाया। अपरस अवरन अरस अगंधित, बुधजन जानि सु सीस नवाया ॥ कंचन० ॥ २ ॥

(४६)

धनि सरधानी जगमैं, ज्यौं जल कमल निवास ॥ धनि० ॥ टेक ॥ मिथ्या तिमिर फट्यो प्रगट्यो शशि, चिदानँद परकास ॥ धनि० ॥ १ ॥ पूरव कर्म उदय सुख पावैं, भोगत ताहि उदास। जो दुखमैं न विलाप करैं, निरवैर सहैं तन त्रास ॥ धनि० ॥ २ ॥ उदय मोहचारित परवशि ह्वै, व्रत नहिं करत प्रकास। जो किरिया करि हैं निरवांछक, करैं नहीं फल आस ॥ धनि० ॥ ३ ॥ दोषरहित प्रभु धर्म दयाजुत, परिग्रह बिन गुरु तास। तत्त्वारथरुचि है जाके घट, बुधजन तिनका दास ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(४७) राग—सारंग।

बधाई भई हो, तुम निरखत जिनराय, बधाई

भई हो ॥ टेक ॥ पातक गये भये सब मंगल, भेंटत चरनकमल जिनराई ॥ बधाई० ॥१॥ मिटे मिथ्यात भरमके बादर,प्रगटत आतम रवि अरुनाई। दुरबुध चोर भजे जिय जागे, करन लगे जिन धम कमाई ॥ बधाई० ॥ २ ॥ दृग सरोज फूले दरसनतें, तुम करुना कीनी सुखदाई। भाषि अनुब्रत महाविरतको, बुधजनको शिवराह बताई ॥ बधाई० ॥ ३ ॥

(४८) राग—सारंगकी मांझ ताल दीपचन्दी।

म्हांरी सुणिज्यो परम दयालु, तुमसों अरज करूं ॥ म्हांरी० ॥ टेक ॥ आन उपाव नहीं या जगमें, जग तारक जिनराज तेरे पांय परूं ॥ म्हांरी० ॥१॥ साथ अनादि लागि विधि मेरी, करत रहत बेहाल, इनकौं कौलौं भरूं ॥म्हांरी० ॥ २ ॥ करि करुना करमनको काटो,जनम मरन दुखदाय, इनतैं बहुत डरूं ॥ म्हांरी०॥३॥ चरन सरन तुम पाय अनूपम, बुधजन मांगत येह-गति गति नाहिं फिरूं ॥ म्हांरी ॥ ४ ॥

(४९)

बधाई चन्द्रपुरीमैं आज ॥ बधाई० ॥ टेक ॥ महासेन सुत चंद्रकुंवरजू, राज लह्यौ सुख साज ॥ बधाई० ॥ १ ॥ सनमुख नृत्यकारिनी नाचत, होत मृदंग आवाज। भैंट करत नृप देश देशके, पूरत सबके काज ॥ बधाई० ॥ २ ॥ सिंहासन पै सोहत ऐसो, ज्यौं शशि नखत समाज। नीति निपुन परजाको पालक, बुधजनको सिरताज ॥३॥

(५०) राग—लूहरि सारंग।

अरज करूं (तसलीम करूं) ठाड़ो विनऊं चरननको चेरो ॥ अरज० ॥ टेक ॥ दीनानाथ दयाल गुसाईं, मोपर करुना करिकै हेरो ॥अरज० ॥१॥ भव वनमैं निरबल मोहि लखिकैं, दुष्टकर्म सब मिलिकै घेरो। नाना रूप बनाकै मेरो, गति चारोंमैं दयो है फेरो ॥अरज०॥२॥ दुखी अनादि कालको भटकत, सरनो आय गह्यौ मैं तेरो। कृपा करौ तौ अब बुधजन पै, हेरो बेगि संसार बसेरो॥ अरज० ॥ ३ ॥

(५१.) तथा

निजपुरमें आज मचो होरी ॥ निज०॥टेक॥ उमँगि चिदानँदजी इत आये, इत आई सुमती गोरी ॥ निज० ॥१॥ लोकलाज कुलकानि गमाई, ज्ञान गुलाल भरी भोरी ॥ निज० ॥ २ ॥ समकित केसर रंग बनायो, चारितकी पिचुकी छोरी ॥ निज० ॥ ३ ॥ गावत अजपा गान मनोहर, अनहद् भरसौं वरस्यो री ॥ निज० ॥४॥ देखन आये बुधजन भीगे, निरख्यौ ख्याल अनोखो री ॥ निज० ॥ ५ ॥

(५२) राग लूहरी सारंग जल्द तेतालो।

मौकौं तारो जी तारो जी किरपा करिके ॥ मोकौं० ॥टेक॥ अनादि कालको दुखी रहत हूं, टेरत हूं जमतैं डरिकै ॥ मोकौं० ॥ १ ॥ भ्रमत फिरत चारौं गति भीतर, भवमाहीं मरि मरि करिकै। डूबत अगम अथाह जलधिमें, राखो हाथि पकरि करिकै ॥मोकौं० ॥ २ ॥ मोह भरम विपरीत वसत उर, आप न जानों निज करिकै।

तुम सब ज्ञायक मोहि उबारो, बुधजनको अपनो करिकै ॥ मोकौं० ॥ ३ ॥

(५३) राग सारंग।

हम शरन गह्यौ जिन चरनको ॥हम०॥टेक॥ अब औरनकी मान न मेरे, डर हु रह्यो नहिं मरनको ॥ हम० ॥ १ ॥ भरम विनाशन तत्त्व-प्रकाशन, भवदधि तारन तरनको। सुरपति नर-पति ध्यान धरत वर, करि निश्चय दुख हरनको ॥ हम० ॥ २ ॥ या प्रसाद ज्ञायक निज मान्यौ, जान्यौ तन जड़ परनको। निश्चय सिधसो पैं कषायतैं, पात्र भयो दुख भरनको ॥ हम० ॥३॥ प्रभु बिन और नहीं या जगमैं, मेरे हितके करन को। बुधजनकी अरदास यही है, हर संकट भव फिरनको ॥ हम० ॥ ४ ॥

(५४)

मैं तेरा चेरा, अरज सुनो प्रभु मेरा ॥ मैं०॥ टेक ॥ अष्टकर्म मोहि घेरि रहे हैं, दुख दे हैं बहु-तेरा ॥ मैं० ॥ १ ॥ दीनदयाल दीन मो लखिकै,

मैंटो गति गति फेरा ॥ मैं० ॥ २ ॥ और जंजाल टाल सब मेरा, राखौ चरनन चेरा ॥ मैं० ॥ ३॥ बुधजन ओर निहारी कृपा करि, विनवै वारूं वेरा ॥ मैं० ॥ ४ ॥

(५५) राग—अहिंग।

तैं क्या किया नादान, तैंतो अमृत तजि विष लीना ॥ तैं० ॥ टेक ॥ लख चौरासी जौनि माहिंतैं, श्रावक कुलमैं आया। अब तजि तीन लोकके साहिब, नवग्रह पूजन धाया ॥ तैं० ॥१॥ वीतरागके दरसनहींतैं, उदासीनता आवै। तू तौ जिनके सनमुख ठाड़ा, सुतको ख्याल खिलावै ॥ तैं० ॥ २ ॥ सुरग सम्पदा सहजैं पावै, निश्चय मुक्ति मिलावै। ऐसी जिनवर पूजनसेती, जगत कामना चावै ॥ तैं० ॥ ३ ॥ बुधजन मिलैं सलाह कहैं तब, तू वापै खिजि जावै। जथाजोगकौं अजथा मानै, जनम जनम दुख पावै ॥ तैं० ॥४॥

(५६) राग—खंमाच।

सुनियो हो प्रभु आदि-जिनंदा, दुख पावत

है बंदा ॥ सुनियो० ॥ टेक ॥ खोसि ज्ञान धन कीनौं ज़िन्दा (?), डारि ठगौरी धंदा ॥ सुनियो० ॥ १ ॥ कर्म दुष्ट मेरे पीछैं लाग्यौ, तुम हो कर्म-निकंदा ॥ सुनियो० ॥ २ ॥ बुधजन अरज करत है साहिब, काटि कर्मके फन्दा ॥ सुनियो० २ ॥

(५७) राग—खंमाच ।

छबि जिनराई राजै छै ॥ छबि० ॥टेक ॥ तरु अशोकतर सिंहासनपै, वैठे धुनि घन गाजै छे ॥ छवि० ॥ १ ॥ चमर छत्र भामंडलदुतिपै, कोटि भानदुति लाजै छै। पुष्पवृष्टि सुर नभतैं दुन्दुभि, मधुर मधुर सुर बाजै छै ॥ छबि० ॥ २ ॥ सुर नर मुनि मिलि पूजन आवैं, निरखत सन्ड़ो छाजै छै। तीनकाल उपदेश होत है, भवि बुधजन हित काजै छै ॥ छबि० ॥ ३ ॥

(५८) राग—खंमाच ।

ऐसा ध्यान लगावो भव्य जासौं, सुरग मुकति फल पावो जी ॥ ऐसा० ॥ टेक ॥ जामैं बंध परै नाहिं आगैं, पिछले बंध हटावो जी ॥ ऐसा०

॥ १ ॥ इष्ट अनिष्ट कल्पना छांड़ो, सुख दुख एक हि भावो जी। पर वस्तुनिसों ममत निवारो निज आतम लौ ल्यावो जी ॥ ऐसा० ॥ २ ॥ मलिन देहकी संगति छूटै, जामन मरन मिटावो जी। शुद्ध चिदानंद बुधजन ह्वै कै, शिवपुरवास बसावो जी ॥ ऐसा० ॥ ३ ॥

(५६) राग—खंमाच।

मेरा साँई तौ मोमैं नाहीं न्यारा, जानैं सो जाननहारा ॥ मेरा० ॥ टेक ॥ पहले खेद सह्यौ विन जानैं, अब सुख अपरंपारा ॥ मेरा० ॥ १ ॥ अनंत-चतुष्टय-धारक ज्ञायक, गुन परजै द्रव सारा जैसा राजत गंधकुटीमैं, तैसा मुझमैं म्हारा ॥ मेरा० ॥ २ ॥ हित अनहित मम पर विकलपतैं, करम बंध भये भारा। ताहि उदय गति गति सुख दुखमैं, भाव किये दुखकारा ॥ मेरा० ॥३॥ काल लबधि जिनआगम सेती, संशयभरम विदारा। बुधजन जान करावन करता, हौं ही एक हमारा ॥ मेरा० ॥ ४ ॥

(६०) राग—गारो जल्द वेतालो ।

म्हारी भी सुणि लीज्यो, हो मोकौं तारणा, सुफल भये लखि मोरे नैन ॥ म्हांरी० ॥ टेक ॥ तुम अनंत गुन ज्ञान भरे हो, वरनन करतैं देव थकत हैं, कहि न सकै मुझ वैन ॥ म्हाँरी० ॥१॥ हमतो अनत दिन अनत भरम रहे, तुमसा कोऊ नाहिं देखिये, आनंदघन चित चैन ॥ म्हांरी० ॥ २ ॥ बुधजन चरन शरन तुम लीनी, वांछा मेरी पूरन कीजे, संग न रहै दुखदैन म्हां० ॥ ३ ॥

(६१) राग—गारो कान्हरो ।

थांका गुण गास्यां जी आदिजिनंदा ॥ थांकां० ॥ टेक ॥ थांका वचन सुण्याँ प्रभु मूँनैं, म्हारा निज गुण भास्यां जी ॥ आदि० ॥ १ ॥ म्हांका सुमन कमलमैं निशिदिन, थांका चरन वसास्यां जी ॥ आदि० ॥ २ ॥ याही मूनैं लगन लगी छै, सुख वो दुःख नसास्यां जी ॥ आदि० ॥ ३ ॥ बुधजन हरष हिये अधिकाई, शिवपुरवासा पास्यां जी ॥ आदि० ॥ ४ ॥

(६२) राग—कान्हरो।

हो मना जी, थारी वानि, बुरी छै दुखदाई हो० ॥ टेक ॥ निज कारिजमें नेकु न लागत, परसौं प्रीति लगाई हो० ॥ १ ॥ या सुभावसौं अति दुख पायो, सो अब त्यागो भाई ॥ हो० २ बुधजन औसर भागन पायो, सेवो श्रीजिनराई हो० ॥ ३ ॥

(६३) राग—गारो कान्हरो।

हो प्रभुजी, म्हारो छै नादानी मनड़ो ॥हो० टेक ॥ हूं ल्यावत तुम पद सेवनकौं, यौ नहिं आवत है-बगड़ो जी ॥ हो० ॥ १ ॥ याकौ सुभाव सुधारि दयानिधि, माचि रह्यौ मोटो झगड़ो जी ॥ हो० ॥ २ ॥ बुधजनकी विनती सुन लीजे, कहजे शिवपुरको डगड़ो जी ॥ हो० ॥ ३ ॥

(६४)

रे मन मेरा, तू मेरो कह्यौ मान मान रे ॥ रे मन० ॥ टेक ॥ अनत चतुष्टय धारक तूही, दुख पावत बहुतेरा ॥ रे मन० ॥ १ ॥ भोग विषयका आतुर ह्वै कै, क्यौं होता है चेरा ॥ रे मन०

॥ २ ॥ तेरे कारन गति गतिमाहीं, जनम लिया है घनेरा ॥ रे मन० ॥ ३ ॥ अब जिनचरन शरन गहि बुधजन, मिटि जावैं भव फेरा ॥ रे मन० ॥

(६५) राग—कनड़ी ।

भला होगा तेरा यौं ही, जिनगुन पल न भुलाय हो ॥ भला० ॥ टेक ॥ दुख मैटन सुखदैन सदा ही, नमिकै मन वच काय हो ॥ भला० ॥ १ ॥ शक्री चक्री इन्द्र फनिंद्र सु, बरनन करत थकाय हो। केवलज्ञानी त्रिभुवनस्वामी, ताकौं निशिदिन ध्याय हो ॥ भला० ॥२॥ आवागमन-सुरहित निरंजन, परमातम जिनराय हो। बुधजन विधितैं पूजि चरन जिन, भव भवमैं सुखदाय हो ॥ भला० ॥ ३ ॥

(६६) राग—कनड़ी ।

उत्तम नरभव पायकै, मति भूलै रे रामा ॥ मति भू० ॥ टेक ॥ कीट पशूका तन जब पाया, तब तू रह्या निकामा। अब नरदेही पाय सयाने क्यौं न भजै प्रभुनामा ॥ मति भू० ॥ १ ॥ सुर-

पति याकी चाह करत उर, कब पाऊँ नरजामा। ऐसा रतन पायकैं भाई, क्यौं खोवत विन कामा मति भू० ॥ २ ॥ धन जोबन तन सुन्दर पाया, मगन भया लखि भामा। काल अचानक झटक खायगा, परे रहैंगे ठामा ॥ मति० ॥ ३ ॥ अपने स्वामीके पदपंकज, करो हिये विसरामा। मैंटि कपट भ्रम अपना बुधजन, ज्यौं पावौ शिवधामा मति भू० ॥ ४ ॥

(६७)

धनि चन्द्रप्रभदेव, ऐसी सुबुधि उपाई ॥ धनि० ॥ टेक ॥ जगमें कठिन विराग दशा है, सो दरपन लखि तुरत उपाई ॥ धनि० ॥ १ ॥ लौकान्तिक आये ततखिन ही, चढ़ि सिविका वनओर चलाई। भये नगन सब परिग्रह तजिकै, नग चम्पातर लौंच लगाई ॥ धनि० ॥ २ ॥ महासेन धनि धनि लच्छमना, जिनकैं तुमसे सुत भये साईं। बुधजन बन्दत पाप निकन्दत, ऐसी सुबुधि करो मुझमाई ॥ धनि० ॥ ३ ॥

(६८)

चुप रे मूढ़ अजान, हमसौं क्या बतलावै ॥ चुप० ॥ टेक ॥ ऐसा कारज कीया तैंनैं, जासौं तेरो हान ॥ चु० ॥१॥ राम विना है मानुष जेते भ्रात तात सम मान । कर्कश वचन बकै मति भाई, फूटत मेरे कान ॥ चुप० ॥ २ ॥ पूरव दुकृत कियाथा मैंने, उदय भया ते आन । नाथबिछोहा हूवा यातैं, पै मिलसी या थान ॥ चुप० ॥ ३ ॥ मेरे उरमैं धीरज ऐसा, पति आवै या ठान । तब ही निग्रह ह्वै है तेरा, होनहार उर मान ॥ चुप० ॥ ४ ॥ कहां अजोध्या कहं या लंका, कहां सीता कहँ आन । बुधजन देखो विधि का कारज, आगममाहिं बखान ॥ चुप० ॥ ५ ॥

(६९) राग—कनड़ो एकतालो ।

त्रिभुवननाथ हमारो, हो जी ये तो जगत उजियारो ॥ त्रिभुवन० ॥ टेक ॥ परमौदारिक देहके माहीं, परमातम हितकारो ॥ त्रिभुवन० ॥ १ ॥ सहजैं ही जगमाहिं रह्यौ छै, दुष्ट मिथ्यात

अँधारौ। ताकौं हरन करन समकित रवि, केवलज्ञान निहारौ ॥ त्रिभुवन० ॥ २ ॥ त्रिविध शुद्ध भवि इनकौं पूजौ, नाना भक्ति उचारौ। कर्म काटि बुधजन शिव लै हां, तजि संसार दुखारौ त्रिभु० ॥ ३ ॥

(७०) राग—दीपचन्दी।

मेरी अरज कहानी, सुनि केवलज्ञानी ॥ मेरी० ॥ टेक ॥ चेतनके संग जड़ पुद्गल मिलि, सारी बुधि बौरानी ॥ मेरी० ॥१॥ भव वनमाहीं फेरत मोकौं, लख चौरासी थानी। कोलौं वरनौं तुम सब जानो, जनम मरन दुखखानी ॥ मेरी० ॥ २ ॥ भाग भलेतैं मिले बुधजनको, तुम जिनवर सुखदानी। मोह फांसिको काटि प्रभूजी, कीजे केवलज्ञानी ॥ मेरी० ॥ ३ ॥

(७१)

तेरी बुद्धिकहानी, सुनि मूढ़ अज्ञानी ॥ तेरी० ॥ टेक ॥ तनक विषय सुख लालच लाग्यौ, नंतकाल दुखखानी ॥ तेरी० ॥१॥ जड़ चेतन मिलि

बंध भये इक, ज्यौं पयमाहीं पानी । जुदा जुदा सरूप नहिं मानै, मिथ्या एकता मानी ॥ तेरी० ॥ २ ॥ हूं तौ बुधजन दृष्टा ज्ञाता, तन जड़ सरधा आनी । ते ही अविचल सुखी रहैंगे, होय मुक्ति वर प्रानी ॥ तेरी० ॥ ३ ॥

(७२) राग—ईमन ।

तू मेरा कह्या मान रे निपट अयाना ॥ तू० ॥ टेक ॥ भव वन वाट मात सुत दारा, वंधु पथिकजन जान रे । इनतैं प्रीति न ला विछुरैंगे, पावैगो दुख-खान रे ॥ तू० ॥१॥ इकसे तन आतम मति आनैं, यो जड़ है तू ज्ञान रे । मोह उदय वश भरम परत है, गुरु सिखवत सरधान रे ॥ तू० ॥ २ ॥ बादल रंग सम्पदा जगकी, छिनमैं जात विलान रे । तमाशबीन बनि यातैं बुधजन, सबतैं ममता हान रे ॥ तू० ॥ ३ ॥

(७३) राग—ईमन तेतालो ।

हो विधिनाकी मोपै कही तौ न जाय ॥ हो० ॥ टेक ॥ सुलट उलट उलटी सुलटा दे, अदरस

पुनि दरसाय ॥ हो० ॥ १ ॥ उर्वशि नृत्य करत ही सनमुख, अमर परत है पाँय (?) । ताही छिनमैं फूल वनायौ, धूप परैं कुम्हलाय(?) ॥हो० ॥ २ ॥ नागा पाँय फिरत घर घर जब, सो कर दीनौं राय । ताहीको नरकनमैं कूकर,तोरि तोरि तन खाय ॥ हो० ॥ ३ ॥ करम उदय भूलै मति आपा, पुरपारथको त्याय । बुधजन ध्यान धरै जब मुहुरत, तब सब ही नसि जाय ॥ हो० ॥४॥

(७४)

जिनवानीके सुनैसौं मिथ्यात मिटै । मिथ्यात मिटै समकित प्रगटै ॥ जिनवानी० ॥टेक॥ जैसैं प्रात होत रवि ऊगत, रैन तिमिर सब तुरत फटै ॥जिनवानी०॥१॥ अनादि कालकी भूलि मिटावै, अपनी निधि घट घटमैं उघटै । त्याग विभाव सुभाव सुधारै, अनुभव करतां करम कटै ॥ जिन-वानी० ॥ २ ॥ और काम तजि सेवो वाकौं, या विन नाहिं अज्ञान घटै । बुधजन वाभव परभव मांहीं, बाकी हुंडी तुरत पटै ॥ जिनवानी० ॥३॥

(७५) राग—सोरठ ।

कर लै हो जीव,सुकृतका सौदा कर लै परमारथ कारज कर लै हो ॥ करि० ॥टेक॥ उत्तम कुलकौं पायकैं, जिनमत रतन लहाय । भोग भोगवे कारनैं,क्यौं शठ देत गमाय ॥सौदा०॥१॥ व्यापारी वनि आइयौ, नरभव हाट बजार । फल दायक व्यापार करि नातर विपति तयार ॥सोदा० ॥ २ ॥ भव अनन्त धरतौ फिस्यौ चौरासी वनमाहिं । अब नरदेही पायकैं अघ खोवै क्यौं नाहिं ॥ सौदा० ॥ ३ ॥ जिन मुनि आगम परखकै, पूजौ करि सरधान । कुगुरु केदेवके मानवैं,फिस्यौ चतुर्गति थान ॥ सौदा० ॥ ४ ॥ मोह नींदमां सोवतां, डूबौ काल अटूट । बुधजन क्यौं जागौ नहीं, कर्म करत है लूट ॥ सौदा० ॥ ५ ॥

(७६) राग—सोरठ ।

वेगि सुधि लीज्यौ म्हारी,श्रीजिनराज ॥वेगि० ॥टेक॥ डरपावत नित आयु रहत है, संग लग्या जमराज ॥ वेगि० ॥ १ ॥ जाके सुरनर नारक

तिरजग, सब भोजनके साज। ऐसौ काल हस्यौ तुम साहब, यातैं मेरी लाज ॥ वेगि० ॥ २ ॥ पर घर डोलत उदर भरनकौं, होत प्राततैं सांज। डूवत आश अथाह जलधिमैं, द्यो सम भाव जिहाज ॥ वेगि० ॥ ३ ॥ घना दिनाको दुखी दयानिधि, औसर पायौ आज। बुधजन सेवक ठाड़ौ विनवै, कीज्यौ मेरो काज ॥ वेगि० ॥ ४ ॥

(७७) राग—सोरठ।

गुरुने पिलायाजो, ज्ञान पियाला ॥ गुरु० ॥ टेक ॥ भइ वेखवरी परभावांकी, निजरसमैं मतवाला ॥ गुरु० ॥ १ ॥ यों तो छाक जात नहिं छिनहूं, मिटि गये आन जंजाला। अदभुत आनँद मगन ध्यानमैं, बुधजन हाल सह्माला ॥गुरु०

(७८) राग—सोरठ।

मति भोगन राचौ जी, भव भवमैं दुख देत घना ॥ मति० ॥ टेक ॥ इनके कारन गति गति मांहीं, नाहक नाचौ जी। झूठे सुखके काज धरममैं पाड़ौ खांचौ जी ॥ मति० ॥ १ ॥ पूरवकर्म

उदय सुख आयां, राजौ माचौ जी । पाप उदय पीड़ा भोगनमैं, क्यौं मन काचौ जी ॥ मति० ॥ २॥ सुख अनन्तके धारक तुम ही, पर क्यौं जांचौ जी । बुधजन गुरुका वचन हियामैं, जानौ सांचौ जी ॥ मति० ॥ ३ ॥

(७९)

थांका गुन गास्यांजी जिनजी राज, थांका दरसनतैं अघ नास्या ॥ थांका० ॥ टेक ॥ थां सारीखा तीन लोकमैं, और न दूजा भास्या जी ॥जिनजी०॥१॥ अनुभव रसतैं सींचि सींचिकै, भव आताप बुझास्यां जी । बुधजनको विकलप सब भाग्यौ, अनुक्रमतैं शिव पास्यां जी ॥ जिनजी० ॥ २ ॥

(८०)

सम्यग्ज्ञान विना, तेरो जनम अकारथ जाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥टेक॥ अपने सुखमैं मगन रहत नहिं परकी लेत वलाय। सीख सुगुरुकी एक नं मानै, भव भवमैं दुख पाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥१॥

ज्यौं कपि आप काठ लीलाकरि, प्रान तजै बिल-
लाय। ज्यौं निज मुखकरि जाल मकरिया, आप
मरै उलझाय ॥ सम्यग्ज्ञान०॥२॥ कठिन कमायो
सब धन ज्वारी, छिनमैं देत गमाय। जैसे रतन
पायके भोंदू, विलखे आप गमाय ॥ सम्यग्ज्ञान०
॥ ३ ॥ देव शास्त्र गुरुको निहचैकरि, मिथ्यामत
मति ध्याय। सुरपति बांछा राखत याकी, ऐसी नर
परजाय; ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ ४ ॥

(८१) राग—झंझोटी।

शिवधानी निशाशानी जिनवानि हो ॥शिव०
॥ टेक ॥ भववन भ्रमन निवारन-कारन, आपा-पर
पहचानि हो ॥ शिव० ॥ १ ॥ कुमति पिशाच
मिटावन लायक, स्याद् मंत्र मुख आनि हो ॥
शिव०॥ २ ॥ बुधजन मनवचतनकरि निशिदिन
सेवो सुखको खानि हो ॥ शिव० ॥ ३ ॥

(८२)

देखो नया, आज उछाव भया ॥ देखो० ॥
टेक ॥ चंदपुरीमैं महासेन घर चंदकुमार जया।

॥ देखो० ॥ १ ॥ मातलखमना सुतको गजपै, लै हरि गिरिपै गया ॥ देखो० ॥२॥ आठ सहस कलसा सिर ढारे, बाजे बजत नया ॥देखो०॥३॥ सौंपि दियो पुनि मात गोदमैं, तांडव नृत्य थया ॥ देखो० ॥ ४ ॥ सो बानिक लखि बुधजन हरषै जै जै पुरमें किया ॥ देखो० ॥ ४ ॥

(८३)

मैं देखा अनोखा ज्ञानी वे ॥ मैं० ॥ टेक ॥ तारैं लागि आनकीं भाई, अपनी सुध विसरानी वे ॥ मैं० ॥ १ ॥ जा कारनतैं कुगति मिलत है, सोही निजकर आनी वे ॥ मैं० ॥२॥ झूठे सुखके काज सयानें, क्यौं पीड़ै है प्रानी वे ॥ मैं० ॥३॥ दया दान पूजन व्रत तप कर, बुधजन सीख बखानी वे ॥ मैं० ॥ ४ ॥

(८४) राग—जंगलो ।

मेरो मनुवा अति हरषाय, तोरे दरसनसौं ॥ मेरो० ॥ टेक ॥ शांत छवी लखि शांत भाव ह्वै, आकुलता मिट जाय, तोरे दरसनसौं ॥ मेरो० १

जब लौं चरन निकट नहिं आया, तब आकुलता थाय। अब आवत ही निज निधि पाया, निति नव मंगल पाय, तोरे दरसनसों ॥ मेरो० ॥ २ ॥ बुधजन अरज करै कर जोरै, सुनिये श्रीजिनराय जब लौं मोख होय नहिं तब लौं, भक्ति करूं गुन गाय, तोरे दरसनसौं ॥ मेरो० ॥ ३ ॥

(८५)

मोहि अपना कर जान, ऋषभजिन! तेरा हो ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ इस भवसागरमाहिं फिरत हूं, करम रह्या करि घेरा हो ॥ मोहि० ॥ १ ॥ तुमसा साहिब और न मिलिया, सह्या भौत भटभेरा हो ॥ मोहि० ॥ २ ॥ बुधजन अरज करै निशि वासर, राखौ चरनन चेरा हो ॥ मोहि० ३

(८६)

ज्ञान बिन थान न पावोगे, गति गति फिरौगे अजान ॥ ज्ञान० ॥ टेक ॥ गुरुउपदेश लह्यौ नहिं उरमैं, गह्यौ नहीं सरधान ॥ ज्ञान० ॥ १ ॥ विषयभोगमैं राचि रहे करि आरति रौद्र कुध्यान

आन-आन लखि आन भये तुम, परनति करि लई आन ॥ ज्ञान० ॥ २ ॥ निपट कठिन मानुष भव पायौ, और मिले गुनवान। अव बुधजन जिनमतको धारो, करि आपा पहिचान ॥ ज्ञा० ३

(८७) राग—केदारो एकतालो।

अहो मेरी तुमसौं वीनती, सब देवनिके देव अहो० ॥ टेक ॥ये दूषनजुत तुम निरदूषन, जगत हितू स्वयमेव ॥ अहो० ॥ १ ॥ गति अनेकमैं अति दुख पायौ, लीनैं जन्म अछेव। हो संकट हर दे बुधजनकौं, भव भव तुम पद सेव ॥ अहो० ॥ २ ॥

(८८) राग—केदारो।

याही मानौं निश्चय मानौं, तुम विन और न मानौं ॥याही०॥ टेक ॥ अवलौं गति गतिमैं दुख पायौ, नाहिं लायौं सरधानौं ॥ याही० १ ॥ दुष्ट सतावत कर्म निरंतर करो कृपा इन्है भानौं। भक्ति तिहारी भव भव पाऊं, जौलौं लहौं शिवथानौं ॥ याही० ॥ २ ॥

(८६) राग—सोरठ।

भोगांरा लोभीड़ा, नरभव खोयौ रे अजान भोगांरा० ॥ टेक ॥ धर्मकाजकौ कारन थौ यौ, सो भूलयौ तू बान। हिंसा अनृत परतिय चोरी, सेवत निजकरि जान ॥ भोगांरा० ॥ १ ॥ इन्द्री-सुखमैं मगन हुवौ तू, परकौं आतम मान। बंध नवीन पड़ै छै यातैं, होवत मोटी हान ॥ भो-गांरा० ॥२॥ गयौ न कछु जो चेतौ बुधजन, पावौ अविचल थान। तन है जड़ तू दृष्टा ज्ञाता, कर लै यौं सरधान ॥ भोगांरा० ॥ ३ ॥

(६०)

म्हांरी कौन सुनै, थे तौ सुनिल्यो श्रीजिन-राज ॥ म्हारी० ॥ टेक ॥ और सरब मतलबके गाहक, म्हांरौ सरत न काज। मोसे दीन अनाथ रंकको, तुमतैं बनत इलाज ॥ ॥ म्हांरी० ॥ १ ॥ निज पर नेकु दिखावत नाहीं, मिथ्या तिमिर स-माज। चंद्रप्रभू परकाश करौ उर, पाऊं धाम निजाज ॥ म्हांरी० ॥ २ ॥ थकित भयौ हूं गति

गति फिरतां, दर्शन पायौ आज। बारंबार वीन-
वै बुधजन, सरन गहेकी लाज ॥ म्हांरी० ॥ ३ ॥

(६१) राग—सोरठ।

छिन न बिसारां चितसौं, अजी हो प्रभुजी
थांनैं ॥ छिन० टेक ॥ वीतरागछवि निरखत नय-
ना, हरष भयौ सो उर ही जानै ॥ छिन० ॥ १ ॥
तुम मत खारक दाख चाखिकै, आन निंमोरी
क्यौं मुख आनै। अब तौ सरनैं राखि रावरी,
कर्म दुष्ट दुख दे छै म्हांनै ॥ छिन० ॥ २ ॥ व-
म्यौ मिथ्यामत अम्रत चाख्यौ, तुम भाख्यौ,
धाख्यौ मुझ कानै। निशि दिन थांकौ दर्श मिलौ
मुझ, बुधजन ऐसी अरज बखानै ॥ छिन० ३ ॥

(६२)

बन्यौ म्हांरै या घरीमैं रंग ॥ बन्यौ० टेक ॥
तत्वारथकी चरचा पाई, साधरमीकौ संग ॥ बन्यौ०
॥ १ ॥ श्रीजिनचरन वसे उर माहीं, हरष भयौ
सब अंग। ऐसी विधि भव भवमैं मिलिज्यौ,
धर्मप्रसाद अभंग ॥ बन्यौ० ॥ २ ॥

(६३) राग—सोरठ ।

कींपर करौ जी गुमान, थे तो कै दिनका मिजमान ॥ कींपर० ॥ टेक ॥ आये कहांतैं कहां जावोगे, ये उर राखौ ज्ञान ॥ कींपर० ॥१॥ नारायण बलभद्र चक्रवति, नना रिद्धिनिधान । अपनी बारी भुगतिर, पहुंचे परभव थान ॥ कींपर० ॥ २ ॥ झूठ बोलि मायाचारीतैं, मति पीड़ौ परप्रान । तन धन दे अपने वश बुधजन, करि उपगार जहान ॥ कींपर० ॥ ३ ॥

(६४) राग—सोरठ, एकतालो ।

चंदाप्रभु देव देख्या दुख भाग्यौ ॥ चंदा० टेक ॥ धन्य दहाड़ो मन्दिर आयौ, भाग अपूरव जाग्यौ ॥ चंदा० ॥ १ ॥ रह्यौ भरम तब गति गति डोल्यो, जनम-मरन दौं दाग्यौ । तुमको देखि अपनपो देख्यौ, सुख समतारस पाग्यौ ॥ चन्दा० ॥ २ ॥ अब निरभय पद बेग हि पास्यों, हरष हिये यौं लाग्यौ । चरनन सेवा करै निरंतर, बुधजन गुन अनुराग्यौ ॥ चंदा० ॥ ३ ॥

(६५) राग—सोरठ ।

ज्ञानी थारी रीतिरौ अचंभौ मोनैं आवै छै ज्ञानी० ॥ टेक ॥ भूलि सकति निज परवश ह्वै क्यौं, जनम जनम दुख पावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ क्रोध लोभ मद माया करि करि, आपौ आप फँसावै छै । फल भोगनकी बेर होय तब, भोगत क्यौं पिछतावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पाप काज करि धनकौं चाहै, धर्म विषैमें बतावै छै । बुधजन नीति अनीति बनाई, साँचौ सो बतरावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥

(६६)

अब घर आये चेतनराय, सजनी खेलौंगी मैं होरी ॥ अब० ॥ टेक ॥ आरस सोच कानि कुल हरिकै, धरि धीरज बरजोरी ॥ सजनी० १॥ बुरी कुमतिकी बात न बूझै, चितवत है मोओरी वा गुरुजनको बलि बलि जाऊं, दूरि करी मति भोरी ॥ सजनी० ॥ २ ॥ निज सुभाव जल हौज भराऊं, घोरूं निजरंग रोरी । निज ल्यौं ल्याय

शुद्ध पिचकारी, छिरकन निज मति दोरी ॥ सजनी० ॥ ३ ॥ गाय रिझाय आप वश करिकै, जावन द्यौं नहि पोरी । बुधजन रचि मचि रहूं निरंतर, शक्ति अपूरब मोरी ॥ सजनी० ॥ ४ ॥

(६७) राग—सोरठ ।

हमकौं कछू भय ना रे, जान लियौ संसार ॥ हमकौं० ॥ टेक ॥ जो निगोदमैं सो ही मुझमैं, सो ही मोखमँझार । निश्चय भेद कछू भी नाहीं भेद गिनै संसार ॥ हमकौं० ॥१॥ परवश ह्वै आपा विसारिकै, राग दोषकौं धार । जीवत मरत अनादि कालतें, यौं ही है उरझार ॥ हमकौं० ॥ २ ॥ जाकरि जैसैं जाहि समयमैं, जो होतब जा द्वार । सो बनि है टरि है कछु नाहीं, करि लीनौं निरधार ॥ हमकौं० ॥ ३ ॥ अगनि जरावै पानी बोवै, बिछुरत मिलत अपार । सो पुद्गल रूपी मैं बुधजन, सबकौ जाननहार ॥ हमकौं० ॥ ४ ॥

(६८) राग—सोरठ ।

आज तौ बधाई हो नाभिद्वार ॥ आज० ॥

टेक ॥ मरुदेवी माताके उरमैं, जनमैं ऋषभकु-
मार ॥ आज० ॥ १ ॥ सची इन्द्र सुर सब मिलि
आये, नाचत हैं सुखकार। हरषि हरषि पुरके नर
नारी, गावत मंगलचार ॥ आज० ॥ २ ॥ ऐसौ
बालक हूवो ताकै, गुनकौ नाहीं पार। तन मन
वचतैं बंदत बुधजन, है भव-तारनहार ॥ आज०

(६६)

सुणिल्यो जीव सुजान, सीख सुगुरु हितकी
कही ॥ सुणि० ॥टेक॥ रुल्यौ अनन्ती बार, गति
गति साता ना लही ॥ सुणि० ॥१॥ कोइक पुन्य
संजोग, श्रावक कुल नरगति लही। मिले देव
निरदोष, वाणी भी जिनकी कही ॥ सुणि० ॥२
चरचाको परसंग, अरु सरध्यामैं बैठिवो। ऐसा
अवसर फेरि,कोटि जनम नहिं भैंटिवो ॥सुणि०॥३॥
झूठी आशा छोड़ि तत्त्वारथ रुचि धारिल्यो। या
मैं कछू न बिगार आपो आप सुधारिल्यो ॥ सु-
णि० ॥ ४ ॥ तनको आतम मानि, भोग विषय
कारज करौ। यौं ही करत अकाज, भव भव क्यौं

कूवे परो ॥ सुणि० ॥ ५ ॥ कोटि ग्रंथकौ सार, जो भाई बुधजन करौ। राग दोष परिहार, याही भवसौं उद्धरौ ॥ सुणि० ॥ ६ ॥

(१००) राग—सोरठ।

अब थे क्यौं दुख पावौ रे जियरा, जिनमत समकित धारौ ॥ अब० ॥ टेक ॥ निलज नारि सुत व्यसनी मूरख, किंकर करत बिगारौ। सा-सूम अदेखक भैया, कैसैं करत गुजारौ ॥ अब० ॥ १ ॥ वाय पित्त कफ खांसी तन दृग, दीसत नाहिं उजारौ। करजदार अरु बे रुजगारी, कोऊ नाहिं सहारौ ॥ अब० ॥ २ ॥ इत्यादिक दुख स-हज जानियौ, सुनियौ अब विस्तारौ। लख चौ-रासी अनत भवनलौं, जनम मरन दुख भारौ ॥ अब० ॥ ३ ॥ दोषरहित जिनवरपद पूजौ, गुरु निरग्रंथ विचारौ। बुधजन धर्म दया उर धारौ, व्है है जै जैकारौ ॥ अब० ॥ ४ ॥

(१०१) राग—सोरठ।

म्हांरो मन लीनो छौ थे मोहि, आनंदघन

जी ॥ म्हारो० ॥ टेक ॥ ठौर ठौर सारे जग भ-
टक्यो, ऐसो मिल्यौ नहिं कोय। चंचल चित
मुझि अचल भयो है, निरखत चरनन तोय ॥
म्हांरौ० ॥ १ ॥ हरष भयो सो उर ही जानैं, व-
रनौं जात न सोय। अनतकालके कर्म नसैंगे,
सरधा आई जोय ॥ म्हांरौ० ॥ २ ॥ निरखत ही
मिथ्यात मिट्यौ सब, ज्यौं रवितैं दिन होय।
बुधजन उरमैं राजौ नित प्रति, चरनकमल तुम
दोय ॥ म्हांरौ० ॥ ३ ॥

(१०२) राग—विहाग ।

सीख तोहि भाषत हूं या, दुख मैंटन सुख
होय ॥ सीख० ॥ टेक ॥ त्यागि अन्याय कषाय
विषयकौं, भोगि न्याय ही सोय ॥ सीख० ॥ १
मंडैं धरमराज नहिं दंडै, सुजस कहै सब लोय।
यह भौ सुख परभौ सुख हो है, जन्म जन्म मल
धोय ॥ सीख० ॥ २ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म न पू-
जौ, प्रान हरौ किन कोय। जिनमत जिनगुरु
जिनवर सेवौ, तत्वारथ रुचि जोय ॥ सीख० ३ ॥

हिंसा अंनृत परतिय चोरी, क्रोध लोभ मद खोय दया दान पूजा संजम कर, बुधजन शिव ह्वै तोय ॥ सीख० ॥ ४ ॥

(१०३)

तेरौ गुण गावत हूं मैं, निजहित मोहि जताय दे ॥ तेरौ० ॥ टेक ॥ शिवपुरकी मोकौं सुधि नाहीं, भूलि अनादि मिटाय दे ॥ तेरौ० ॥१॥ भ्रमत फिरत हूं भव वनमाहीं, शिवपुर वाट बताय दे। मोह नींदवश घूमत हूं नित, ज्ञान बधाय जगाय दे ॥ तेरौ० ॥ २ ॥ कर्म शत्रु भव भव दुख दे हैं, इनतैं मोहि छुटाय दे। वुधजन तुम चरना सिर नावै, एती बात बनाय दे॥तेरौ०

(१०४) राग—विहाग।

मनुवा बावला हो गया ॥ मनुवा० ॥ टेक ॥ परवश वसतु जगतकी सारी, निज वश चाहै लाया ॥ मनुवा० ॥ १ ॥ जीरन चीर मिल्या है उदय वश, यौ मांगत क्यों नया ॥ मनुवा० ॥२ जो कण बोया प्रथम भूमिमैं, सो कब औरै भ-

या ॥ मनुवा० ॥ ३ ॥ करत अकाज आनकौ निज गिन, सुधपद त्याग दया ॥ मनुवा० ॥ ४ ॥ आप आप बोरत विषयो ह्वै, बुधजन ढीठ भया मनुवा० ॥ ५ ॥

(१०५)

भज जिन चतुर्विंशति नाम ॥ भजि० ॥ टेक ॥ जे भजे ते उतरि भवदधि, लयौ शिव सुखधाम ॥ भज० ॥ १ ॥ ऋषभ अजित संभव स्वामी, अभिनंदन अभिराम । सुमति पदम सुपास चंदा, पुष्पदंत प्रनाम ॥ भज० ॥ २ ॥ शीत श्रेयान् बासुपूजा, विमल नन्त सुठाम । धर्म शांति जु कुंथु अरहा, मल्लि राखैं माम ॥ भज० ॥३ मुनिसुव्रत नमि नेमिनाथा, पास सन्मति स्वाम । राखि निश्चयजपौ बुधजन, पुरै सबकी काम ॥ भज० ॥ ४ ॥

(१०६) राग—मालकोस ।

अब तू जान रे चेतन जान, तेरी होवत है नित हान ॥ अव० ॥ टेक ॥ रथ वाजि करी अ-

सवारी, नाना विधि भोग तयारी । सुंदर तिय सेज सँवारी, तन रोग भयौ या ख्वारी ॥ अब० ॥ १ ॥ ऊंचे गढ़ महल बनाये, बहु तोप सुभट रखवाये । जहां रुपया मुहर धराये; सब छांड़ि च-ले जम आये ॥अब०॥२॥ भूखा ह्वै खाने लागै; धाया पट भूषण पागै । सत भये सहस लखि मांगै, या तिसना नाहीं भागै ॥ अब० ॥ ३ ॥ ये अथिर सौंज परिवारौ, थिर चेतन क्यौं न सम्हारौ । बुधजन ममता सब टारौ, सब आपा आप सुधारौ ॥ अब० ॥ ४ ॥

(१०७) राग—कालिंगड़ो परज धीमो तेतालो ।

म्हे तौ थांका चरणां लागां, आन भावकी परणति त्यागां ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ और देव सेया दुख पाया, थे पाया छौ अब बड़भागां ॥म्हे०॥ २ एक अरज म्हांकी सुण जगपति, मोह नींदसौं अबकै जागां । निज सुभाव थिरता बुधि दीजे, और कछू म्हे नाहीं मांगा ॥ म्हे० ॥ २ ॥

---

(१०८) राग—कालिंगड़ो।

आज मनरी बनी छै जिनराज ॥ आज० ॥ टेक ॥ थांको ही सुमरन थांको ही पूजन, थांको तत्वविचार आज० ॥ १ ॥ थांके बिछूरैं अति दुख पायौ, मोपै कह्यौ न जाय। अब सनमुख तुम नयनौं निरखे, धन्य मनुष परजाय ॥ आज०॥२ आजहि पातक नास्यौ मेरौ, ऊतरस्यौं भव पार। यह प्रतीत बुधजन उर आई, लेस्यौं शिवसुख सार ॥ आज० ॥ ३ ॥

(१०९)

हां जी म्हे निशिदिन ध्यावां, ले ले बलहारियां ॥ होजी० ॥ टेक ॥ लोकालोक निहारक स्वामी, दीठे नैन हमारियां ॥ हो जी० ॥ १ ॥ षट चालीसौं गुनके धारक, दोष अठारह टालियां। बुधजन शरनैं आयौ थांके, थे शरणागत पालियां ॥ हो जी० ॥ २ ॥

(११०) राग—परज ।

म्हे तौ ऊभा राज थाँनैं अरज करां छां, मानौं महाराज ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ केवलज्ञानी त्रिभुवन-

नामी, अँतरजामी सिरताज ॥ म्हे० ॥ १ ॥ मोह शत्रु खोटौ संग लाग्यौ, बहुत करै छै अकाज। यातैं वेगि बचावौ म्हानैं, थांनैं म्हाकी लाज ॥ म्हे० ॥२॥ चोर चँडाल अनेक उबारे, गीध श्याल मृगराज । तौ बुधजन किंकरके हितमैं, ढील कहा जिनराज ॥ म्हे० ॥ ३ ॥

(१११) राग—कालिंगड़ो ।

कुमतीको कारज कूड़ौ, हो जी ॥ कुमती० ॥ टेक ॥ थांकी नारि सयानो सुमती, मतो कहै छै रूड़ौ जी ॥ कुमती० ॥ १ ॥ अनन्तानुबंधीकी जाई, क्रोध लोभ मद भाई । माया बहिन पिता मिथ्यामत, या कुल कुमती पाई जी ॥ कुमती० ॥ २ ॥ घरकौ ज्ञान धन वादि लुटावैं, राग दोष उपजावै । तब निर्बल लखि पकरि करम रिपु, गति गति नाच नचावै ॥ कुमती० ॥ ३ ॥ या परिकरसौं ममत निवारौ, बुधजन सीख सम्हारौ । धरमसुता सुमती सँग राचौ, मुक्ति महलमैं पधारौ ॥ कुमती० ॥ ४ ॥

(११२) राग—कालिंगड़ो ।

हूं कब देखूं वे मुनिराई हो ॥ हूं० ॥ टेक ॥ तिल तुष मान न परिग्रह जिनकैं, परमातम ल्यौं लाई हो ॥ हूं ॥१॥ निज स्वारथके सब ही बांधव, वे परमारथभाई हो । सब विधिलायक शिव मग दायक तारन तरन सदाई हो ॥ हूं० ॥२॥

(११३)

अजी हो जीवा जी थांनैं श्रीगुरु कहै छै, सीख मानौं जी ॥ अजी० ॥ टेक ॥ विन मतलबकी थे मति मानौं, मतलबकी उर आनौं जी ॥ अजी० ॥ १ ॥ राग दोषकी परिनति त्यागौ, निज सुभाव थिर ठानौं जी । अलख अभेद रु नित्य निरंजन, थे, बुधजन पहिचानौं जी ॥ अजी० ॥ २ ॥

(११४)

आयो जी प्रभु थांपै, करमांरौ पीड़्यौ आयो ॥ आयौ० ॥ टेक ॥ जे देखे तेई करमनि वश, तुम ही करम नसायौ ॥ आयौ० ॥ १ ॥ सहज स्वभाव नीर शीतलको, अगनि कषाय तपायो । सहे कुलाहल अनतकालमैं, नरक निगोद डुलायौ

॥ आयौ० ॥ २ ॥ तुम मुखचंद निहारत ही अब, सब आताप मिटायो। बुधजन हरष भयौ उर ऐसैं, रतन चिन्तामनि पायौ ॥ आयौ० ॥ ३ ॥

(११५) राग—परज।

महाराज, थांनैं सारी लाज हमारी, छत्रत्रय-धारी ॥ महाराज० ॥ टेक ॥ मैं तौ थारी अद्भुत रीती, नीहारी हितकारी ॥ महाराज० ॥१॥ निंदक तौ दुख पावै सहजैं, वंदक ले सुख भारी। असी अपूरव वीतरागता, तुम छबिमाहिं विचारी ॥ महाराज० ॥ २ ॥ राज त्यागिकै दीक्षा लीनी, परजनप्रीति निवारी। भये तीर्थंकर महिमाजुत अब, संग लिये रिधि सारी ॥ ३ ॥ मोह लोभ क्रोधादिक मारे, प्रगट दयाके धारी। बुधजन बिनवै चरन कमलकौं, दीजे भक्ति तिहारी ॥ महाराज० ॥ ४ ॥

(११६)

मुनि बन आये बना ॥ मुनि० ॥ टेक ॥ शिव वनरी व्याहनकौं उमगे, मोहित भविक जना ॥

मुनि० ॥ १ ॥ रतनत्रय सिर सेहरा बांधैं; सजि संवर बसना । संग बराती द्वादश भावन, अरु दशधर्मपना ॥ मुनि० ॥ २ ॥ सुमति नारि मिलि मंगल गावत, अजपा (?) गीत घना । राग दोष की अतिशबाजी, छूटत अगनि-कना ॥ मुनि० ॥ ३ ॥ दुविधि कर्मका दान बटत है, तोषित लोकमना । शुकल ध्यानकी अगनि जलाकरि, होमैं कर्मघना ॥ मुनि० ॥ ४ ॥ शुभ बेल्यां शिव बनरि बरी मुनि, अदभुत हरष बना । निज मंदिरमैं निश्चल राजत बुधजन त्याग घना ॥मुनि०॥५॥

(११७)

लखैंजी आज चंद जिनंद प्रभूकौं, मिथ्यातम मम भागौ ॥ लखैं० ॥टेक॥ अनादिकालकी तपति मिटी सब, सूतौ जियरौ जागौ ॥ लखैं० ॥१॥ निज संपति निजही में पाई, तब निज अनुभव लागौ । बुधजन हरषत आनंद बरषत, अमृत झरमैं पागौ ॥ लखैं० ॥ २ ॥

यही इक धर्ममूल है मीता ! निज समकित-सारसहीता । यही० ॥ टेक ॥ समकित सहित नरकपदवासा, खासा बुधजन गीता । तहँतें निकसि होय तीर्थंकर, सुरगन जजत सप्रीता ॥ १ ॥ स्वर्गवास हू नीको नाहीं, विन समकित अविनीतां । तहतें चय एकेंद्री उपजत, भ्रमत सदा भयभीता ॥ २ ॥ खेत बहुत जोते हु बीज विन, रहत धान्यसों रीता ॥ ३ ॥ सिद्धि न लहत कोटि तपहूतें, वृथा कलेश सहीता ॥ ३ ॥ समकित अतुल अखंड सुधारस, जिन पुरुषननें पीता । भागचन्द ते अजर अमर भये, तिनहीनें जग जीता ॥ यही इक धर्म० ॥ ४ ॥

(२) राग भैरव ।

सुन्दर जशलच्छन वृष, सेय सदा भाई ।

जासतैं ततच्छन जन, होय विश्वराई ॥ टेक ॥
क्रोधको निरोध शांत, सुधाको नितांत शोध,
मानको तजौ भजौ स्वभाव कोमलाई ॥ १ ॥
छल बल तजि सदा विमलभाव सरलताई भजि,
सर्व जीव चैन दैन, वैन कह सुहाई ॥ २ ॥
ज्ञान तीर्थ स्नान दान, ध्यान भान हृदय आन,
दया-चरन धारि करन-विषय सब बिहाई ॥ ३ ॥
आलस हरि द्वादश तप, धारि शुद्ध मानस करि,
खेहगेह देह जानि, तजौ नेहताई ॥ ४ ॥
अंतरंग वाह्य संग, त्यागि आत्मरंग पागि,
शीलमाल अति विशाल, पहिर शोभनाई ॥ ५ ॥
यह वृष-सोपान-राज, मोक्षधाम चढ़न काज,
तनसुख (?) निज गुनसमाज, केवली बताई ॥सु०॥६

(३) प्रभाती।

षोड़शकारण सुहृदय धारन कर भाई !
जिनतें जगतारन जिन, होय विश्वराई ॥ टेक ॥
निर्मल श्रद्धान ठान, शंकादिक मल जघान,
देवादिक विनय सरल भावतैं कराई ॥ १ ॥

शील निरतिचार धार, मारको सदैव मार,
अंतरंग पूर्ण ज्ञान, रागको विधाई ॥ २ ॥
यथाशक्ति द्वादश तप, तपो शुद्ध मानस कर,
आर्त रौद्र ध्यान त्यागि, धर्म शुक्र ध्याई ॥ ३ ॥
जथाशक्ति वैयावृत, धार अष्ट मान टार,
भक्ति श्रीजिनेन्द्रकी, सदैव चित्त लाई ॥ ४ ॥
आरज आचारजके, वंदि पाद-वारिजकों,
भक्ति उपाध्यायकी, निधाय सौख्यदाई ॥ ५ ॥
प्रवचनकी भक्ति जतनसेति बुद्धि धरो नित्य,
आवश्यक क्रियामें न, हानि कर कदाई ॥ ६ ॥
धर्मकी प्रभावना सु शर्मकर बढ़ावना सु,
जिनप्रणीत सूत्रमाहिं, प्रीति कर अघाई ॥ ७ ॥
ऐसे जो भावत चित, कलुपता बहावत तसु,
चरनकमल ध्यावत बुध, भागचंद गाई ॥षोडश०॥

(४) प्रभाती।

श्रीजिनवर दरश आज करत सौख्य पाया।
अष्ट प्रातिहार्यसहित, पाय शांति काया ॥ टेक ॥
वृक्ष है अशोक जहां, भ्रमर गान गाया।

सुन्दर मन्दार-पहुप,-वृष्टि होत आया ॥ १ ॥
ज्ञानामृत भरी वानि, खिरै भ्रम नसाया।
विमल चमर ढोरत हरि, हृदय भक्ति लाया ॥२॥
सिंहासन प्रभाचक्र, वालजग सुहाया।
देव दुंदुभी विशाल जहां सुर बजाया ॥ ४ ॥
मुक्ताफल माल सहित, छत्र तीन छाया।
भागचन्द अद्भुत छवि, कही नहीं जाया ॥ ५ ॥

(५) राग—ठुमरी।

बुधजन पक्षपात तज देखो, साँचा देव कौन है इनमें ॥ बुधजन० ॥ टेक ॥ ब्रह्मा दंड कमंडल धारी, स्वांत भ्रांत वशि सुरनारिनमें। मृगछाला माला मौंजी पुनि, विषयासक्त निवास नलिनमें ॥ बुधजन० ॥ १ ॥ शंभू खट्वाअंगसहित पुनि, गिरिजा भोगमगन निशदिनमें। हस्त कपाल व्याल भूषन पुनि, रुंडमाल तन भस्म मलिनमें ॥ बुधजन० ॥ २ ॥ विष्णु चक्रधर मदनवानवश, लज्जा तजि रमता गोपिनमें। क्रोधानल ज्वाजल्यमान पुनि, तिनके होत प्रचंड अरिनमें ॥ बुधजन० ॥

श्रीअरहंत परम वैरागी, दूषन लेश प्रवेश न जिनमें। भागचंद इनको स्वरूप यह, अब कहो पूज्यपनो है किनमें ? बुधजन० ॥ ४ ॥

(६)

अति संक्लेश विशुद्ध शुद्ध पुनि, त्रिविधजीव परिनाम वखाने ॥ अति० ॥ टेक ॥ तीव्र कषाय उदयतै भावित, दर्वित हिंसादिक अघ ठाने। सो संक्लेश भावफल नरकादिक गति दुख भोगत असहाने ॥ अति० ॥ १ ॥ शुध उपयोग कारननमें जो, रागकषाय मंद उदयाने। सो विशुद्ध तसु फल इंद्रादिक, विभव समाज सकल परमाने ॥ अति० ॥ २ ॥ परकारन मोहादिकतैं च्युत, दरसन ज्ञान चरन रस पाने। सो है शुद्ध भाव तसु फलतैं, पहुंचत परमानंद ठिकाने ॥ अति संक्ले० ॥ ३ ॥ इनमें जुगल बंधके कारन, परद्रव्याश्रित हेयप्रमाने। 'भागचंद' स्वसमय निज हित लखि, तामैं रम रहिये भ्रम हाने ॥ अति० ॥ ४ ॥

(७)

उग्रसेन गृह व्याहन आये, समदविजयके लाला ये ॥ उग्रसेन० ॥टेक॥ अशरन पशु आक्रंदन लखिकै, करुना भाव उपाये । जगत विभूति भूति सम तजिकै, अधिक विराग बढ़ाये ॥ उग्रसेन० ॥ १ ॥ मुद्रा नगन धरी तंद्रा विन, आत्मब्रह्मरुचि लाये । उर्जयंतिगिरि शिखरोपरि चढ़ि, शुचि थालकमें थाये ॥ उग्रसेन० ॥ २ ॥ पंचमुष्टि कच लुँच मुंच रज, सिद्धनको शिर नाये । धवल ध्यान पावक ज्वालातैं, करम कलंक जलाये ॥ ॥ उग्र० ॥ ३ ॥ वस्तु समस्त हस्तरेखावत, जुगपत ही दरसाये । निरवशेष विध्वस्त कर्मकर, शिवपुरकाज सिधाये ॥ उग्रसेन० ॥ ४ ॥ अव्याबाध अगाध वोधमयतत्रानंद सुहाये । जगभूषन दूषनविन स्वामी, भागचंद गुन गाये ॥ उग्रसेन०

(८)

सांची तो गंगा यह वीतरागवानी, अविच्छन्न धारा निज धर्मकी कहानी ॥ सांची० ॥ टेक ॥

जामें अति ही विमल अगाध ज्ञान पानी, जहां नहीं संशयादि पंककी निशानी ॥ सांची० ॥१॥ सप्तभंग जहँ तरंग उछलत सुखदानी, संतचित मरालवृंद रमैं नित्य ज्ञानी ॥ सांची० ॥ २ ॥ जाके अवगाहनतैं शुद्ध होय प्रानी, भागचंद्र निहचै घटमाहिं या प्रमानी ॥ सांची० ॥ ३ ॥

(९) राग—प्रभाती।

प्रभु तुम मूरत दृगसों निरखै हरखै मोरो जोयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ टेक ॥ भुजत कषायानल पुनि उपजै, ज्ञानसुधारस सोयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ १ ॥ वीतरागता प्रगट होत है, शिवथल दीसै गोयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ २ ॥ भागचंद तुम चरन कमलमें, वसत सन्तजन हीयरा ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

(१०) राग—प्रभाती।

अरे हो जियरा धर्ममें चित्त लगाय रे ॥ अरे हो० ॥ टेक ॥ विषय विषसम जान भौंदू वृथा क्यों लुभाय रे। अरे हो० ॥१॥ संग भार विषाद तोकौं, करत क्या नहिं भाय रे। रोग-उरग-निवास

वामी, कहा नहिं यह काय रे ॥ अरे हो० ॥ २ ॥
काल हरिकी गर्जना क्या, तोहि सुनि न पराय रे,
आपदा भर नित्य तोकौं, कहा नहीं दुःख दायरे
॥ अरे हो० ॥ ३ ॥ यदि तोहि कहा नहीं दुख,
नरकके असहाय रे । नदी वैतरनी जहां जिय परै
अति बिललाय रे ॥ अरे हौ० ॥४॥ तन धनादिक
घनपटल सम, छिनकमांहिं बिलाय रे । भागचंद
सुजान इमि जदु-कुल-तिलक गुन गाय रे ॥५॥

(११)

श्रीजिनवरपद ध्यावैं जो नर श्रीजिनवर पद
ध्यावैं ॥ टेक ॥ तिनकी कर्मकालिमा विनशै, प-
रम ब्रह्म हो जावैं । उपल अग्नि संजोग पाय
जिमि, कंचन विमल कहावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ १ ॥
चन्द्रोज्वल जस तिनको जगमें, पंडित जन नित
गावैं । जैसे कमल सुगंध दशोंदिश, पवन सहज
फैलावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ २ ॥ तिनहिं मिलनको
मुक्ति सुंदरी चित अभिलाषा ल्यावै । कृषिमें
तृण जिम सहज ऊपजै त्यों स्वर्गादिक पावै

श्रीजिनवर० ॥ ३ ॥ जनमजरामृत दावानल ये, भाव सलिलतैं बुझावैं । भागचन्द कहां ताई व-रनै तिनहिं इन्द्र शिर नावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ ४

(१२) राग—विलावल ।

सुमर सदा मन आतमराम, सुमर सदा मन आतमराम ॥ टेक ॥ स्वजन कुटुंबी जन तू पोषै, तिनको होय सदैव गुलाम । सो तो हैं स्वारथके साथी, अंतकाल नहिं आवत काम ॥ सुमर सदा० ॥ १ ॥ जिमि मरीचिकामें मृग भटकै, परत सो जब ग्रीषम अति घाम । तैसे तू भव-माहीं भटकै, धरत न इक छिनहू विसराम ॥ सु मर० ॥ २ ॥ करत न ग्लानि अब भोगनमें, धर-त न वीतराग परिनाम । फिर किमि नरकमाहिं दुख सहसी,जहां सुख लेश न आठों जाम ॥३॥ तातैं आकुलता अब तजिकै, थिर ह्वै बैठो अपने धाम । भागचंद वसि ज्ञान नगरमें, तजि रागा-दिक ठग सब ग्राम ॥ सुमर० ॥ ४ ॥

(१३) राग—सारंग ।

श्रीमुनि राजत समता संग । कायोत्सर्ग समायत अंग ॥टेक॥ करतैं नहिं कछु कारज तातैं आलम्बित भुज कीन अभंग । गमन काज कछु हू नहिं तातैं, गति तजि छाके निज रसरंग ॥ श्रीमुनि० ॥ १ ॥ लोचनतैं लखिवौ कछू नाहीं, तातैं नासा दृग अचलंग । सुनिवे जोग रह्यो कछु नाहीं, तातैं प्राप्त इकंत सुचंग ॥ श्रीमुनि० ॥ २॥ तहँ मध्यान्हमाहिं निज ऊपर, आयो उग्र प्रताप पतंग । कैधौं ज्ञान पवनबल प्रज्वजित, ध्यानानलसौं उछलि फुलिंग ॥ श्रीमु० ॥ ३ ॥ चित्त निराकुल अतुल उठत जहं, परमानंद पियूषतरंग । भागचंद ऐसे श्रीगुरुपद, बंदत मिलत स्वपद उत्तंग ॥ श्रीमुनि० ॥ ४ ॥

(१४) राग—गौरी ।

आतम अनुभव आवै जब निज, आतम अनुभव आवै । और कछू न सुहावै, जब निज० ॥ टेक० ॥ रस नीरस हो जात ततच्छिन, अच्छ

विषय नहीं भावै ॥ आतम० ॥ १ ॥ गोष्ठी कथा कुतूहल विघटै, पुद्गलप्रीति नसावै ॥आतम०॥२॥ राग दोष जुग चपल पक्षजुत मन पक्षी मर जावै ॥ आतम० ॥ ३ ॥ ज्ञानानन्द सुधारस उमगै, घट अंतर न समावै ॥ आतम०॥ भागचंद ऐसे अनुभवके हाथ जोरि सिर नावै ॥ आतम०

(१५) राग—ईमन ।

महिमा है अगम जिनागमकी ॥टेक॥ जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतमको ॥ महिमा० ॥ १ ॥ रागादिक दुखकारन जानें, त्याग बुद्धि दीनी भ्रमकी । ज्ञान ज्योति जागी घर अंतर, रुचि बाढ़ी पुनि शमदमकी ॥ माहि० ॥ २ ॥ कर्म बंधकी भई निरजरा, कारण परंपराक्रमकी । भागचन्द शिवलालच लागो, पहुंच नहीं है जहँ जमकी ॥ महिमा० ॥ ३ ॥

(१६) राग—ईमन ।

धन धन श्रीश्रेयांसकुमार, तीर्थदान करतार ॥ टेक ॥ प्रभु लखि जाहि पूर्वश्रुत आई,

चित हरषाय उदार । नवधा भक्ति समेत इक्षु-
रस, प्रासुक दियो अहार ॥ धन० ॥ १ ॥ रतन-
बृष्टि सुरगन तव कीनी, अमित अमोघ सुधार ।
कलपवृक्ष पहुपनकी वर्षा, जहँ अलि करत गंजा-
र ॥ धन० ॥२॥ सुरदुन्दुभि सुन्दर अति बाजी,
मन्द सुगंधि बयार । धन धन यह दाता इमि
नभमें, चहुंदिशि होत उचार ॥ धन० ॥ ३ ॥
जस ताको अमरी नित गावत, चन्द्रोज्ज्वल अ-
विकार । भागचन्द लघुमति क्या वरनै, सो तो
पुन्य अपार ॥ धन० ॥ ४ ॥

(१७)

ऐसे जैनी मुनिमहाराज, सदा उर मो बसो
॥ टेक ॥ तिन समस्त परद्रव्यनिमाहीं, अहंबुद्धि
तजि दीनी ॥ गुन अनंत ज्ञानादिक मम पुनि,
स्वानुभूति लखि लीनी ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ जे नि-
जबुद्धिपूर्व रागादिक, सकल विभाव निवारैं ।
पुनि अबुद्धिपूर्वकनाशनको, अपनैं शक्ति सम्हा-
रैं ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ कर्म शुभाशुभ बंध उदयमें

हर्ष विषाद न राखैं। सम्यगदर्शनज्ञान चरनतप, भावसुधारस चाखैं॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ परकी इच्छा तजि निजबल सजि, पूरव कर्म खिरावैं। सकल कर्मतैं भिन्न अवस्था सुखमय लखि चित चावैं ॥ ऐसे० ॥ ४ ॥ उदासीन शुद्धोपयोगरत सबके दृष्टा ज्ञाता। बाहिजरूप नगन समताकर, भागचन्द सुखदाता ॥ ऐसे० ॥ ५ ॥

(१८) राग जंगला।

तुम गुनमनिनिधि हौ अरहंत ॥ टेक ॥ पार न पावत तुमरो गनपति, चार ज्ञान धरि संत ॥ तुम गुन० ॥ १ ॥ ज्ञानकोष सब दोष रहित तुम, अलख अमूर्ति अचिंत ॥ तुम गुन०॥२॥ हरिगन अरचत तुम पदवारिज, परमेष्ठी भगवंत ॥ तुम गुन० ॥३॥ भागचन्दके घटमंदिरमें, वसहु सदा जयवंत ॥ तुम गुन० ॥ ४ ॥

(१९) राग जंगला।

शांति वरन मुनिराई वर लखि। उत्तर गुन-गन सहित (मूल गुन सुभग) बरात सुहाई ॥टेक॥

तप रथपै आरूढ अनूपम, धरम सुमंगलदाई ॥ शांति वरन० ॥ १ ॥ शिवरमनीको पानि ग्रहण करि, ज्ञानानन्द उपाई ॥ शांति वरन० ॥ भागचन्द ऐसे वनराको, हाथ जोर सिरनाई ॥ ३ ॥

(२०) राग जंगला।

म्हाकैं जिनमूरति हृदय बसो बसी ॥ टेक ॥ यद्यपि करुना रसमय तद्यपि, मोह शत्रु हनि असो असी ॥ म्हा० ॥१॥ भामंडल ताको अति निर्मल, निःकलंक जिमि ससी ससी ॥म्हा०॥२॥ लखत होत अति शीतल मति जिमि,सुधा जलधिमें धसी धसी ॥ म्हा० ॥ ३ ॥ भागचंद जिस ध्यानमंत्रसों, ममता नागिन नसो नसी ॥ म्हा०

(२१) राग खमाच।

ज्ञानी मुनि छै ऐसे स्वामी गुनरास ॥टेक॥ जिनके शैलनगर मंदिर पुनि, गिरिकंदर सुखवास ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ निःकलंक परजंक शिला पुनि, दीप मृगांक उजास ॥ ज्ञा० ॥ २ ॥ मृग किंकर करुना वनिता पुनि, शील सलिल तप

ग्रास ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ भागचन्द ते हैं गुरु हमरे तिनहीके हम दास ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

(२२) राग खमाच।

श्रीगुरु है उपगारी ऐसे वीतराग गुनधारी वे ॥टेक॥ स्वानुभूति रमनी संग कीड़ैं, ज्ञानसंपदा भारी वे ॥ श्रीगुरु० ॥ १ ॥ ध्यान पिंजरामें जिन रोकौ चित खग चंचलचारी वे ॥श्री०॥२॥ तिनके चरनसरोरुह ध्यावै,भागचन्द अघटारी वे ॥ ३ ॥

(२३) राग खमाच।

सारौ दिन निरफल खोयबौ करै छै। नर भव लहिकर प्रानी विनज्ञान, सारौ दिन नि० ॥ टेक ॥ परसंपति लखि निज चितमाहीं, विरथा मूरख रोयबौ करै छै ॥ सारौ० ॥१॥ कामानलतैं जरत सदा हो, सुन्दर कामिनी जोयबौ करै छै। सारौ०॥२॥ जिनमत तीर्थस्थान न ठानै, जलसौं पुद्गल धोयबा करै छै ॥ सारौ० ॥ ३ ॥ भागचन्द इसि धर्म विना शठ मोहनींदमें सोयबौ करै छै ॥ सारौ० ॥ ४ ॥

(२४) राग सोरठ।

स्वामी मोहि अपनो जानि तारौ, या विनती अब चित धारौ ॥ टेक ॥ जगत उजागर करुणा सागर, नागर नाम तिहारौ ॥स्वामी मोहि० ॥१॥ भव अटवीमें भटकत २, अब मैं अति ही हारौ ॥स्वामी मोहि०॥२॥ भागचन्द स्वच्छन्द ज्ञानमय सुख अनंत विस्तारौ ॥ स्वामी मोहि० ॥ ३ ॥

(२५) राग—सोरठ।

आवै न भोगनमें तोहि गिलान ॥ टेक ॥ तीरथनाथ भोग तजि दीनें, तिनतैं मन भय आन। तू तिनतैं कहुं डरपत नाहीं, दीसत अति बलवान ॥ आवै न० ॥ १ ॥ इन्द्रियतृप्ति काज तू भोगै, विषय महा अघखान। सो जैसे घृतधारा डारै पावकज्वाल बुझान ॥ आवै न० ॥ २ ॥ जे सुख तौ तीछन दुखदाई, ज्यों मधुलिप्त-कृपान। तातैं भागचंद इनको तजि, आत्मस्वरूप पिछान ॥ आवै न० ॥ ३ ॥

(२७) राग—सोरठ।

स्वामीजी तुम गुन अपरंपार, चन्द्रोज्ज्वल अविकार ॥ टेक ॥ जवै तुम गर्भमाहिं आये, तवै सब सुरगन मिलि आये। रतन नगरीमें व-रषाये, अमित अमोघ सुढार ॥ स्वामीजी० १ ॥ जन्म प्रभु तुमने जव लीना, न्हवन मंदिरपै हरि कीना। भक्त करि सची सहित भीना, वोला जयजयकार ॥ स्वामीजी० ॥ २ ॥ जगत छनभं-गुर जव जाना, भये तव नगनवृती वाना। स्तवन लौकांतिकसुर ठाना, त्याग राजको भार ॥ स्वामीजी० ॥ ३ ॥ घातिया प्रकृति जवै नासी, चराचर वस्तु सवै भासी। धर्मकी वृष्टि करी खासी, केवलज्ञान भंडार ॥ स्वामीजी० ॥ ४ ॥ अघाती प्रकृति सुविघटाई, मुक्तिकान्ता तव ही पाई। निराकुल आनंद असहाई, तीन लोकसर-दार ॥ स्वामीजी० ॥ ५ ॥ पार गनधर हू नहिं पावै, कहाँ लगि भागचन्द गावै। तुम्हारे चर-नांवुज ध्यावै, भवसागर सों तार ॥ स्वामीजी० ६ ॥

(२८) राग—मल्हार।

मान न कीजिये हो परवोन ॥ टेक ॥ जाय पलाय चंचला कमला, तिष्ठै दो दिन तीन। धनजोवन छनभंगुर सब ही, होत सुछिन छिन छीन ॥ मान न० ॥ १ ॥ भरत नरेन्द्र खंड-षट नायक, तेहु भये मद हीन। तेरी बात कहा है भाई, तू तो सहज हि दीन ॥ मान न० ॥ २ ॥ भागचन्द मार्दव रससागर, माहिं होहु लवलीन तातैं जगत जालमें फिर कहुं, जनम न होय-नवीन ॥ मान न० ॥ ३ ॥

(२९) राग—मल्हार।

अरे हो अज्ञानी तूने कठिन मनुषभव पायो टेक ॥ लोचनरहित मनुषके करमें, ज्यों बटेर खग आयो ॥ अरे हो० ॥ १ ॥ सो तू खोवत वि-षयनमाहीं, धरम नहीं चित लायो ॥ अरे हो० ॥ २ ॥ भागचन्द्र उपदेश मान अब, जो श्रीगुरु फरमायो ॥ ३ ॥

(३०) राग—मल्हार।

बरसत ज्ञान सनीर हो श्रीजिनमुखघनसों ॥

टेक ॥ शीतल होत सुबुद्धिमेदिनी मिटत भवा तपपीर ॥ वरसत० ॥ १ ॥ स्यादवाद नय दामिनि दमकै, होत निनाद गंभीर ॥ बरसत० २॥ करुनानदी वहै चहुं दिशितैं, भरी सो दोई तीर वरसत० ॥३॥ भागचन्द अनुभव मन्दिरको, तजत न संत सुधीर ॥ वरसत० ॥ ४ ॥

(३१) राग—मल्हार।

मेघघटासम श्रीजिनवानी ॥ टेक ॥ स्यात्पद चपला चमकत जामें, वरसत ज्ञान सुपानी मेघघटा० ॥ १ ॥ धरमंसस्य जातैं बहु बाढ़ैं, शिवआनंदफलदानी ॥ मेघघटा० ॥ २ ॥ मोहन धूल दबी सव यातैं, क्रोधानल सुबुझानी ॥ मेघघटा० ॥ ३ ॥ भागचन्द बुधजन केकीकुल, लखि हरखै चितज्ञानी ॥ मेघघटा० ॥ ४ ॥

(३२) राग—धनाश्री।

प्रभू थांको लखि मम चित हरषायो ॥ टेक सुंदर चिंतारतन अमोलक, रंकपुरुष जिमि पायो प्रभू० ॥ १ ॥ निर्मलरूप भयो अब मेरो, भक्ति-

नदीजल न्हायो प्रभू० ॥ २ ॥ भागचन्द अब मम करतलमें अविचल शिवथल आयो ॥प्रभू०॥

(३३) राग—मल्हार।

प्रभू म्हांकी सुधि, करुना करि लीजे ॥ टेक मेरे इक अवलम्बन तुम ही, अब न विलम्ब करीजे ॥ प्रभू० ॥ १ ॥ अन्य कुदेव तजे सब मैंने तिनतैं निजगुन छीजे ॥ प्रभू० ॥ २ ॥ भागचन्द तुम शरन लियो है, अब निश्चलपद दीजे ॥ प्रभू० ॥ ३ ।

(३४) राग— कलिंगड़ा।

ऐसे साधू सुगुरु कब मिलिहैं ॥ टेक ॥ आप तरें अरु परको तारैं, निष्प्रेही निर्मल हैं ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ तिलतुषमात्र संग नहिं जाकै, ज्ञान-ध्यान-गुण-बल हैं ॥ ऐसे साधू० ॥ २ ॥ शान्तदिगम्बर मुद्रा जिनकी, कन्दिरतुल्य अचल हैं ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ भागचन्द तिनको नित चाहै, ज्यों कमलनिको अल है ॥ ऐसे० ॥४ ॥

(३५) राग—कहरवा कलिंगड़ा।

केवल जोति सुजागी जी, जब श्रीजिनवरके ॥ टेक ॥ लोकालोक विलोकत जैसे, हस्तामल वड़भागी जी॥ के० ॥ १ ॥ हार-चूड़ामनिशिखा सहज ही, नम्र भूमितें लागीजी ॥ केवल० ॥२॥ समवसरन रचना सुर कीन्हीं, देखत भ्रम जन त्यागी जी ॥ केवल० ॥ ३ ॥ भक्तिसहित अरचा नव कीन्हीं, परम धरम अनुरागी जी ॥ केवल० ॥ ४ ॥ दिव्यध्वनि सुनि सभा दुवादश, आनँद-रसमें पागी जी ॥ केवल० ॥ ५ ॥ भागचंद प्रभु भक्ति चहत है, और कछू नहिं मांगी जी ॥६॥

(३६) राग—ठुमरी।

जीवनिके परिनामनिकी यह, अति विचित्रता देखहु ज्ञानी ॥ टेक ॥ नित्य निगोदमाहितैं कढि कर, नर परजाय पाय सुखदानी। समकित लहि अंतमुहूर्तमैं, केवल पाय वरै शिवरानी ॥ १ ॥ मुनि एकादश गुणथानक चढ़ि, गिरत तहांतैं चित भ्रम ठानी। भ्रमत अर्धपुद्गलप्रावर्तन, किंचित्

ऊन काल परमानी ॥ २ ॥ निज परिनामनिकी सँभालमें, तातैं गाफिल मत ह्वै प्रानी। बंध मोक्ष परिनामनि ही सों, कहत सदा श्रीजिनवरवानी ॥ ३ ॥ सकल उपाधिनिमित भावनिसों, भिन्न सु निज परनतिको छानी। ताहि जानि रुचि ठानि होहु थिर, भागचन्द यह सीख सयानी ॥ ४ ॥

(३७)

परनति सब जीवनकी, तीन भाँति वरनी।
एक पुण्य एक पाप, एक रागहरनी ॥पर०॥टेक॥
तामें शुभ अशुभ अंध, दोय करैं कर्मबंध,
वीतराग परनति ही, भवसमुद्रतरनी ॥ १ ॥
जावत शुद्धोपयोग, पावत नाहीं मनोग.
तावत ही करन जोग, कही पुण्य करनी ॥ २ ॥
त्याग शुभ क्रिया कलाप, करो मत कदाच पाप,
शुभमें न मगन होय, शुद्धता विसरना ॥ ३ ॥
ऊंच ऊंच दशा धारि, चित प्रमादको विडारि,
ऊंचली दशातैं मति, गिरो अधो धरनी ॥४॥
भागचन्द या प्रकार, जीव लहै सुख अपार,
याके निरधारि स्यादवादकी उचरनी ॥ ५ ॥

(३८)

जीव ! तू भ्रमत सदीव अकेला। संग साथी कोई नहिं तेरा ॥ टेक ॥ अपना सुखदुख आपहि भुगतै, होत कुटुंब न भेला । स्वार्थ भयैं सब बिछरि जात हैं, विघट जात ज्यों मेला ॥ १ ॥ रक्षक कोइ न पूरन ह्वै जब, आयु अंतकी वेला। फूटत पारि बँधत नहीं जैसें, दुद्धर-जलको ठेला ॥ २ ॥ तन धन जीवन विनशि जात ज्यों, इन्द्र-जालका खेला। भागचन्द इमि लख करि भाई हो सतगुरुका चेला ॥ जीव तू भ्रमत० ॥३॥

(३६)

आकुलरहित होय इमि निशदिन, कीजे तत्त्व विचारा हो। को मैं कहा रूप है मेरा, पर है कौन प्रकारा हो ॥ टेक ॥ १ ॥ को भव-कारण बंध कहा को, आस्रवरोकनहारा हो। खिपत कर्म बंधन काहेसों, थानक कौन हमारा हो ॥२॥ इमि अभ्यास किये पावत है, परमानंद अपारा हो। भागचन्द यह सार जान करि, कीजे बारंबारा हो ॥ आकुलरहित होय० ॥ ३ ॥

(४०) ख्याल ।

बिन काम ध्यानमुद्राभिराम, तुम हो जगनायकजी ॥ टेक ॥ यद्यपि, वीतरागमय तद्यपि, हो शिवदायकजी ॥ बिन काम० ॥१॥ रागी देव आप ही दुखिया, सो क्या लायक जी ॥ बिन काम० ॥ २ ॥ दुर्जय मोह शत्रु हनवेको, तुम वच शायक जी ॥ बिन काम० ॥ ३ ॥ तुम भवमोचन ज्ञान सुलोचन, केवल चायक जी ॥ बिन काम० ॥ ४ ॥ भागचन्द भागनतैं प्रापति, तुम सब ज्ञायकजी ॥ बिन काम० ॥ ५ ॥

(४१) राग काफी ।

अहो यह उपदेश मांहीं, खूब चित्त लगावना । होयगा कल्यान तेरा, सुख अनंत बढ़ावना ॥ टेक ॥ रहित दूषन विश्वभूषन, देव जिनपति ध्यावना । गगनवत निर्मल अचल मुनि, तिनहिं शीस नवावना ॥ अहो० ॥ १ ॥ धर्म अनुकंपा प्रधान, न जीव कोई सतावना । सप्ततत्त्व परीक्षना करि, हृदय श्रद्धा लावना ॥ अहो० ॥ २ ॥ पुद्गला-

दिकतैं पृथक्, चैतन्य ब्रह्म लखावना। या विधि विमल सम्यक्त धरि,शंकादि पंक बहावना ॥अ० ॥ ३ ॥ रुचैं भव्यनको वचन जे,शठनको न सुहावना। चन्द्र लखि जिमि कुमुद विकसै, उपल नहिं विकसावना ॥ अहो० ॥ ४ ॥ भागचंद विभावतजि अनुभव स्वभावित भावना। या शरण न अन्य जगता-रन्यमें कहुं पावना ॥अहो०॥५॥

(४२) राग काफी।

ऐसे विमल भाव जब पावै, तब हम नरभव सुफल कहावै ॥ टेक ॥ दरश बोधमय निज आतम लखि, पर द्रव्यनिको नहिं अपनावै। मोह राग रुष अहित जान तजि, झटित दूर तिनको छिटकावै ॥ऐसे०॥१॥ कर्म शुभाशुभबंध उदयमें, हर्ष विषाद चित्त नहिं ल्यावैं। निज हित हेत विराग ज्ञान लखि, तिनसौं अधिक प्रीति उपजावै ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ विषय चाह तजि आत्मवीर्य सजि, दुखदायक विधिबंध खिरावै। भागचन्द शिव सुख सब सुखमय, आकुलता विन लखि चित चावै ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥

(४३) राग काफी ।

प्रभूपै यह वरदान सुपाऊं, फिर जग कीच बीच नहिं आऊं ॥ टेक ॥ जल गंधाक्षत पुष्प सुमोदक, दीप धूप फल सुन्दर ल्याऊं । आनँद जनक कनक भाजन धरि, अर्घ अनर्घ बनाय चढ़ाऊं ॥ प्रभूपै० ॥ १ ॥ आगमके अभ्यास मांहि पुनि, चित एकाग्र सदैव लगाऊं । संतन की संगति तजिकै मैं, अंत कहूं इक छिन नहिं जाऊं ॥ प्रभूपै० ॥२॥ दोषवादमें मौन रहूं फिर, पुण्य पुरुषगुन निशिदिन गाऊं । मिष्ट स्पष्ट सबहिसों, भाषौं,वीतराग निज भाव बढाऊं ॥ प्रभू० ॥ ३ ॥ बाहिजदृष्टि एंचके अन्तर, परमानन्द स्वरूप लखाऊं । भागचन्द शिवप्राप्त न जौलौं तौलौं तुम चरणाम्बुज ध्याऊं ॥ प्रभूपै ॥ ॥ ४ ॥

(४४) लावनी ।

धन्य धन्य है घड़ी आजकी जिनधुनि श्रवन परी । तत्त्वप्रतीत भई अब मेरे, मिथ्यादृष्टि टरी ॥ टेक ॥ जड़तैं भिन्न लखी चिन्मूरति, चेतन

स्वरस भरी । अहंकार ममकार बुद्धि पुनि, परमें सब परिहरी ॥ धन्य० ॥ १ ॥ पापपुन्य बिधि बंध अवस्था, भासी अति दुखभरी । वीतराग विज्ञान भावमय, परिनत अति विस्तरी ॥ धन्य० ॥ २ ॥ चाह-दाह विनसी बरसी पुनि, समता मेघझरी । बाढ़ी प्रीति निराकुल पदसों, भागचन्द हमरी ॥३

(४५) लावनी ।

सफल हैं धन्य धन्य वा घरी, जब ऐसी अति निर्मल होसी, परमदशा हमरी ॥ टेक ॥ धारि दिगंवर दीचा सुन्दर, त्याग परीग्रह अरी । वनवासी कर पात्र परीषह, सहि हों धीर धरी ॥स० ॥ १ ॥ दुर्धरतप निर्भर नित तप हौं, मोह कुवृच्छ करी । पंचाचार क्रिया आचर हीं, सकल सार सुथरी ॥सफल० ॥ २ ॥ विभ्रमतापहरन झरसी निज, अनुभव मेघ झरी । परम शान्त भावनकी तातैं, होसी बुद्धि खरी ॥ सफल० ॥ ३ ॥ त्रेसठि प्रकृति भंग जब होसी, जुत त्रिभंग सगरी । तब केवल दर्शन विबोध सुख, वीर्यकला पसरी ।सफल०

॥४॥ लखि हो सकल द्रव्य गुनपर्जय, परनति अति गहरी । भागचंद जब सहजहि मिलि है, अचल मुकति नगरी ॥ ५ ॥

(४६) राग सोरठ ।

जे दिन तुम विवेक विन खोये ॥टेक॥ मोह वारुणी पी अनादितैं, परपदमें चिर सोये । सुख करंड चितपिंड आपपद, गुन अनंत नहिं जोये ॥ जे दिन० १ ॥ होय वहिर्मुख ठानि राग रुख, कर्म वीज वहु वोये । तसु फल सुख दुख सामग्री लखि, चितमें हरषे रोये ॥जे दिन० ॥२ ॥ धवल ध्यान शुचि सलिलपूरतें, आस्रव मल नहिं धोये परद्रव्यनिकी चाह न रोकी, विविध परिग्रह ढोये ॥ जे दिन० ॥ ३ ॥ अव निजमें निज जान नियत तहां, निज परिनाम समोये । यह शिव-मारग समरससागर, भागचन्द हित तो ये ॥ जे दिन० ॥ ४ ॥

(४७) राग—दादरा ।

धनि ते प्रानि, जिनके तत्त्वारथ श्रद्धान ॥

टेक ॥ रहित सप्त भय तत्त्वारथमें, चित्त न संशय आन । कर्म कर्ममलकी नहिं इच्छा, परमें धरत न ग्लानि ॥ धनि० ॥ १ ॥ सकल भावमें मूढदृष्टि-तजि, करत साम्यरसपान । आतम धम बढ़ावैं वा, परदोष न उचरैं वान ॥ धनि० ॥ २ ॥ निज स्वभाव वा, जैनधर्ममें, निजपरथिरता दान, । रत्नत्रय महिमा प्रगटावे, प्रीति स्वरूप महान ॥ धनि० ॥ ३ ॥ ये वसु अंगसहित निर्मल यह, समकित निज गुन जान । भागचन्द शिवमहल चढ़नको, अचल प्रथम सोपान ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(४८) राग—जोड़ा ।

ज्ञानी जीवनके भय होय, न या परकार ॥ टेक ॥ इह भव परभव अन्य न मेरो, ज्ञानलोक मम सार । मैं वेदक इक ज्ञानभावको, नहिं पर-वेदनहार ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ निज सुभावको नाश न तातैं, चहिये नहिं रखवार । परमगुप्त निजरूप सहज ही, परका तहँ न संचार ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ चितस्वभाव निज प्रान तासको, कोई नहीं हर-

तार । मैं चितपिंड अखंड न तातैं, अकस्मात-भयभार ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ होय निशंक स्वरूप अनुभव, जिनके यह निरधार । मैं सो मैं पर सो मैं नाहीं, भागचन्द्र भ्रम डार ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

(४६) राग—जोड़ा ।

मैं तुम शरन लियो, तुम सांचे प्रभु अरहंत ॥ टेक ॥ तुमरे दर्शन ज्ञान मुकरमें, दरशज्ञान झलकंत ॥ अतुल निराकुल सुख आस्वदन, वीरज अरज (?) अनंत ॥ मैं तुम० ॥ १ ॥ राग द्वेष विभाग नाश भये, परम समरसी संत । पद देवाधिदेव पायो दिक, दोप क्षुधाधिज अंत मैं तुम० ॥ २ ॥ भूपन वसन शस्त्र कामादिक, करन विकार अनंत । तिन तुम परमौदारिक तन, सुद्रा सम शोभंत ॥ मैं तुम० ॥३॥ तुम वानीतैं धर्मतीर्थ जग, माहिं त्रिकाल चलंत । निजकल्याणहेतु इन्द्रादिक, तुम पदसेव करंत ॥ मैं तुम० ॥ ४ ॥ तुम गुन अनुभवतैं निज पर गुन, दरसत अगम अचिंत । भागचन्द निजरूपप्राप्ति अव, पावैं हम भगवंत ॥ मैं तुम० ॥ ५ ॥

(५०) राग दादरा।

चेतन निज भ्रमतैं भ्रमत रहै ॥ टेक ॥ आप अभंग तथापि अंगके, संग महा दुख (पुंज) बहै। लोहपिंड संगति पावक ज्यों, दुर्धर घनकी चोट सहै ॥ चेतन० ॥ १ ॥ नामकर्मके उदय प्राप्त नर नरकादिक परजाय धरै। तामें मान अपनपौ विरथा, जन्म जरा मृतु पाय डरै ॥ चेतन० ॥२॥ कर्ता होय रागरुप ठानै परको साक्षी रहत न यहै। व्याप्य सुव्यापक भाव विना किमि, परको करता होत न यहै ॥ चे० ॥ ३ ॥ जब भ्रम नींद त्याग निजमें निज, हित हेत सम्हारत है। वीतराग सर्वज्ञ होत तब, भागचन्द हित सीख कहै ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

(५१) राग ठुमरी।

सन्त निरन्तर चिन्तत ऐसैं, आतमरूप अबाधित ज्ञानी ॥ टेक ॥ रागादिक तो देहाश्रित हैं, इनतैं होत न मेरी हानी। दहन दहत ज्यों दहन न तदगत, गगन दहन ताकी विधि ठानी ॥ १ ॥ वरणादिक विकार पुद्गलके

इनमें नहिं चैतन्य निशानी। यद्यपि एक क्षेत्र अवगाही, तदपि लक्षण भिन्न पिछानी ॥ २ ॥ मैं सर्वांगपूर्ण ज्ञायक रस,लवण खिल्लवत लीला ठानी। मिलौ निराकुल स्वाद न यावत, तावत परपरनति हित मानी ॥ ३ ॥ भागचन्द्र निरद्वन्द निरामय, मूरति निश्चय सिद्धसमानी। नित अकलंक अवंक शंक विन निर्मल पंक विना जिमि पानी ॥ सन्त निरन्तर चि० ॥ ४ ॥

(५२) राग दीपचन्दी।

कीजिये कृपा मोह दीजिये स्वपद, मैं तो तेरीहो शरन लीनों हे नाथ जी ॥टेक॥ दूर करो यह मोह शत्रुको, फिरत सदाजी मेरे साथ जी ॥ कीजिये० ॥ १ ॥ तुमरे वचन कर्मगत-मोचन, संजीवन औषधी क्वाथजो ॥ कीजि० ॥२॥ तुमरे चरन कमल बुध ध्यावत, नावत हैं पुनि निज माथजी ॥कीजि०॥३॥ भागचन्द मैं दास तिहारो ठाड़े जोरौं जुगल हाथ जी ॥ कीजि० ॥ ४ ॥

(५३) राग दीपचन्दी।

निज कारज काहे न सारै रे, भूले प्रानी ॥

टेक ॥ परिग्रह भारथकी कहा नाहीं, आरत होत तिहारै रे ॥ निज० ॥ १ ॥ रोगी नर तेरी वपुको कहा, तिस दिन नाहीं जारै रे ॥ निज० ॥ २ ॥ क्रूर कृतांत सिंह कहा जगमें, जीवनको न पछारै रे ॥ निज का० ॥ करन विषय विष भोजनवत कहा, अंत विसरता न धारै रे ॥ निज० ॥ ४ ॥ भागचन्द भव अन्धकूपमें धर्म रतन काहे डारै रे ॥ निज का० ॥ ५ ॥

[५४]

हरी तेरी मति नर कौनें हरी । तजि चिन्ता मन कांच गहत शठ ॥टेक॥ विषय कषाय रुचत तोकौं नित, जे दुखकरन अरी ॥ हरी० ॥ १ ॥ सांचे मित्र सुहितकर श्रीगुरु,तिनकी सुधि विसरी ॥ हरी० ॥ २ ॥ पर परनतिमें आपो मानत, जो अति विपति भरी ॥ हरी० ॥३॥ भागचन्द जिन-राज भजन कहुं करत न एक घरी ॥ हरी०॥४॥

(५५)

सुमर मत समवसरन सुखदाई । अशरन

शरन धनज कृत प्रभुको ॥टेक॥ मानस्तम्भ सरोवर सुंदर, विमल सलिल जुत खाई । पुष्पवाटिका तुंगकोट पुनि, नाट्यशाल मन भाई ॥ सुमर मन० ॥ १ ॥ उपवन जुगल विशाल वेदिका,धुज पंकति हलकाई । हाटक कोट कल्पतरुवन पुनि, द्वादश सभा बरनि नहिं जाई ॥ सुमर० ॥ २ ॥ तहं त्रिपीठपर देव स्वयम्भू, राजत श्रीजिनराई । जाहि पुरंदरजुत वृन्दारक-वृन्द सु वंदत आई । भागचन्द इमि ध्यावत ते जन, पावत जग ठकुराई ॥ सुमर मन० ॥ ३ ॥

(५६)

सोई है सांचा महादेव हमारा । जाके नाहीं राग रोष मद, मोहादिक विस्तारा ॥टेक॥ जाके अंग न भस्म लिप्त है, नहिं रुंडनकृत हारा । भूषण व्याल न भाल चन्द्र नहिं, शीस जटा नहिं धारा ॥ सोई है० ॥१॥ जाके गीत न नृत्य न, भृत्यु न, बैलतनो न सवारा । नहिं कोपीन न काम कामिनी, नहिं धन धान्य पसारा ॥ सोई

है० ॥ २ ॥ सो तो प्रगट समस्त वस्तुको, देखन जाननहारा। भागचंद ताहीको ध्यावत, पूजत वारंबारा ॥ सोई है० ॥ ३ ॥

(५७)

समझाओ जी आज कोई करुनाधरन, आये थे ब्याहिन काज वे तो भये, हैं विरागी पशूदया लख लख ॥ टेक ॥ विमल चरन पागी, करन विषय त्यागी, उनने परम ज्ञानानंद चख चख ॥ समझाओ० ॥ १ ॥ सुभग मुकति नारी, उनहिं लगी प्यारी, हमसों नेह कछू नहीं रख रख ॥ समझाओ० ॥ २ ॥ वे त्रिभुवन स्वामी, मदन रहित नामी, उनके अमर पूजे पद नख नख ॥ समझाओ० ॥३॥ भागचन्द मैं तो तलफत अति जैसे, जलसों तुरत न्यारी जक झख झख ॥४॥

(५८) राग दीपचन्दी परज।

नाथ भये ब्रह्मचारी, सखी घर में न रहोंगी ॥ टेक ॥ पाणिग्रहण काज प्रभु आये, सहित समाज अपारी। ततछिन ही वैराग भये हैं,

पशु करुना उरधारी ॥नाथ०॥१॥ एक सहस्र अष्ट लच्छनजुत, वा छविकी बलिहारी । ज्ञानानंद मगन निशिवासर,हमरी सुरत विसारी ॥ना०॥२॥ मैं भी जिन दीक्षा धरि हों अब जाकर श्री गिर नारी । भागचन्द इमि भनत सखिनसों, उग्रसेन की कुमारी ॥ नाथ० ॥ ३ ॥

(५६)

गिरनारीपै ध्यान लगाया, चल सखि नेमि-चन्द्र मुनिराया ॥ टेक ॥ संग भुजंग रंग उन लखि तजि, शत्रू अनंग भगाया । बाल ब्रह्मचारी व्रतधारी, शिवनारी चित लाया ॥१॥ मुद्रा नगन मोहनिद्रा बिन नासा दृग मन भाया । आसन धन्य अनन्य वन्य चित, पुष्ट (?) थूल सम थाया ॥ गिरनारी० ॥ २ ॥ जाहि पुरन्दर पूजन आये, सुन्दर पुन्य उपाया । भागचन्द मम प्राननाथ सो, और न मोह सुहाया ॥ गि० ॥ ३ ॥

(६०) राग दीपचन्दी कानेर ।

जानके सुज्ञानी,जैनवानीकी सरधा लाइये ॥

टेक ॥ जा बिन काल अनंते भ्रमता, सुख न मिलै कहूं प्रानी ॥ जानके० ॥१॥ स्वपर विवेक अखंड मिलत है जाहीके सरधानी ॥ जानके० ॥ २ ॥ अखिलप्रमान सिद्ध अविरुद्धत, स्यात्पद शुद्ध निशानी ॥ जानके० ॥ ३ ॥ भागचन्द सत्यारथ जानी, परम धरम रजधानी ॥ जानके० ॥ ४ ॥

(६१) राग दीपचन्दी सोरठ।

प्रानी समकित ही शिवपंथा। या बिन निर्मल सब ग्रन्था ॥ टेक ॥ जा बिन बाह्यक्रिया तप कोटिक, सफल वृथा है रंथा ॥ प्रानी० ॥ १ ॥ हयजुतरथ भी सारथ बिन जिमि, चलत नहीं ऋजु पंथा ॥ प्रानी० ॥ २ ॥ भागचन्द सरधानी नर भये, शिवलछमीके कंथा ॥ प्रानी० ॥ ३ ॥

(६२) राग दीपचन्दी।

तेरे ज्ञानावरनदा परदा, तातैं सूझत नहिं भेद स्वपरदा ॥ टेक ॥ ज्ञान बिना भवदुख भोगै तू, पंछी जिमि बिन परदा ॥ तेरे० ॥ १ ॥ देहादिकमें आपौ मानत, विभ्रममदवश परदा ॥ते०

॥ २ ॥ भागचन्द भव विनसै वासी,होय त्रिलोक उपरदा ॥ तेरे० ॥ ३ ॥

(६३) राग दीपचन्दी खम्माचकी ।

जैनमन्दिर हमको लागै प्यारा ॥ टेक ॥ कै धौं व्याह मुकति मंगल ग्रह,तोरनादि जुत लसत अपारा ॥ जैन० ॥ १ ॥ धर्मकेतु सुखहेत देत गुन अक्षय पुन्य रतन भंडारा ॥ जैन० ॥ २ ॥ कहुं पूजन कहूं भजन होत हैं, कहुं वरसत पुन श्रुत-रस धारा ॥ जैन० ॥ ३ ॥ ध्यानारूढ विराजत हैं जहां, वीतराग प्रतिबिम्ब उदारा ॥ जैन० ॥४॥ भागचन्द तहां चलिये भाई, तजिके गृहकारज अब भारा ॥ जैन० ॥ ५ ॥

(६४) राग दीपचन्दी ।

जिन मन्दिर चल भाई शिव-तिय-व्याह सुमङ्गलग्रहवत ॥टेक॥ जन धर्मिष्ट समाज सकल तहां तिष्ठत मोद बढ़ाई । अमल धर्म आभूषन मंडित, एक सों एक सवाई ॥ जिन०॥ १ ॥ धर्म ध्यान निर्धूम हुताशन,कंड प्रचंड बनाई । होमत

कर्म हविष्य सुपण्डित, श्रुत धुनि मंत्र पढ़ाई ॥ जिन० ॥ २ ॥ मनिमय तोरनादि जुत शोभत, केतुमाल लहकाई । जिन गुन पढ़न मधुर सुर छावत, वुधजन गीत सुहाई ॥ जिन०॥ ३ ॥ बीन मृदंग रंगजुत बाजत, शोभा बरनि न जाई । भागचंद वर लख हरषत मन, दूलह श्रीजिन-राई ॥ जिनमंदिर० ॥ ४ ॥

(६५)

भववनमें, नहीं भूलिये भाई । कर निज थ-लकी याद ॥ टेक ॥ नर परजाय पाय अति सुं-दर, त्यागहु सकल प्रमाद । श्रीजिनधर्म सेय शिव पावत, आतम जासु प्रसाद ॥ भवव० ॥१॥ अबके चूकत ठीक न पड़सी, पासी अधिक वि-षाद । सहसी नरक वेदना पुनि तहां, सुणसी कौन फिराद ॥ भव० ॥ २ ॥ भागचन्द श्रीगुरु शिक्षा विन, भटका काल अनाद । तू कर्ता तूही फल भोगत, कोन करै वकवाद ॥ भव० ॥ ३ ॥

(६६)

जे सहज होरीके खिलारी, तिन जीवनकी बलिहारी ॥ टेक ॥ शांतभाव कुंकुम रस चन्दन, भर ममता पिचकारी। उड़त गुलाल निर्जरा संवर, अंबर पहरैं भारी ॥ जे० ॥ १ ॥ सम्यकदर्शनादि संग लेकै, परम सखा सुखकारी। भींज रहे निज ध्यान रंगसें, सुमति सखी प्रियनारी ॥ जे० ॥ २ ॥ कर स्नान ज्ञान जलमें पुनि, विमल भये शिवचारी। भागचन्द तिन प्रति नित वंदन, भाव समेत हमारी ॥ जे० ॥ ३ ॥

(६७) राग—दीपचन्दी सोरठकी।

लखिकै स्वामी रूपको, मेरा मन भया चंगा जी ॥ टेक ॥ विभ्रम नष्ट गरुड लखि जैसे, भगत भुजंगा जी ॥ लखि० ॥ १ ॥ शीतल भाव भये अब न्हायो, भक्ति सुगंगा जी ॥ लखि० २ भागचन्द अब मेरे लागो, निजरसरंगा जी ॥ लखिकै० ॥ ३ ॥

(६८) राग—दीपचन्दी ईमन।

स्वामीरूप अनूप विशाल, मन मेरे बसा॥ टेक॥ हरिगन चमरवृन्द ढोरत तहां, उज्जल जेम मराल॥ स्वामी०॥ १॥ छत्रत्रय ऊपर राजत पुनि, सहित सुमुक्तामाल॥ स्वामी०॥ २॥ भागचन्द ऐसे प्रभुजीको, नावत नित्य त्रिकाल स्वामी०॥ ३॥

(६६) राग—दीपचन्दी।

करौ रे भाई, तत्त्वारथ सरधान। नरभव सुकुल सुछेत्र पायके॥टेक॥ देखन जाननहार आप लखि, देहादिक परमान॥ करौ रे भाई०॥ १॥ मोह रागरुष अहित जान तजि, बंधहु विधि दुखदान॥ करौ रे भाई०॥ २॥ निज स्वरूपमें मगन होय कर, लगनविषय दो भान॥ करौ रे भाई०॥ ३॥ भागचन्द साधक ह्वै साधो, साध्य स्वपद अमलान॥ करौ रे भाई०॥ ४॥

(७०)

आनन्दाश्रु बहैं लोचनतैं, तातैं आनन न्हाया

गद्गद स्पष्ट वचनजुत निर्मल, मिष्टगान सुर-गाया ॥ टेक ॥ भव वनमें बहु भ्रमन कियो तहां, दुख दावानल ताया। अब तुम भक्तिसुधारस वापीमें अवगाह कराया ॥ आ० ॥ १ ॥ तुम वपु दर्पनमें मैंने अब, आत्मस्वरूप लखाया। सर्व-कषाय नष्ट भये अब ही, विभ्रम दुष्ट भगाया ॥ आ० ॥ २ ॥ कल्पवृक्ष मैंने निज गृहके, आंगन-मांझ उगाया। स्वर्ग विमोक्ष विलास वास पुनि मम करतलमें आया ॥ आ० ॥ ३ ॥ कलिमल पंक सकल अब मैंने, चितसे दूर वहाया। भाग-चन्द तुम चरनाम्बुजको भक्तिसहित सिर नाया आ० ॥ ४ ॥

(७१) राग—दीपचन्दी परज।

महाराज श्रीजिनवर जी, आज मैंने प्रभु-दर्शन पाये ॥ टेक ॥ तुमरे ज्ञान द्रव्य गुन पर्जय निज चित गुन दरसाये। निज लच्छनतैं सकल विलच्छत, तताछित पर दृग आये ॥ म० ॥ १ ॥ अप्रशस्त संक्लेश भाव अघ, कारन ध्वस्त कराये

राग प्रशस्त उदयतैं निर्मल, पुन्य समस्त कमाये ॥ म० ॥ २ ॥ विषय कषाय अताप नस्यो सब, साम्य सरोवर न्हाये। रुचि भई तुम समान होवेकी, भागचन्द गुन गाये ॥ म० ॥ ३ ॥

(७२) राग—दीपचन्दी जोड़ी।

जिन स्वपरहिताहित चीना, जीव तेही हैं साचै जैनी ॥ टेक ॥ जिन बुधछैनी पैनीतैं जड़, रूप निराला कीना, परतैं विरच आपसे राचे, सकल विभाव विहीना ॥ जि० ॥१॥ पुन्य पाप विधि बंध उदयमें, प्रमुदित होत न दीना। सम्यक-दर्शन ज्ञान चरन निज, भाव सुधारस भीना ॥ जिन० ॥ २ ॥ विषयचाह तजि निज वीरज सजि करत पूर्वविधि छीना। भागचन्द साधक ह्वै साधत, साध्य स्वपद स्वाधीना ॥ जिन० ॥ ३

(७३) राग—दीपचन्दी।

यह मोह उदय दुख पावै, जगजीव अज्ञानी ॥ टेक ॥ निज चेतनस्वरूप नहिं जानै, परपदार्थ अपनावै। पर परिनमन नहीं निज आश्रित, यह

तहं अति अकुलावै ॥ यह० ॥ १ ॥ इष्ट जानि रागादिक सेवै, ते विधिबंध बढ़ावै। निजहितहेत भाव चित सम्यक्दर्शनादि नहिं ध्यावै ॥ यह० ॥ २ ॥ इन्द्रियतृप्ति करनके काजै, विषय अनेक मिलावै। ते न मिलैं तब खेद खिन्न ह्वै समसुख हृदय न ल्यावै ॥ यह० ॥ ३ ॥ सकल कर्म छय लच्छन लच्छित, मोच्छदशा नहिं चावै। भागचन्द ऐसे भ्रमसेती, काल अनंत गमावै ॥ यह मोह० ॥ ४ ॥

(७४)

प्रेम अब त्यागहु पुद्गलका। अहितमूल यह जाना सुधीजन ॥ टेक ॥ कृमि-कुल-कलित स्रवत नव द्वारन, यह पुतला मलका। काकादिक भखते जु न होता, चामतना खलका ॥ प्रेम० १ ॥ काल-व्याल मुख थित इसका नहिं, है विश्वास पलका। छणिक मात्रमें विघट जात है, जिमि बुद्बुद जलका ॥ प्रेम० ॥ २ ॥ भागचन्द क्या सार जानके, तू या संग ललका। तातैं चित अनुभव कर जो तू, इच्छुक शिवफलका ॥प्रे०॥३॥

(७५)

धन धन जैनी साधु अबाधित, तत्त्वज्ञानविलासी हो ॥ टेक ॥ दर्शन-बोधमई निजमूरति, जिनकों अपनी भासी हो। त्यागी अन्य समस्त वस्तुमें, अहंबुद्धि दुखदासी हो ॥ १ ॥ जिन अशुभोपयोगकी परनति, सत्तासहित विनाशी हो। होय कदाच शुभोपयोग तो, तहं भी रहत उदासी हो ॥ २ ॥ छेदत जे अनादि दुखदायक, दुबिधि बंधकी फांसी हो। मोह चोभ रहित जिन परनति, विमल मयंककलासी हो ॥ ३ ॥ विषय चाह दव दाह खुजावन, साम्य सुधारस रासी हो। भागचन्द ज्ञानानंदी पद, साधत सदा हुलासी हो ॥ धन० ॥ ४ ॥

(७६) गीतिका।

तुम परम पावन देख जिन, अरि-रज-रहस्य विनाशनं। तुम ज्ञान-दृग-जलबीच त्रिभुवन, कमलवत प्रतिभासनं॥ आनंद निजज अनंत अन्य, अचिंत संतत परनये। बल अतुल कलित स्वभा

बतैं नहिं, खलित गुन अमिलित थये ॥ १ ॥
सब राग रुष हनि परम श्रवन स्वभाव धन निर्मल दशा । इच्छारहित भवहित खिरत, वच सुनत ही भ्रमतम नशा । एकान्त-गहन-सुदहन स्यात्पद, बहन मय निजपर दया । जाके प्रसाद विषाद विन, मुनिजन सपदि शिवपद लहा ॥२॥
भूषन वसन सुमनादि विन तन, ध्यानमय मुद्रा दिपै । नासाग्र नयन सुपलक हलयन, तेज लखि खगगन छिपै ॥ पुनि वदन निरखत प्रशम जल, वरखत सु हरखत उर धरा । बुधि स्वपर परखत पुन्यआकर, कलिकलिल दुरखत जरा ॥ ३ ॥ इत्यादि बहिरंतर असाधारन, सुविभवनिधान जी इन्द्रादिवंद पदारविंद, अनिंद तुम भगवान जी मैं चिर दुखी परचाहतै, तुम धम नियत न उर धरो ॥ परदेवसेव करी बहुत, नहिं काज एक तहां सरो ॥ ४ ॥ अब भागचन्द्र उदय भयो, मैं शरन आयो तुम तने । इक दीजिये वरदान तुम जस, स्वपद दायक बुध भने ॥ परमाहिं इष्ट-अ

निष्ट-मति तजि, मगन निज गुनमें रहौं। दृग ज्ञान-चर संपूर्ण पाऊं, भागचंद न पर चहौं ॥५

(७७)

सहज अबाध समाध धाम तहां, चेतन सुमति खेलैं होरी ॥ टेक ॥ निजगुनचंदनमिश्रित सुरभित, निर्मल कुंकुम रस घोरी। समता पिचकारी अति प्यारी, भर जु चलावत चहुं ओरी ॥ सहज० ॥ १ ॥ शुभ संवर सुअबीर आडंबर, लावत भर भर कर जोरी। उड़त गुलाल निर्जरा निर्भर, दुखदायक भव थिति टोरी ॥ सहज० २ परमानंद मृदंगादिक धुनि, विमल विरागभाव-धोरी ॥ भागचंद दृग-ज्ञान-चरनमय, परिनत अनुभव रंग बोरी ॥ सहज० ॥ ३ ॥

(७८)

सत्ता रंगभूमिमें, नटत ब्रह्म नटराय ॥ टेक रत्नत्रय आभूषण मंडित, शोभा अगम अथाय। सहज सखा निशंकादिक गुन, अतुल समाज वढ़ाय ॥ सत्ता रंग० ॥ १ ॥ समता वीन मधुर-

रस बोलै, ध्यान मृदंग बजाय। नदत निर्जरा नाद अनूपम, नूपुर संवर ल्याय ॥ सत्ता रंग० २ लय निज-रूप-मगनता ल्यावत, नृत्य सुज्ञान कराय। समरस गीतालापन पुनि जो, दुर्लभ जगमह आय ॥ सत्ता रंग० ॥ ३ ॥ भागचन्द आपहि रीझत तहां, परम समाधि लगाय। तहां कृत कृत्य सु होत मोक्षनिधि, अतुल इनामहिं पाय॥

(७६) राग दीपचन्दी धनाश्री।

तू स्वरूप जाने विन दुखी, तेरी शक्ति न हलकी वे ॥ टेक ॥ रागादिक वर्णादिक रचना, सोहै सब पुद्गलकी वे ॥ तू स्व० ॥ १ ॥ अष्ट गुनातम तेरी मूरति, सो केवलमें झलकी वे ॥ तू स्व० ॥२॥ जगी अनादि कालिमा तेरे, दुस्त्यज मोहन मलकी वे ॥ तू स्व० ॥३॥ मोह नसैं भासत है मूरत, पंक नसैं ज्यों जलकी वे॥ तू स्व० ॥४॥ भागचन्द सो मिलत ज्ञान सों, स्फूर्ति अखंड स्वबलकी वे ॥ तू स्व० ॥ ५ ॥

भूधर विलास

(१) राग सोरठ।

लगी लों नाभिनंदनसों। जपत जेम चकोर चकई, चन्द भरताकों ॥ लगी लों० ॥ १ ॥ जाउ तन धन जाउ जोवन, प्रान जाउ न क्यों। एक प्रभुकी भक्ति मेरे, रहो ज्योंकी त्यों ॥ २ ॥ लगी लों० ॥ और देव अनेक सेये, कछु न पायो हों। ज्ञान खोयो गांठिको, धन करत कुवनिज ज्यों ॥ ३ ॥ लगी लों० ॥ पुत्र मित्र कलत्र ये सब सगे अपनी गों। नरककूपउद्धरन श्रीजिन, समझ भूधर यों ॥ ४ ॥ लगी लों० ॥

(२) राग काफी।

सीमंधरस्वामी, मैं चरनका चेरा ॥ टेक ॥ इस संसार असारमें कोई, और न रच्छक मेरा ॥ सीमंधर० ॥ १ ॥ लख चौरासी जोनिमें मैं,

फिरि फिरि कीनौं फेरा । तुम महिमा जानी नहीं प्रभु, देख्या दुःख घनेरा ॥ सीमंधर० ॥२॥ भाग उदयतैं पाइया अब, कीजे नाथ निवेरा । वेगि दया करि दीजिये मुझे, अविचलथान बसेरा ॥ सीमंधर० ॥ ३ ॥ नाम लिये अघ ना रहै ज्यों, ऊगें भान अँधेरा । भूधर चिन्ता क्या रही ऐसा समरथ साहिब तेरा ॥ सीमंधर० ॥ ४ ॥

(३) राग सोरठ ।

वा पुरके वारणैं जाऊं ॥ टेक ॥ जम्बूद्वीप विदेहमें, पूरव दिश सोहै हो । पुंडरीकिनी नाम है, नर सुर मन मोहै हो ॥ वा पुर० ॥ १ ॥ सीमंधर शिवके धनी, जहँ आप विराजै हो । बारह गण विच पीठपै, शोभानिधि छाजे हो ॥वा पुर० ॥२॥ तीन छत्र माथैं दिपैं, वर चामर वीजै हो । कोटिक रतिपति रूपपै, न्यौछावर कीजै हो ॥वा पुर० ॥ ३ ॥ निरखत विरख अशोकको, शोकावलि भाजै हो । वानी वरसै अमृत सी, जलधर ज्यों गाजै हो ॥ वा पुर० ॥ ४ ॥ वरसैं सुमन सुहावनें,

सुरदुंदभि गाजै हो। प्रभु तन तेज समूहसौं, ससि सूरज लाजै हो ॥ वा पुर० ॥ ५ ॥ समोसरन विधि वरनतैं, बुधि वरन न पावै हो। सब लोकोत्तर लच्छगी, देखैं बनि आवै हो ॥ वापुर० ॥ ६ ॥ सुरनर मिलि आवैं सदा, सेवा अनुरागी हो। प्रकट निहारैं नाथकों, धनि वे बड़भागी हो ॥ वा पुर० ॥ ७ ॥ भूधर विधिसौं भावसौं, दीनी त्रय फेरी हो। जैवन्ती वरतो सदा, नगरी जिनकेरी हो ॥ वा पुर० ॥ ८ ॥

(४) राग सोरठ।

अज्ञानी पाप धतूरा न बोय ॥ टेक ॥ फल चाखनकी बार भरै दृग, मर है मूरख रोय ॥ अज्ञानी० ॥ १ ॥ किंचित् विषयनिके सुख कारण दुर्लभ देह न खोय। ऐसा अवसर फिर न मिलैगा, इस नींदड़ी न सोय ॥ अज्ञानी० ॥ २ ॥ इस विरियांमें धर्म-कल्प-तरु, सींचत स्याने लोय। तू विष बोवन लागत तो सम, और अभागा कोय ॥ अज्ञानी० ॥ ३ ॥ जे जगमें दुखदायक

बेरस, इसहीके फल सोय । यों मन भूधर जानि-
कै भाई, फिर क्यों भोंदू होय ॥ अज्ञानी० ॥४॥

(५) राग सोरठ ।

मेरे मन सूवा, जिनपद पींजरे वसि, यार
लाव न बार रे ॥ टेक ॥ संसारसें वलवृच्छ सेवत,
गयो काल अपार रे । विषय फल तिस तोड़ि
चाखे, कहा देख्यौ सार रे ॥ मेरे मन० ॥ १ ॥
तू क्यों निचिन्तो सदा तोकों, तकत काल मँजार
रे । दावै अचानक आन तब तुझे, कौन लेय
उबार रे ॥ मेरे मन० ॥ २ ॥ तू फँस्यो कर्म कु-
फन्द भाई, छुटै कौन प्रकार रे । तैं मोह-पंछी-
वधक-विद्या, लखी नाहिं गँवार रे ॥ मेरे मन० ॥
॥ ३ ॥ है अजौं एक उपाय भूधर, छुटै जो नर
धार रे । रटि नाम राजुलरमनको, पशुबंध छोड़न-
हार रे ॥ मेरे मन० ॥ ४ ॥

(६) राग सोरठ ।

भलो चेत्यो वीर नर तू, भलो चेत्यो वीर ॥
टेक ॥ समुझि प्रभुके शरण आयो, मिल्यो ज्ञान

वजीर ॥ भलो० ॥१॥ जगतमें यह जनम हीरा, फिर कहां थो धीर। भली वार विचार छांड़्यो, कुमति कामिनि सीर ॥ भलो ॥ २ ॥ धन्य धन्य दयाल श्रीगुरु सुमिरि गुणगंभीर। नरक परतैं राखि लीनों, बहुत कीनी भीर ॥ भलो० ॥ ३ ॥ भक्ति नौका लही भागनि, कितक भवदधिनीर। ढील अब क्यों करत भूधर, पहुंच पैली तीर ॥४॥

(७) राग सोरठ।

सुन ज्ञानी प्राणी, श्रीगुरु सीख सयानी ॥ टेक ॥ नरभव पाय विषय मति सेवो, ये दुरगति अगवानी ॥ सुन० ॥१॥ यह भव कुल यह तेरी महिमा, फिर समझी जिनवानी। इस अवसरमैं यह चपलाई, कौन समझ उर आनी ॥ सुन० ॥ २ ॥ चंदन काठ-कनकके भाजन, भरि गंगाका पानी। तिल खलि रांधत मंदमती जो, तुझ क्या रीस बिरानी ॥ सुन० ॥३॥ भूधर जो कथनी सो करनी, यह बुधि है सुखदानी। ज्यों मशालची आप न देखै, सो मति करै कहानी ॥ सुनि० ॥ ४ ॥

(८) राग सोरठ ।

सुनि ठगनी माया, तैं सब जग ठग खाया ॥टेक॥ टुक विश्वास किया जिन तेरा, सो मूरख पिछताया ॥ सुनि० ॥ १ ॥ आपा तनक दिखाय बीज ज्यों, मूढमती ललचाया । करि मद अंध धर्म हर लीनौं, अंत नरक पहुचाया ॥सुनि०॥२॥ केते कंथ किये तैं कुलटा, तो भी मन न अघाया । किसहीसौं नहिं प्रीति निबाही, वह तजि और लुभाया ॥ सुनि० ॥ ३ ॥ भूधर छलत फिरै यह सबकों, भौंदू करि जग पाया । जो इस ठगनीकों ठग बैठे, मैं तिसको सिर नाया ॥ सुनि० ॥४॥

(६)

वे कोई अजब तमासा, देख्या बीच जहान वे, जोर तमासा सुपनेकासा ॥ टेक ॥ एकौंके घर मंगल गावैं, पूगी मनकी आसा । एक वियोग भरे बहु रोवैं, भरि भरि नैन निरासा ॥ वे कोई० ॥ १ ॥ तेज तुरंगनिपै चढ़ि चलते, पहिरैं मल-मल खासा । रंक भये नागे अति डोलैं, ना कोइ

देय दिलासा ॥ वे कोई० ॥२॥ तरकैं राजतखत पर बैठा, था खुशवक्त खुलासा। ठीक दुपहरी मुद्दत आई, जंगल कीना वासा ॥ वेकोई०॥ ३ ॥ तन धन अथिर निहायत जगमें, पानीमाहिं पतासा। भूधर इनका गरब करैं जे, धिक तिनका जनमासा ॥ वे कोई० ॥ ४ ॥

(१०) राग ख्याल।

जगमें जीवन थोरा, रे अज्ञानी जागि ॥ टेक जनम ताड़ तरुतैं पढ़ै, फल संसारी जीव। मौत महीमैं आय हैं, और न ठौर सदीव ॥ जगमें० ॥ १ ॥ गिर—सिर दिवला जोइया, चहुंदिशि वाजै पौन। वलत अचंभा मानिया, बुझत अ-चंभा कौन ॥ जगमैं० ॥ २ ॥ जो छिन जाय सो आयुमैं, निशि दिन ढूकै काक। बांधि सकै तो है भला, पानी पहिली पाल ॥ जगमें० ॥३॥ मनुष देह दुर्लभ्य है, मति चूकै यह दाव। भूधर राजुल-कंतकी, शरण सिताबी आव ॥ जगमें० ॥ ४ ॥

(११) राग ख्याल।

गरब नहिं कीजै रे, ऐ नर निपट गँवार ॥

टेक ॥ झूठी काया झूठी माया, छाया ज्यों लखि लीजै रे ॥ गरव० ॥ १ ॥ कै छिन सांझ सुहागरु जोबन, कै दिन जगमें जीजै रे ॥ गरव० ॥ २ ॥ बेगा चेत विलम्ब तजो नर, बंध बढ़ै थिति छीजै रे ॥ गरव० ॥ ३ ॥ भूधर पलपल हो है भारो, ज्यों ज्यों कमरी भींजै रे ॥ गरव० ॥ ४ ॥

(१२) राग ख्याल।

थांकी कथनी म्हांनैं प्यारी लगै जी, प्यारी लगै म्हांरी भूल भगै जी ॥ टेक ॥ तुमहित हांक विना हो श्रीगुरु, सूतो जियरो कांई जगैं जी ॥ थांकी० ॥ १ ॥ मोहनिधूलि मेलि म्हारे मांथै, तीन रतन म्हांरा मोह ठगै जी। तुम पद ढोकत सीस झरी रज, अब ठगको कर नाहिं वगै जी ॥ थांकी० ॥ २ ॥ टूट्यो चिर मिथ्यात महाज्वर, भागां मिल गया वैद मगै जी। अंतर अरुचि मिटी मम आतम, अब अपने निजदर्व पगै जी ॥ थांकी० ॥ ३ ॥ भव वन भ्रमत बढ़ी तिसना तिस, क्योंहि बुझै नहिं हियरा दगै जी

भूधर गुरुउपदेशामृतरस शान्तमई आनन्द उमगै जी ॥ थांकी० ॥ ४ ॥

(१३) राग ख्याल।

मा विलंब न लाव पठाव तहाँ री, जहँ जगपति पिय प्यारो ॥ टेक ॥ और न मोहि सुहाय कछू अब, दीसै जगत अंधारो री ॥ मा विलंब० ॥ १ ॥ मैं श्रीनेमिदिवाकरको कब, देखों वदन उजारो। बिन देखैं मुरझाय रह्यो है, उर अरविंद हमारो री ! मा विलंब० ॥ २ ॥ तन छाया ज्यों संग रहौंगी, वे छांड़हिं तो छांरो। बिन अपराध दंड मोहि दीनो, कहा चलै मेरो चारो ॥ मा विलम्ब० ॥ ३ ॥ इहि विधि रागउदय राजुलनैं, सह्यो विरह दुख भारो। पीछैं ज्ञानभान बल विनश्यो, मोह महातम कारो री ॥ मा विलंब० ॥ ४ ॥ पियके पैंड़ें पैंड़ो कीनों, देखि अथिर जग सारो। भूधरके प्रभु नेमि पियासौं, पाल्यौ नेह करारो री ॥ मा विलंब० ॥ ५ ॥

(१४) राग ख्याल।

देख्यो री ! कहीं नेमिकुमार ॥टेक॥ नैंननि

प्यारो नाथ हमारो, प्रानजीवन प्रानन आधार ॥ देख्यो० ॥ १ ॥ पीव वियोग विथा वहु पीरी, पीरी भई हलदो उनहार । होउं हरी तबही जब भेटौं, श्यामवरन सुंदर भरतार ॥ देख्यो० ॥२॥ विरह नदी असराल बहै उर, बूड़त हौं वामैं निरधार । भूधर प्रभु पिय खेवटिया विन, समरथ कौन उतारनहार ॥ देख्यो० ॥ ३ ॥

(१५) राग पंचम ।

जिनराज ना विसारो, मति जन्म वादि हारो ॥टेक॥ नर भौ आसान नाहिं, देखो सोच समझ वारो ॥ जिनराज० ॥ १ ॥ सुत मात तात तरुनी, इनसौं ममत निवारो । सवही सगे गरजके दुखसीर नहिं निहारो ॥ जिनराज० ॥२॥ जे खायं लाभ सब मिलि, दुर्गतमैं तुम सिधारो । नटका कुटंव जैसा, यह खेल यों विचारो ॥ जिनराज० ॥३॥ नाहक पराये काजैं, आपा नरकमैं पारो । भूधर न भूल जगमैं, जाहिर दगा है यारो ॥ जिनराज० ॥ ४ ॥

(१६) राग नट ।

जिनराज चरन मन मति बिसरै ॥टेक॥ को जानैं किहिंवार कालकी, धार अचानक आनि परै ॥ जिनराज० ॥ १ ॥ देखत दुख भजि जाहिं दशौं दिश, पूजत पातकपुंज गिरै । इस संसार क्षारसागरसौं, और न कोई पार करै ॥ जिनराज० ॥ २ ॥ इक चित ध्यावत वांछित पावत, आवत मंगल विघन टरै । मोहनि धूलि परी मांथे चिर, सिर नावत ततकाल झरै ॥ जिनराज० ॥ ३ ॥ तबलौं भजन संवार सयानैं, जबलौं कफ नहिं कंठ अरै । अगनि प्रवेश भयो घर भूधर, खोदत कूप न काज सरै ॥ जिनराज० ॥ ४ ॥

(१७) राग सारंग ।

भवि देखि छबी भगवानकी ॥ टेक ॥ सुंदर सहज सोम आनँदमय, दाता परम कल्यानकी ॥ भवि० ॥ १ ॥ नासादृष्टि मुदित मुखवारिज, सीमा सब उपमानकी । अंग अडोल अचल आसन दिढ़, वही दशा निज ध्यानकी ॥२॥ इस

जोगासन जोगरीतिसौं, सिद्ध भई शिवथानकी। ऐसें प्रगट दिखावै मारग, मुद्रा धात पखानकी॥ भवि०॥ ३॥ जिस देखें देखन अभिलाषा, रहत न रंचक आनकी। तृपत होत भूधर जो अब ये, अंजुलि अम्रतपानकी॥ भवि०॥ ४॥

(१८) राग मलार।

अब मेरैं समकित सावन आयो॥ टेक॥ बीति कुरीति मिथ्यामति ग्रीषम, पावस सहज सुहायो॥ अब मेरैं०॥१॥ अनुभव दामिनि दमकन लागी, सुरति घटा घन छायो। बोलै विमल विवेक पपीहा, सुमति सुहागिनि भायो॥ अब मेरैं०॥ २॥ गुरुधुनि गरज सुनत सुख उपजै, मोर सुमन विहसायो। साधक भाव अँकूर उठे बहु, जित तित हरष सवायो॥ अब मेरैं०॥३॥ भूल धूल कहिं भूल न सूझत, समरस जल झर लायो। भूधर को निकसै अब बाहिर, निज निरचूघर पायो॥ अब मेरैं०॥ ४॥

(१९) राग सोरठ।

भगवन्तभजन क्यों भूला रे॥ टेक॥ यह

संसार रैनका सुपना, तन धन वारि-बबूला रे ॥ भगवन्त० ॥ १ ॥ इस जोवनका कौन भरोसा, पावकमें तृणपूला रे ।। काल कुदार लियें सिर ठाड़ा, क्या समझै मन फूला रे ।॥ भगवन्त० ॥ २ ॥ स्वारथ साधैं पाँच पाँव तू, परमारथकों लूला रे ।। कहु कैसें सुख पैहै प्राणी, काम करै दुखमूला रे ॥ भगवन्त०॥३॥ मोह पिशाच छल्यो मति मारै, निज कर कंध बसूला रे। भज श्रीराजमतीवर भूधर, दो दुरमति सिर धूला रे ॥४॥

(२०) राग—विहागरो।

नेमि विना न रहै मेरो जियरा ॥ टेक ॥ हेर री हेली तपत उर कैसो, लावत क्यों निज हाथ न नियरा ॥ नेमि विना० ॥ १ ॥ करि करि दूर कपूर कमल दल, लगत करूर कलाधर सियरा ॥नेमि विना०॥२॥ भूधरके प्रभु नेमि पिया विन, शीतल होय न राजुल हियरा ॥नेमि विना०॥३॥

(२१) राग—ख्याल।

मन मूरख पंथी, उस मारग मति जाय रे

॥टेक॥ कामिनि तन कांतार जहां है, कुच परवत दुखदाय रे ॥ मन मूरख० ॥ १ ॥ काम किरात बसै तिह थानक, सरवस लेत छिनाय रे। खाय खता कीचकसे बैठे, अरु रावनसे राय रे ॥ मन मूरख० ॥ २ ॥ और अनेक लुटे इस पैंड़े, वरनैं कौन बढ़ाय रे। वरजत हों वरज्यौ रह भाई, जानि दगा मति खाय रे ॥ मनु मूरख० ॥ ३ ॥ सुगुरु दयाल दया करि भूधर, सीख कहत समझाय रे। आगैं जो भावै करि सोई, दीनी वात जनाय रे ॥ मन मूरख० ॥ ४ ॥

(२२) राग—विलावल।

सब विधि करन उतावला, सुमरनकौं सीरा ॥ टेक ॥ सुख चाहै संसारमैं, यों होय न नीरा ॥ सब विधि० ॥ १ ॥ जैसे कर्म कमाव है, सो ही फल वीरा ॥ आम न लागै आकके, नग होय न हीरा ॥ सब विधि० ॥२॥ जैसा विषयनिकों चहै न रहै छिन धीरा। त्यों भूधर प्रभुको जपै पहुंचै भव तीरा ॥ सब विधि० ॥ ३ ॥

(२३) राग विलावल।

रटि रसना मेरी ऋषभ जिनन्द, सुर नर जच्छ चकोरन चन्द ॥टेक॥ नामी नाभि नृपतिके बाल मरुदेवीके कुँवर कृपाल ॥ रटि० ॥ १ ॥ पूज्य प्रजापति पुरुष पुरान, केवल किरन धरैं जगभान ॥ रटि० ॥ २ ॥ नरकनिवारन विरद विख्यात, तारन तरन जगतके तात ॥ रटि० ॥ ३ ॥ भूधर भजन किये निरवाह, श्रीपद-पदम भँवर हो जाह ॥ रटि० ॥ ४ ॥

(२४) राग गौरी।

मेरी जीभ आठौं जाम, जपि जपि ऋषभ-जिनिंदजीका नाम ॥टेक॥ नगर अजुध्या उत्तम ठाम, जनमैं नाभि नृपतिके धाम ॥ मेरी० ॥१॥ सहस अठोत्तर अति अभिराम, लसत सुलच्छन लाजत काम ॥ मेरी० ॥ २ ॥ करि थुति गान थके हरि राम, गनि न सके गणधर गुन ग्राम ॥ मेरी० ॥ ३ ॥ भूधर सार भजन परिनाम, अर सब खेल खेलके खांम (?) ॥ मेरी० ॥ ४ ॥

(२५) राग धमाल ।

देखे देखे जगतके देव, राग रिससौं भरे ॥ टेक ॥ काहूके संग कामिनि कोऊ, आयुधवान खरे ॥ देखे० ॥ १ ॥ अपने औगुन आपही हो, प्रकट करैं उघरे । तऊ अबूझ न बूझहिं देखो, जन मृग भोर परे ॥ देखे० ॥२॥ आप भिखारी ह्वै किनही हो, काके दलिद हरे । चढ़ि पाथरकी नावपै कोई, सुनिये नाहिं तरे ॥ देखे० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त जा देवमें औ, ठारह दोष टरे । भूधर ता प्रति भावसौं दोऊ, कर निज सीस धरे ॥४॥

(२६)

देखो गरवगहेली री हेली ! जादोंपतिकी नारी ॥ टेक ॥ कहां नेमि नायक निज मुखसौं, टहल कहै बड़भागी । तहां गुमान कियो मति-हीनी, सुनि उर दौसी लागी ॥ देखो० ॥ १ ॥ जाकी चरण धूलिको तरसै, इन्द्रादिक अनुरागी ता प्रभुको तन—वसन न पीड़ै, हा ! हा ! परम अभागी ॥ देखो० ॥२॥ कोटि जनम अघभंजन

जाके, नामतनो बलि जइये। श्रीहरिवंशतिलक तिस सेवा, भाग्य बिना क्यों पइये॥ देखो० ॥ ३ धनि वह देश धन्य वह धरनी, जगमें तीरथ सोई। भूधरके प्रभु नेमि नवल निज, चरन धरै जहां दोई॥ देखो० ॥ ४ ॥

(२७) राग—सोरठ।

चित! चेतनकी यह विरियां रे॥ टेक॥ उत्तम जनम सुनत तरुनापौ, सुजत बेल फल फरियां रे॥ चित० ॥१॥ लहि सत संगतिसौं सब समझी, करनी खोटी खरियां रे। सुहित संभाशिथिलता तजिकै, जाहैं बेली झरियां रे॥ चित० ॥ २ ॥ दल बल चहल महल रूपेका, अर कंचनकी कलियां रे। ऐसी विभव बढ़ीकै बाढ़ है, तेरी गरज क्या सरियां रे॥ चित० ॥ ३ ॥ खोय न वीर विषय खल साटैं, ये कोरनकी घरियां रे। तोरि न तनक तगाहित भूधर, मुकताफलकी लरियां रे॥ चित० ॥ ४ ॥

(२८)

ऐसी समझके सिर धूल॥ ऐसी० ॥ टेक॥

धरम उपजन हेत हिंसा, आचरैं अघमूल ॥ऐसो० ॥ १ ॥ छके मत-मद पान पीके रहे मनमें फूल। आम चाखन चहैं भोंदू, बोय पेड़ बबूल ॥ऐसो० ॥२॥ देव रागी लालची गुरु, सेय सुखहित भूल। धर्म नगकी परख नाहीं, भ्रम हिंडोले झूल ॥ऐ० ॥ ३ ॥ लाभ कारन रतन विराजै, परखको नहिं सूल। करत इहि विधि वणिज भूधर, विनस जै है मूल ॥ ऐसो० ॥ ४ ॥

(२६) राग बंगाला।

जगमें श्रद्धानी जीव जीवनमुकत हैंगे ॥टेक देव गुरु सांचे मानैं सांचो धर्म हिये आनैं, ग्रंथ ते ही सांचे जानैं, जे जिन उकत हैंगे ॥ जगमें ॥ १ ॥ जीवनकी दया पालैं, झूठ तजि चोरी टाले, परनारी भालैं नैंन जिनके लुकत हैंगे ॥ जगमैं ॥ २ ॥ जीयमैं सन्तोष धारैं हियैं समता विचारैं, आगैंको न बंध पारैं, पाछैंसौं चुकत हैंगे ॥ जगमें ॥ वाहिज क्रिया अराधैं, अन्तर सरूप साधैं, भूधर ते मुक्त लाधैं, कहूं न रुकत हैंगे ॥४॥

(३०) राग बंगला।

आया रे बुढ़ापो मानी सुधि बुधि बिसरानी ॥ टेक ॥ श्रवनकी शक्ति घटी, चाल चालै अटपटी, देह लटी भूख घटी, लोचन झरत पानी ॥ आया रे० ॥ १ ॥ दांतनकी पंक्ति टूटी, हाड़नकी संधि छूटी, कायाकी नगरि लूटी जात नहिं पहिचानी ॥आया रे० ॥२॥ बालोंने वरन फेरा, रोगने शरीर घेरा, पुत्रहू न आवे नेरा, औरोंको कहा कहानी ॥ आया रे० ॥ ३ ॥ भूधर समुझि अब, स्वहित करैगो कब, यह गति ह्वै है जब, तब पिछतै है प्रानी ॥ आया रे० ॥ ४ ॥

(३१) राग सोरठ।

अन्तर उज्जल करना रे भाई ! ॥टेक॥ कपट कृपान तजै नहिं तबलौ, करनी काज न सरना रे ॥ अन्तर० ॥ १ ॥ जप तप तीरथ जज्ञ व्रतादिक आगमअर्थ उचरना रे। विषय कषाय कीच नहिं धोयो, यों ही पचि पचि मरना रे ॥अन्तर० ॥२॥ बाहिर भेष क्रिया उर शुचिसों कीये पार उतरना

रे । नाहीं है सब लोक रंजना, ऐसे वेदन वरना रे ॥ अन्तर० ॥ ३ ॥ कामादिक मनसौं मन मैला भजन किये क्या तिरना रे । भूधर नीलवसनपर कैसैं, केसर रंग उछरना रे ॥ अन्तर० ॥ ४ ॥

(३२) राग सोरठ ।

वीरा ! थारी वान बुरी परी रे, वरज्यो मानत नाहिं ॥ टेक ॥ विषय विनोद महा बुरे रे, दुख दाता सरवंग । तू हटसौं ऐसैं रमै रे, दीवे पड़त पतंग ॥ वीरा० ॥ ये सुख है दिन दोयके रे, फिर दुखकी सन्तान । करै कुहाड़ी लेइकै रे, मति मारै पग जानि ॥ वीरा० ॥ २ ॥ तनक न संकट सहि सकै रे ! छिनमें होय अधीर । नरक विपति बहु दोहली रं, कैसे भरि है वीर ॥ वीरा० ॥३॥ भव सुपना हो जायगा रे,करनी रहेगी निदान। भूधर फिर पछतायगारे, अबहो समुझि अजान ॥ ४ ॥

(३३) राग काफी ।

मन हंस ! हमारी लै शिक्षा हितकारी ॥टेक श्रीभगवानचरन पिंजरे वसि, तजि विषयनिकी

थारी ॥ मन० ॥ १ ॥ कुमति कागलीसौं मति राचो, ना वह जात तिहारी। कीजै प्रीत सुमति हंसीसौं, बुध हंसनकी प्यारी ॥ मन० ॥ २ ॥ काहेको सेवत भव झीलर, दुखजलपूरित खारी। निज बल पंख पसारि उड़ो किन, हो शिव सरवरचारी ॥ मन० ॥ ३ ॥ गुरुके वचन विमल मोती चुन, क्यों निज वान विसारी। ह्वै है सुखी सीख सुधि राखें, भूधर भूलैं ख्वारी ॥ मन० ४

(३४) राग ख्याल कान्हड़ी।

एजी मोहि तारिये शान्तिजिनंद ॥ टेक ॥ तारिये तारिये अधम उधारिये, तुम करुनाके कंद ॥ एजी० ॥ १ ॥ हथनापुर जनमैं जग जानैं बिश्वसेननृपनन्द ॥ एजी० ॥ २॥ धनि वह माता एरादेवी, जिन जाये जगचंद ॥ एजी० ॥ ॥ ३॥ भूधर विनवै दूर करो प्रभु, सेवकके भव द्वन्द ॥ एजी० ॥ ४ ॥

(३५) राग ख्याल।

और सब थोथी बातैं, भज ले श्रीभगवान ॥

टेक ॥ प्रभु विन पालक कोई न तेरा स्वारथमीत जहान ॥ और० ॥ १ ॥ परवनिता जननी सम गिननी, परधन जान पखान। इन अमलों परमेसुर राजी भाषैं वेद पुरान ॥ और० ॥ २ ॥ जिस उर अन्तर बसत निरंतर, नारी औगुन खान। तहां कहां साहिबका बासा, दो खांड़े इक म्यान ॥ और० ॥ ३ ॥ यह मत सतगुरुका उर धरना, करना कहिंन गुमान। भूधर भजन न पलक विसरना, मरना मित्र निदान ॥ और० ॥ ४ ॥

(३६) राग प्रभाती ।

अजित जिन विनती हमारी मान जी, तुम लागे मेरे प्रान जी ॥ टेक॥ तुम त्रिभुवनमें कलप तरोवर, आस भरो भगवानजी ॥ अजित० ॥१॥ वादि अनादि गयो भव भ्रमतै, भयो बहुत कुल कानजी। भाग संजोग मिले अब दीजे, मनवांछित वरदान जी ॥ अजित० ॥२॥ ना हम मांगैं हाथी घोड़ा, ना कछु संपति आनजी। भूधरके उर वसो जगतगुरु, जबलौं पद निरवानजी ॥३॥

(३७) राग धनासरी।

सो मंत सांचो है मन मेरे ॥ टेक॥ जो अनादि सर्वज्ञप्ररूपित, रागादिक विन जे रे ॥ सो मत० ॥ १ ॥ पुरुष प्रमान प्रमान वचन तिस, कल्पित जान अने रे। राग दोष दूषित तिन वायक, सांचे हैं हित तेरे ॥ सो मत० ॥२ ॥ देव अदोष धर्म हिंसा बिन लोभ बिना गुरु वे रे। आदि अन्त अविरोधी आगम, चार रतन जहँ ये रे ॥ सो मत० ॥ ३ ॥ जगत भर्यो पाखंड परख विन, खाइ खता बहुतेरे। भूधर करि निज सुबुधि कसौटी धर्म कनक कसि ले रे ॥ सो मत० ॥४॥

(३८)

मेरे चारौं शरन सहाई ॥टेक॥ जैसें जलधि परत वायसकौं वोहिथ एक उपाई ॥ मेरे० ॥१॥ प्रथम शरन अरहन्त चरनकी, सुरनर पूजत पाई दुतिय शरन श्रीसिद्धनकेरी, लोक-तिलक-पुर राई ॥ मेरे० ॥२॥ तीजे सरन सर्व साधुनिकी, नगन दिगम्बर-काई। चौथे धर्म अहिंसा रूपो, सुरग

मुकति सुखदाई ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ दुरगति परत सुजन परिजनपै, जीव न राख्यो जाई । भूधर सत्य भरोसो इनको, ये ही लेहिँ बचाई ॥ ४ ॥

(३९) राग सारंग ।

जपि माला जिनवर नामकी ॥टेक॥ भजन सुधारससों नहिं धोई, सो रसना किस कामकी ॥ जपि० ॥ १ ॥ सुमरन सार और सब मिथ्या, पटतर धूंवा धामकी । विषम कमान समान विषय सुख, काय कोथली चामकी ॥ जपि० ॥२॥ जैसे चित्रनागके मांथै, थिर मूरति चित्रामकी । चित आरूढ़ करो प्रभु ऐसें, खोय गुंडी परिनामकी ॥ जपि० ॥ ३ ॥ कर्म वैरि अहनिशि छल जोवैं, सुधि न परत पल जामकी । भूधर कैसैं वनत विसारैं, रटना पूरन रामकी ॥ जपि० ॥४॥

(४०) राग काफी ।

प्रभु गुन गाय रे, यह औसर फेर न पाय रे ॥ टेक ॥ मानुष भव जोग दुहेला, दुर्लभ सतसंगति मेला । सब बात भली बन आई, अरहन्त भजौ

रे भाई ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ पहलैं चित वीर संभारो कामादिक मैल उतारो। फिर प्रीति फिटकरी दीजे, तब सुमरन रंग रंगीजे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ धन जोर भरा जो कूवा, परवार बढ़ैं क्या हूवा। हाथी चढ़ि क्या कर लीया, प्रभु नाम विना धिक जीया ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ यह शिक्षा है व्यवहारी, निहचैकी साधनहारी। भूधर पैड़ी पग धरिये, तब चढनेको चित करिये ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(४१) राग कल्याण।

सुनि सुजान ! पांचों रिपु वश करि, सुहित करन असमर्थ अवश करि ॥ टेक ॥ जैसैं जड़ खखारको कीड़ा, सुहित सम्हाल सकैं नहिं फंस करि ॥सुनि०॥१॥ पांचनको मुखिया मन चंचल पहले ताहि पकर रस(?) कस करि। समझ देखि नायकके जीतै, जै है भाजि सहज सब लसकरि सुनि० ॥ २ ॥ इंद्रियलीन जनम सब खोयो, बाकी चल्यो जात है खस करि। भूधर सीख मान सतगुरुकी, इनसों प्रीति तोरि अब वश करि ॥ सुनि० ॥ ३ ॥

(४२) राग ख्याल ।

अब नित नेमि नाम भजौ ॥ टेक ॥ सच्चा साहिब यह निज जानौ,और अदेव तजौ ॥अब० ॥ १ ॥ चंचल चित्त चरन थिर राखो, विषयनतैं वरजौ ॥ अब० ॥ २ ॥ आननतैं गुन गाय निरन्तर, पानन पाँय जजौ ॥ अब० ॥३ ॥ भूधर जो भवसागर तिरना, भक्ति जहाज सजौ ॥ ४ ॥

(४३) राग ख्याल बरवा ।

"देखनेको आई लाल मैं तो तेरे देखनको आई" यह चाल ।

म्हें तो थाकी आज महिमा जानी ॥ टेक अब लों नहिं उर आनी ॥ म्हेंतो० ॥१॥ काहेंको भव वनमें भ्रमते, क्यों होते दुखदानी ॥ म्हेंतो० ॥ २ ॥ नामप्रताप तिरे अंजनसे, कीचकसे अभिमानी ॥ म्हेंतो० ॥ ३ ॥ ऐसी साख बहुत सुनियत है, जैनपुराण बखानी ॥ म्हें तो० ॥४॥ भूधरकों सेवा वर दीजे, मैं जांचक तुम दानी ॥

(४४) राग विहाग ।

जगत जन जूवा हारि चले ॥ टेक ॥ काम कुटिल संग बाजी माँड़ी, उन करि कपट छले ।

जगत० ॥ १ ॥ चार कषायमयी जहं चौपरि, पांसे जोग रले। इत सरवस उत कामिनी कौंड़ी, इह विधि झटक चले। जगत० ॥ २ ॥ कूर खिलार विचार न कीन्हों, ह्वै है ख्वार भले। विना विवेक मनोरथ काके, भूधर सफल फले ॥३

(४५) राग विहाग।

तहां लै चल री! जहां जादौपति प्यारो ॥ टेक ॥ नेमि निशाकर विन यह चन्दा, तन मन दहत सकल री। तहां० ॥ १ ॥ किरन किधौं नाविक-शर-तति कै, ज्यों पावककी झलरी। तारे हैं कि अंगारे सजनी, रजनी राकसदल री। तहां० ॥२॥ इह विधि राजुल राजकुमारी, विरह तपी वेकल री। भूधर धन्न शियासुत बादर, वरसायो समजल री। तहां० ॥ ३ ॥

(४६) राग ख्याल।

अरे! हां चेतो रे भाई ॥ टेक ॥ मानुष देह लही दुलही, सुघरी उघरी सतसंगति पाई। अरे हां० ॥ १ ॥ जे करनी वरनी करनी नहिं,

ते समझी करनी समझाई । अरे हां ॥ २ ॥ यों शुभ थान जग्यो उर ज्ञान, विषैविषपान तृषा न बुझाई । अरे हां० ॥ ३ ॥ पारस पाय सुधारस भूधर भीखकेमाहिं सुलाज न आई । अरे हां ॥४

(४७)

ऐसो श्रावक कुल तुम पाय, वृथा क्यों खोवत हो ॥ टेक ॥ कठिन कठिनकर नरभव पाई, तुम लेखी आसान । धर्म विसारि विषयमें राचौ, मानी न गुरुकी आन ॥ वृथा० ॥ १ ॥ चक्री एक मतंगज पायो, तापर ईंधन ढोयो । विना विवेक विना मतिहीको, पाय सुधा पग धोयो ॥ वृथा० ॥ २ ॥ काहू शठ चिन्तामणि पायो, मरम न जानो ताय । बायस देखि उदधिमें फैंक्यो, फिर पीछे पछताय ॥ वृथा० ॥ ३ ॥ सात विसन आठों मद त्यागो, करुना चित्त विचारो । तीन रतन हिरदैमें धारो, आवागमन निवारो ॥ वृथा० ॥ ४ ॥ भूधरदास कहत भविजनसों, चेतन अब तो सम्हारो । प्रभुको नाम तरन तारन जपि, कर्मफन्द निरवारो ॥ वृथा० ॥ ५ ॥

(४८) राग ख्याल।

नैननिको वान परी, दरसनकी ॥ टेक ॥ जिनमुखचन्द चकोर चित्त मुझ, ऐसी प्रीति करी ॥ नैन० ॥ १ ॥ और अदेवनके चितवनको अब चित चाह टरी। ज्यों सब धूलि दबै दिशि दिशिकी, लागत मेघझरी ॥ नैन० ॥ २ ॥ छबी समाय रही लोचनमें, विसरत नाहिं घरी। भूधर कह यह टेव रहो थिर, जनम जनम हमरी ॥ नैन० ॥ ३ ॥

(४९) करुणाष्टक।

करुणा ल्यो जिनराज हमारी, करुणा ल्यो ॥टेक॥ अहो जगतगुरु जगपति, परमानंदनिधान किंकरपर कीजे दया, दीजे अविचल थान ॥ हमारी० ॥ १ ॥ भवदुखसों भयभीत हौं, शिवपद वांछा सार। करो दया मुझ दीनपै, भवबंधन निरवार ॥ हमारी० ॥ २ ॥ पस्यो विषम भवकूपमें, हे प्रभु! काढ़ो मोहि। पतितउधारण हो तुम्हीं, फिर फिर विनऊं तोहि ॥ हमारी० ॥ ३ ॥ तुम

प्रभु परमदयाल हो, अशरणके आधार । मोहि दुष्ट दुख देत हैं, तुमसों करहुं पुकार ॥ हमारी० ॥४॥ दुःखित देखि दया करै, गांवपती इक होय तुम त्रिभुवनपति कर्मतैं, क्यों न छुड़ावो मोय ॥ हमारी० ॥ ५ ॥ भव-आताप तबै भुजैं, जब राखों उर धोय । दया-सुधा करि सीयरा,तुम पदपंकज दोय ॥ हमारी० ॥ ६ ॥ येहि एक मुझ वीनती, स्वामी ! हर संसार । बहुत धज्यो हूं त्रासतैं, विलख्यो वारंवार ॥ हमारी० ॥७॥ पदमनंदिको अर्थ लै, अरज करी हितकाज । शरणागत भूधरतणी, राखौ जगपति लाज ॥ हमारी० ॥ ८ ॥

(५०) गजल ।

रखता नहीं तनकी खबर, अनहद बाजा बाजिया । घटबीच मंडल बाजता, बाहिर सुना तो क्या हुआ ॥ १ ॥ जोगी तो जंगम सेवड़ा, बहु लाल कपड़े पहिरता । उस रंगसे महरम नहीं, कपड़े रंगे तो क्या हुआ ॥ २ ॥ काजी किताबें खोलता, नसीहत बतावै औरको । अपना अमल

कीन्हा नहीं, कामिल हुआ तो क्या हुआ ॥ ३ ॥ पोथीके पाना बांचता, घरघर कथा कहता फिरै। निज ब्रह्मको चीन्हा नहीं, ब्राह्मण हुआ तो क्या हुआ ॥ ४ ॥ गांजारु भांग अफीम है, दारू शराबा पोशता। प्याला न पीया प्रेमका, अमली हुआ तो क्या हुआ ॥ ५ ॥ शतरंज चोपर गंजफा, बहु खेल खैलैं हैं सभी। बाजी न खेली प्रेमकी, ज्वारी हुआ तो क्या हुआ ॥ ६ ॥ भूधर बनाई वीनती, श्रोता सुनो सव कान दै। गुरुका वचन माना नहीं, श्रोता हुआ तो क्या हुआ ॥ ७ ॥

(५१) राग मलार।

वे मुनिवर कव मिलिहैं उपगारी ॥ टेक ॥ साधु दिगम्बर नगन निरम्बर, संवर भूषणधारी ॥ वे मुनि० ॥ १ ॥ कंचन काच बराबर जिनकै, ज्यौं रिपु त्यौं हितकारी। महल मसान मरन अरु जीवन, सम गरिमा अरु गारी ॥ वे मुनि० ॥ २ ॥ सम्यग्ज्ञान प्रधान पवन वल, तप पावक परजारी। सेवत जीव सुवर्ण सदा जे, काय-कारिमा टारी

॥ वे मुनि० ॥ ३ ॥ जोरि जुगल कर भूधर बिनवै, तिन पद ढोक हमारी। भाग उदय दरसन जब पाऊं, ता दिनकी बलिहारी ॥ वे मुनि०॥४॥

(५२) राग धनासरी ।

शेष सुरेश नरेश रटैं तोहि, पार न कोई पाव जू ॥ टेर ॥ कापै नपत व्योम विलसतसौं, को तारे गिन लावै जू ॥ शेष० ॥ १ ॥ कौन सुजान मेघबूंदनकी, संख्या समुझि सुनावै जू॥ शेष० ॥ २ ॥ भूधर सुजस गीत संपूरन, गनपति भी नहिं गावै जू ॥ शेष० ॥ ३ ॥

(५३) राग सोरठ ।

स्वामीजी सांची सरन तुम्हारी ॥टेक॥ समरथ शांत सकल गुनपूरे, भयो भरोसो भारी ॥ स्वा० ॥ जनम जरा जग वैरी जीते, टेव मरनकी टारी। हमहूको अजरामर करियो, भरियो आस हमारी ॥स्वा०॥ जनमैं मरैं धरैं तन फिरि फिरि, सो साहिब संसारी। भूधर पर दालिद क्यों दलि है, जो है आप भिखारी ॥ स्वा० ॥ ३ ॥

जैन-शतक ।

(१) श्रीआदिनाथस्तुति सवैया (मात्रा ३२) ।

ज्ञानजिहाज बैठि गनधरसे, गुनपयोधि जिस नाहिं तरे हैं । अमरसमूह आनि अवनीसौं, घसि घसि सीस प्रनाम करे हैं ॥ किधौं भालकुकरमकी रेखा, दूर करनकी बुद्धि धरे हैं । ऐसे आदिनाथके अहनिस, हाथ जोरि हम पांय परे हैं ॥

(२)

काउसग्गमुद्रा धरि वनमें, ठाड़े रिषम रिद्धि तजि दीनी । निहचल अंग मेरु है मानौं, दोऊ भुजा छोर जिन दीनी ॥ फंसे अनंत जंतु जग चहले दुखी देखि करुना चित लीनी । काढ़न काज तिन्हैं समरथ प्रभु, किधौं बांह ये दीरघ कीनो ॥

(३)

करनौं कछु न करनतै कारज, तातैं पानि प्रलंब करे हैं । रह्यौ न कछु पांयनतैं पैवौ, ताहीतैं पद नाहिं टरे हैं ॥ निरख चुके नैनन सब यातैं,

नैन नासिका अनी धरे हैं। कानन कहा सुनै यौं
कानन, जोगलीन जिनराज खरे हैं ॥ ३ ॥

(४) छप्पय।

जयौ नाभिभूपालबाल, सुकुमाल सुलच्छन।
जयौ स्वर्गपातालपाल, गुनमाल प्रतच्छन ॥
दृग विशाल वर भाल, लाल नख चरन विरज्जहिं।
रूप रसाल मराल चाल, सुन्दर लखि लज्जहिं ॥
रिपुजालकाल रिसहेश हम, फंसे जन्म-जंबालदह।
यातैं निकाल बेहाल अति, भो दयाल दुख टाल यह

(५) चंद्रप्रभस्तुति। सवैया।

चितवत वदन अमल चंद्रोपम, तजि चिंता
चित होय अकामी। त्रिभुवनचंद पापतपचंदन,
नमत चरन चंद्रादिक नामी ॥ तिहुं जग छई
चंद्रिका-कीरति, चिह्न चंद्र चिंतत शिवगामी।
बन्दौ चतुरचकोरचंद्रमा, चन्द्रवरन चंद्रप्रभ-
स्वामी ॥ ५ ॥

(६) शान्तिनाथस्तुति। मत्तगयन्द (सवैया)

शांति जिनेश जयौ जगतेश, हरै अघताप
निशेशकी नाईं। सेवत पाय सुरासुरराय, नमैं

सिरनाय महीतलताई ॥ मौलि लगे मनिनील दिपैं, प्रभुके चरनौं झलके वह झाईं। सूंघन पाय-सरोज-सुगंधि किधौं चलि ये अलिपंकति आईं ॥ ६ ॥

(७) श्रीनेमिजिनस्तुति। कवित्त मनहर।

शोभित प्रियंग अंग देखैं दुख होय भंग, लाजत अनंग जैसैं दीप भानुभासतैं। बालब्रह्मचारी उग्रसेनकी कुमारी जादौ,—नाथ तैं निकारी जन्मकादौ दुखरासतैं ॥ भीम भवकाननमैं आन न सहाय स्वामी, अहो नेमी नामी तकि आयौ तुम तासतै। जैसे कृपाकंद बन जीवनकी बंद छोरी, त्यों ही दासको खलास कीजे भवपासतैं ॥७॥

(८) श्रीपार्श्वनाथस्तुति। छप्पय (सिंहावलोकन)।

जनम-जलधि-जलजान, जान जनहंस-मान सर। सरव इन्द्र मिलि आन, आन जिस धरहिं सीसपर ॥ परउपकारी बान, बान उत्थपइ कुनय गन। गनसरोजवन-भान, भान मम मोह-तिमिर घन ॥ घनवरन देह दुख-दाह-हर, हरखत हेरि

मयूर-मन । मनमथ-मतंग-हरि पासजिन, जिन विसरहू छिन जगतजन ॥ ८ ॥

(९) श्रीवर्द्धमानजिनस्तुति—दोहा ।

दिढ़-कर्माचल-दलन पवि, भवि-सरोज-रविराय ।
कंचनछवि कर जोर कवि, नमत वीरजिन पाय ॥

(१०) सवैया (मात्रा ३१)

रहौ दूर अंतरकी महिमा, वाहिज गुनवरनन बल कापै । । एक हजार आठ लच्छन तन, तेज कोटिरवि-किरनि उथापै ॥ सुरपति सहस-आँखअंजुलिसौं, रूपामृत पीवत नहिं धापै । तुम विन कौन समथ वीरजिन, जगसौं काढ़ि मोखमें थापै ॥ १० ॥

(११) श्रीसिद्धस्तुति—मत्तगयंद ।

ध्यानहुताशनमैं अरि ईंधन झोक दियौ रिपुरोक निवारी । शोक हर्यो भविलोकनकौ वर, केवलज्ञानमयूख उधारी ॥ लोक अलोक विलोक भये शिव, जन्मजरामृतपंक पखारी । सिद्धन थोक वसैं शिवलोक, तिन्हैं पगधोक त्रिकाल हमारी ॥ ११ ॥

तीरथनाथ प्रनाम करै, तिनके गुनवर्णनमैं बुधि हारी। मोम गयौ गलि मूसमझार, रह्यौ तहँ व्योम तदाकृतिधारी। लोक-गहीर-नदीपति नीर, गये तिर तीर भये अबिकारी। सिद्धनथोक वसैं शिवलोक, तिन्हैं पगधोक त्रिकाल हमारी॥

(१३) साधुस्तुति कवित्त मनहर।

शीतरितु-जोरैं अंग सब ही सकोरैं तहां, तनको न मोरैं नदीधोरै धीर जे खरे। जेठकी झकोरैं जहां अंडा चील छोरैं पशु, पंछी छांह लोरैं गिरि कोरैं तप वे धरे॥ घोर घन घोरैं घटा चहूंओर डोरैं ज्यौं ज्यौं, चलत हिलोरैं त्यौं त्यौं फोरैं बल ये अरे। देहनेह तोरैं परमा-रथसौं प्रीति जोरैं, ऐसे गुरु ओरैं हम हाथ-अंजुली करे॥ १३॥

(१४) जिनवाणीस्तुति मत्तगयंद (सवैया)

वीरहिमाचलतें निकसी, गुरु गौतमके मुख-कुंड ढरी है। मोहमहाचल भेद चली, जगकी जड़ता तपदूर करी है। ज्ञानपयोनिधिमाहिं रली,

बहु भंग तरंगनिसों उछरी है । ता शुचि शारदा गंगनदी प्रति, मैं अंजुरी निज सीस धरी है ॥१४॥

या जगमंदिरमें अनिवार, अज्ञान अंधेर छयो अति भारी । श्रीजिनकी धुनि दीपशिखा सम, जो नहिं होती प्रकाशनहारी ॥ तो किहंभाँति पदारथपांति, कहां लहते रहते अविचारी । याविधि संत कहैं धन हैं, धन हैं जिनबैन बड़े उपगारी ॥

(१६) श्रीजिनवाणी और मिथ्यावाणी । कवित्त मनहर ।

कैसेकरि केतकी कनेर एक कही जाय, आकदूध गायदूध अंतर घनेर है । पीरी होत री री पै न रीस करै कंचनकी, कहां काग-वानी कहां कोयलकी टेर है ॥ कहां भान भारौ कहां आगिया बिचारौ कहां, पूनोकौ उजारौ कहां मावसअंधेर है। पच्छ छोरि पारखी निहारौ नेक नीके करि जैनवैन और वैन इतनौं ही फेर है ॥

(१७) वैराग्यकामना ।

कब गृहवाससौं उदास होयं बन सेऊं, वेऊं निजरूप गति रोकूं मन-करीकी । रहि हों अडोल

एक आसन अचल अंग, सहि हौं परीसा शीत घाम-मेघ झरीकी ॥ सारंगसमाज खाज कबधौं खुजै है आनि, ध्यान-दल-जोर जीतूं सेना मोह-अरीकी । एकलविहारी जथाजात लिंगधारीकब, होऊं इच्छाचारी वलिहारी हौं वा घरीकी ॥

(१८) राग और वैराग्यका अन्तर ।

रागउदै भोगभाव लागत सुहावनेसे, विना-राग ऐसे लागैं जैसैं नाग कारे हैं । रागहीसौं पाग रहे तनमैं सदीव जीव, राग गये आवत गिलानि होत न्यारे हैं ॥ रागसौं जगतरीति झूठी सब साँची जानै, राग मिटैं सूझत असार खेल सारे हैं । रागी विनरागीके विचारमैं बड़ौ ई भेद, जैसैं "भटा पच काहू काहूको बयारे हैं"

(१९) भोगनिषेध मत्तगयंद (सवैया) ।

तू नित चाहत भोग नए नर, पूरवपुन्य विना किम पैहै । कर्मसंजोग मिलै कहिं जोग, गहै तब रोग न भोग सकै है ॥ जो दिन चारको ब्योंत बन्यौं कहुं, तौ परि दुर्गतिमैं पछितैहै ।

यौं हित यार सलाह यही कि, "गई कर जाहु" निवाह न ह्वै है ॥

(२०) देहस्वरूप ।

मातपिता-रज-वीरजसौं, उपजी सब सात कुधात भरी है । माखिनके पर माफिक बाहर, चामके बेठन बेढ़ धरी है ॥ नाहिं तौ आय लगैं अब ही, बक वायस जीव बचै न घरी है । देह-दशा यह दीखत भ्रात, घिनात नहीं किन बुद्धि हरी है ॥

(२१) संसारस्वरूप और समयकी बहुमूल्यता कवित्त मनहर ।

काहूघर पुत्र जायौ काहूके वियोग आयौ, काहू रागरंग काहू रोआ रोई करी है । जहां भान ऊगत उछाह गीत गान देखे, सांझसमैं ताही थान हाय हाय परी है ॥ ऐसी जगरीतिको न देखि भयभीत होय, हा हा नर मूढ़ तेरी मति कौनै हरी है । मानुषजनम पाय सोवत बिहाय जाय, खोवत करोरनकी एक एक घरी है ॥

(२२) सोरठा ।

कर कर जिनगुन पाठ, जात अकारथ रे जिया ।

आठ पहरमैं साठ, घरी घनेरे मोलकीं ॥ २२ ॥
कानी कौड़ी काज, कोरिनको लिख देत खत।
ऐसे मूरखराज, जगवासी जिय देखिये ॥ २३ ॥

दोहा।

कानी कौड़ी विषय सुख, भवदुख करज अपार।
विना दियैं नहिं छूटि है, लेशक दाम उधार ॥२४

(२५) शिक्षा छप्पय।

दश दिन विषयविनोद, फेर बहु विपतिपरंपर।
अशुचिगेह यह देह, नेह जानत न आप जर ॥
मित्र बंधु—सनमंध और, परिजन जे अंगी।
अरे अंध सब धंध, जान स्वारथके संगी ॥
परहित अकाज अपनौ न कर,
मूढ़राज अब समझ उर।
तजि लोकलाज निज काजकर।
आज दाव है कहत गुर ॥

(२६) कवित्त मनहर।

जौलौं देह तेरी काहू रोगसौं न घेरी जौलौं
जरा नाहिं नेरी जासौं पराधीन परी है। जौलौं,

जमनामा वैरी देय ना दमामा जोलौं, मानै कान रामा बुद्धि जाइ ना विगरि है ॥ तौलौं मित्र मेरे निज कारज संवार ले रे, पौरुष थकैंगे फेर पीछै कहा करि है । अहो आग आयैं जव झोंपरी जरन लागी, कुआके खुदायैं तब कौन काज सरि है ॥

(२७)

सौ वरष आयु ताका लेखा करि देखा सब, आधी तौ अकारथ ही सोवत विहाय रे । आधी में अनेक रोग बालवृद्धदशाभोग, और हु संजोग केते ऐसे बीत जांय रे ॥ बाकी अब कहा रह्यो ताहि तू विचार सही, कारजकी बात यही नीकैं मन लाय रे । खातिरमें आवै तो खलासी कर इतनेमैं, भावै फांसि फन्दबीच दीनौं समुझाय रे

(२८) बुढ़ापा ।

बालपनैं बाल रह्यौ पीछै गृहभार बह्यौ, लोक लाजकाज बांध्यौ पापनकौ ढेर है । अपनो अकाज कीनौं लोकनमैं जस लीनौं, परभौ विसार

दीनौं विषैवश जेर (?) है। ऐसे ही गई विहाय अलपसी रही आय, नर-परजाय यह "आंधेकी वटेर" है। आये सेत भैया अव काल है अवैया अहो, जानी रे सयानें तेरे अजों हूं अंधेर है॥

(२९) मत्तगयंद (सवैया)।

वालपनै न सँभार सक्यौ कछू, जानत नाहिं हिताहितहीको। यौवन वैस वसी वनिता उर, कै नित राग रह्यो लछमीको॥ यौं पन दोइ वि-गोइ दये नर, डारत क्यौं नरकैं निज जीको। आये हैं सेत अजौं शठ चेत, "गई सुगई अव राख रहीको"॥

(३०) कवित्त मनहर।

सार नर देह सव कारजको जोग येह, यह तौं विख्यात वात वेदनमें वँचै है। तामैं तरुनाई धर्मसेवनकी समै भाई, सेये तव विषै, जैसें मा-खी मधु रचै है॥ मोहमदभोये धनरामाहित रोज रोये, यौंही दिन खोये खाय कोदौं जिम मैच है। अरे सुन वौरे अव आये सीस धौरे अजौं, सावधान हो रे नर नरकसौं वचै है॥

(३१) मत्तगयंद (सवैया)।

बाय लगी कि बलाय लगी, मदमत्त भयौ नर भूलत त्यौं ही। बृद्ध भये न भजे भगवान, विषै-विष खात अघात न क्यौं ही॥ सीस भयौ बगुलासम सेत, रह्यो उनअंतर श्याम अजौं ही। मानुषभौ मुकताफलहार, गवाँर तगाहित तोरत यौं ही॥

(३२) संसारी जीवका चिंतवन।

चाहत हैं धन होय किसी विध, तौ सब काज सरै जियरा जी। गेह चिनाय करूं गहना कछु, ब्याहि सुतासुत बाँटिये भाजी॥ चिन्तत यौं दिन जाहिं चले, जम आनि अचानक देत दगा जी। खेलत खेल खिलारि गये, "रहि जाय रुपी शतरंजकी बाजी"॥

तेज तुरंग सुरंग भले रथ, मत्त मतंग उतंग खरे ही। दास खवास अवास अटा, धन जोर करोरन कोश भरे ही॥ ऐसे बढ़े तौ कहा भयौ हे नर, छोरि चले उठि अंत छरे ही। धाम खरे रहे काम परे रहे, दाम डरे रहे ठाम धरे ही॥

(३४) अभिमान निषध ।.कवित्त मनहर ।

कंचनभंडार भरे मोतिनके,पुंज परे, घने लोग द्वार खरे मारग निहारते। जान चढि डोलत हैं झीने सुर बोलत हैं, काहुकी हू ओर नेक नीके ना चितारते ॥ कौलौं धन खांगे कोऊ कहै यों न लांगे तेई, फिरैं पाँय नांगे कांगे परपग झारते। एते पै अयाने गरबाने रहैं विभौ पाय, धिक है समझ ऐसी धर्म ना सँभारते॥ ३४ ॥

देखौ भरजोबनमें पुत्रको वियोग आयौ, तैसैं ही निहारी निज नारी कालमगमैं। जे जे पुन्यवान जीव दीसत है यानहीपै, रंक भये फिरैं तेऊ पनहीं न पगमें ॥ एते पै अभाग धनजीतबसौं धरै राग, होय न विराग जानै रहूंगो अलग में। आंखिन विलोकि अंध सूसेकी अंधेरी करै, ऐसे राजरोगको इलाज कहा जगमें ॥ ३५ ॥

(३६) दोहा।

जैनवचन अंजनवटी, आंजैं सुगुरु प्रवीन।
रागतिमिर तऊ ना मिटै, बड़ो रोग लख लीन ॥

(३७) मनहर ।

जोई दिन कटै सोई आवमैं अवश्य घटै, बूंद बूंद बीतै जैसैं अंजुलीको जल है। देह नित छीन होत नैन तेजहीन होत, जोबन मलीन होत छीन होत बल है॥ आवै जरा नेरी तकै अंतक-अहेरी आवै, परभौ नजीक जात नरभौ निफल है। मिलकै मिलापी जन पूँछत कुशल मेरी, ऐसी दशामाहीं मित्र ! काहेकी कुशल है ?

बुढ़ापा। (३८) मत्तगयंद (सवैया)।

दृष्टि घटी पलटी तनकी छबि, बंक भई गति लंक नई है। रूज रही परनी घरनी अति, रंक भयौ परियंक लई है॥ काँपत नार बहै मुख लार, महामति संगति छांरि गई है। अंग उपंग पुराने परे, तिशना उर और नवीन भई है॥

(३९) कवित्त मनहर ।

रूपको न खोज रह्यौं ज्यौं तुषार दह्यौ, भयौ पतझार किधौं रही डार सूनीसी। कूबरी भई है कटि दूबरी भई है देह, ऊबरी इतेक आयु सेरमाहिं पूनीसी॥ जोबनतैं बिदा लीनी जरानैं जु-

हार कीनी, हानी भई सुधि बुधि सबै बाम ऊनी सी। तेज घट्यौ ताव घट्यौ जीतवको चाव घट्यौ और सब घट्यौ एक तिस्ना दिन दूनीसी॥

अहो इन आपने अभाग उदै नाहिं जानी, वीतराग-वानी सार दयारस-भीनी है। जोबनके जोर थिर जंगम अनेक जीव, जानि जे सताये कछु करुना न कीनी है॥ तेई अल जीवरास आ-परलोक पास, लेंगे बैर देंगे दुख भई ना नवीनो हैं। उनहीके भयको भरोसो जान कांपत है, याही डर "डोकरानैं लाठी हाथ लीनी है" ॥ ४० ॥

जाकौं इन्द्र चाहें अहमिंद्रसे उमाहें जासों, जीव मुक्तमाहें जाय भो-मल बहावै है। ऐसो नरजन्म पाय विषै-विष खाय खोयो, जैसे काच सांटैं मूढ़ मानक गमावै है॥ मायानदी बूड़ भींजा कायाबल तेज छीजा, आया पन तीजा अब कहा बनि आवै है। तानैं निज सीस ढोलै नीचे नैन किये डोलै, कहाबढ़ि बोलै वृद्ध वदन दुरावै है॥ ४१॥

(४२) मत्तगयंद (सवैया)।

देखहु जोर जरा भटकौ, जमराज महीपति-कौ अगवानी। उज्जल केस निसान धरैं, वहु रोगनकी संग फौज पलानी॥ कायपुरी तजि भाजि चल्यौ जिहि, आवत जोबन-भूप गुमानी। लूट लई नगरी सगरी, दिन दोयमें खोय है नाम निसानी॥

(४३) दोहा।

सुमतिहिं तजि जोबन समय, सेवहु विगय विकार
खलसांटैं नहिं खोइये, जनम-जवाहिर सार॥

(४४) कर्त्तव्यशिक्षा मनहर।

देवगुरु सांचे मान सांचौ धर्म हिये आन, सांचौ ही बखान सुनि सांटे पंथ आव रे। जीवनकी दया पाल झूठ तजि चोरी टाल, देख ना विरानी-बाल तिसना घटाव रे॥ अपनी बड़ाई परनिंदा मत कर भाई, यही चतुराई मद मांस-कौं बचाव रे। साध खटकर्म साधसंगतिमें बैठ वीर, जो है धर्मसाधनकौ तेरे चित चाव रे॥४४॥

सांचौ देव सोई जामैं दोषकौ न लेश कोई, वहै गुरु जाकैं उर काहूकी न चाह है। सही धर्म वही जहां करुना प्रधान कही, ग्रंथ जहां आदि अंत एकसौ निबाह है॥ ये ही जग रत्न चार इ-नकौं परख यार, सांचे लेहु झूठे डार नरभौको लाह है। मानुष विवेक विना पशुकी समान गिना, तातैं याहि बात ठीक पारनी सलाह है॥

(४६) सांचे देवका लक्षण—छप्पय।

जो जगवस्तु समस्त, हस्ततल जेम निहारै।
जगजनको संसार, सिंधुके पार उतारै॥
आदि-अंत-अविरोधि, वचन सबको सुखदानी।
गुन अनंत जिहंमाहिं, रोगकी नाहिं निशानी॥
माधव महेश ब्रह्मा किधौं, वर्धमान कै बुद्ध यह।
ये चिन्ह जान जाके चरन, नमो नमो मुझ देववह।

(४७) यज्ञमें हिंसानिषेध-कवित्त मनहर।

कहै पशु दीन सुन यग्यके करैया मोहि, होमत हुताशनमैं कौनसी बड़ाई है। स्वर्गसुख मैं न चहौं "देहु मुझे" यौं न कहौं, घास खाय

रहौं मेरे यही मनभाई है ॥ जो तू यह जानत है वेद यौं बखानत है, यग्य जलौ जीव पावै स्वर्ग सुखदाई है । डारै क्यौं न वीर यामैं अपने कुटुंब-होकौं, मोहि जिन जारै "जगदीसकी दुहाई है" ॥

(४८) सातों वारगर्भित षट्कर्मोपदेश—छप्पय ।

अघ-अंधेर-आदित्य, नित्य स्वाध्याय करिज्जै ।
सोमोपम संसार-तापहर तप करलिज्जै ॥
जिनवरपूजा नियम करहु, नित मंगलदायनि ।
बुध संजम आदरहु, धरहु चित श्रीगुरुपांयनि ॥
निजवितसमान अभिमानबिन,सुकर सुपत्तहिं दान
करयौंसनि सुधर्म षटकर्म भनि,नरभौ-लाहो लेहुनर

(४९) दोहा ।

ये ही छह विधि कर्म भज,सात विसन तज वीर ।
इस ही पैंड़े पहुचिं है, क्रम क्रम भवजलतीर ॥

(५०) सप्तव्यसन ।

जूआखेलन मांस मद, वेश्याबिसन शिकार ।
चोरी पर-रमनी-रमन, सातौं पाप निवार ॥

(५१) जूआनिषेध—छप्पय ।

सकल-पापसंकेत, आपदाहेत कुलच्छन ।

कलहखेत दारिद्र देत, दीसत निज अच्छन ॥
गुनसमेत जस सेत, केत रवि रोकत जैसैं।
औगुन-निकर-निकेत, लेत लखि बुधजन ऐसैं ॥
जुआ समान इह लोकमैं, आन अनीति न पेखिये
इस विसनरायके खेलकौ, कौतुकहू नहिं देखिये ॥

(५२) मांसनिषेध।

जंगम जियकौ नास, होय तब मांस कहावै।
सपरस आकृति नाम, गन्ध उर घिन उपजावै ॥
नरकजोग निरदई, खाहिं नर नीच अधरमी।
नाम लेत तज देत, असन उत्तमकुलकरमी।
यह निपटनिंद्य अपवित्र अति, कृमिकुल रासनिवास नित। आमिष अभच्छ याको सदा, वरजौ दोष दयालचित ॥

(५३) मदिरानिषेध दुर्मिल (सवैया)।

कृमिरास कुवास सराप दहैं, शुचिता सब छीवत जात सही। जिहिं पान कियैं सुधि जात हियैं, जननी जन जानत नार यही। मदिरा सम आन निषिद्ध कहा, यह जान भले कुलमैं न गही

धिक है उनकौं वह जीभ जलौ, जिन मूढ़नके मत लीन कही ॥

(५४) वेश्यानिषेध ।

धनकारन पापनि प्रीति करै, नहिं तोरत नेह जथा तिनकौ । लव चाखत नीचनके मुंहकी, शुचिता सब जाय छियैं जिनकों । मद मांस बजारनि खाय सदा, अंधले विसनी न करैं घिनकौं । गनिका संग जे सठ लीन भये, धिक है धिक है धिक है तिनकों ॥ ५४ ॥

(५५) आखेटनिषेध—कवित्त मनहर

काननमैं बसै ऐसो आन न गरीब जीव, प्राननसौं प्यारौ प्रान पूंजी जिस यहै है । कायर सुभाव धरै काहूंसौं न द्रोह करै, सबहीसौं डरै दांत लियैं तृन रहै है ॥ काहूसौं न रोष पुनि काहूपै न पोष चहै, काहूके परोष परदोष नाहिं कहै है । नेकुस्वाद सारिवेकौं ऐसे मृग मारिवेकौं हाहा रे कठोर तेरों कैसैं कर बहै है ।

(५६) चोरीनिषेध—छप्पय ।

चिंता तजै न चोर, रहत चौंकायत सारै ।

पीटै धनी विलोक, लोक निर्दइ मिलि मारै।
प्रजापाल करि कोप, तोपसौं रोप उड़ावै।
मरै महा दुख पेखि, अंत नीची गति पावै॥
अति विपतिमूल चोरीविसन,प्रगट त्रास आवैनजर
परवित अदत्त अंगार गिन,नीतिनिपुन परसैं न कर

(५७) परस्त्रीसेवननिषेध।

कुगतिवहन गुनगहन, दहन दावानलसी है। सुजसचंद्रघनघटा, देहकृशकरनखई है॥ धन-सर सोखन धूप, धरम-दिन-सांझसमानी। विपति-भुजंगनिवास, बांवई वेद वखानो॥ इहिविधि अनेक औगुनभरी, प्रानहरन-फांसी प्रबल। मत करहु मित्र यह जान जिय, परवनितासौं प्रीति पल॥

(५८) परस्त्रीत्यागप्रसंसा—दुर्मिल सवैया।

दिवि दीपक-लोय बनी वनिता, जड़जीव पतंग जहां परते। दुख पावत प्रान गवांवत हैं, वरजे न रहैं हठसौं जरते॥ इहि भांति विचच्छन अच्छनके वश, होय अनीति नहीं करते।

परती लखि जे धरती निरखैं, धनि हैं धनि हैं धनि हैं नर ते ॥

दिढ़शील शिरोमनिकारजमैं, जगमैं जस आरज तेइ लहैं। तिनके जुग लोचन वारज हैं, इहिभांति अचारज आप कहैं॥ परकामिनको मुखचंद चितै, मुंद जाहिं सदा यह टेव गहै। धनि जीवन है तिन जीवनको, धनि माय उनैं उरमांय बहैं ॥ ५६ ॥

(६०) कुशीलनिन्दा—मत्तगयंद (सवैया)

जे परनारि निहारि निलज्ज, हंसैं विगसैं बुधिहीन बड़ेरे। जूठनकी जिमि पातर पेखि, खुशी उर कूकर होत घनेरे॥ है जिनकी यह टेव वहै, तिनको इस भौ अपकीरति है रे। ह्वै परलोकविषैं दृढ़दंड, करै शतखंड सुखाचलकेरे ॥

(६१) एक एक व्यसनको सेवन—करनेवाले छप्पय ।

प्रथम पांडवा भूप, खेलि जूआ सब खोयौ।
मांस खाय बक-राय, पाय विपदा बहु रोयौ॥
बिन जानैं मदपानजोग, जादौंगन दज्झे।

चारुदत्त दुख सह्यो, वेसवा-विसन अरुज्झे ॥
नृप ब्रह्मदत्त आखेटसौं, द्विज शिवभूति अदत्तरति
पर-रमनि राचि रावन गयौ, सातौं सेवत कौन गति

(६२) दोहा ।

पाप नाम नरपति करैं, नरक नगरमैं राज ।
तिन पठये पायक विसन, निजपुर वसती काज ॥

(६३)

जिनकैं जिनके वचनको, बसी हिये परतीत ।
विसनप्रीति ते नर तजौ नरकवास भयभीत ॥

(६४) कुकविनिन्दा मत्तगयन्द सवैया ।

राग उदै जग अंध भयौ, सहजैं सब लोगन लाज गवांई । सीख विना नर सीख रहे, विसनादिक सेवनकी सुघराई ॥ तापर और रचैं रस काव्य कहा कहिये तिनकी निठुराई । अंध असूझनकी अंखियानमें, झोंकत हैं रज रामदुहाई ॥

(६५)

कंचन कुंभनकी उपमा, कह देत उरोजनको कवि बारे । ऊपर श्याम विलोकत कै, मनिनीलम की ढकनी ढंकि छारे ॥ यौं सतबैन कहैं न कु

पण्डित,ये जुग आमिषपिंड उघारे। साधन भार दई मुंह छार, भये इहि हेत किधौं कुच कारे।

(६६)

ए विधि भूल भई तुमतैं, समुझै न कहां कसतूरि बनाई। दीन कुसंगनके तनमैं तृन दंत धरैं करुना किन आई॥ क्यों न करी तिन जीभन जे रस काव्य करैं परकौं दुखदाई। साधु-अनुग्रह दुर्जन दंड,दोऊ सधते विसरी चतुराई॥

(६७) मनरूप हाथी—छप्पय।

ज्ञान महावत डारि, सुमति संकल गहि खंडै।
गुरु अंकुश नहिं गिनै, ब्रह्मव्रत-विरख विहंडै॥
करि सिधंत सर न्हौन, केलि अघ-रजसौं ठानै।
करन चपलता धरै, कुमति करनी रति मानै।
डोलत सुछंद मदमत्त अति,गुन-पथिक न आवत उरै
वैराग्य खंभतैं बांध नर, मन-मतंग विचरत बुरै॥

(६८) गुरु उपकार—कवित्त मनहर।

ढईसी सराय काय पंथी जीव वस्यो आय, रत्नत्रय निधि जापै मोख जाकौ घर है। मिथ्या

निशि कारी जहां मोह अंधकार भारी,कामादिक तस्कर समूहनको थर है ॥ सोवै जो अचेत सोई खोवै निज संपदाकों, तहां गुरु पाहरू पुकारैं दया कर है। गाफिल न हूजै भ्रात ऐसी है अँधेरी रात, "जाग रे बटोही यहां चोरनको डर है" ॥

(६९) कषायजीतनेका उपाय—मत्तगयंद सवैया।

छेम निवास छिमा-धुवनी विन,क्रोध पिशाच उरै न टरैगो। कोमलभाव उपाव बिना,यह मान महामद कौन हरैगो। आर्जव-सार-कुठार बिना छलबेल निकंदन कौन करैगो। तोष शिरोमनि मंत्र पढ़े बिन, लोभ फणी विष क्यों उतरैगो।

(७०) मिष्ट वचन।

काहेको बोलत बोल बुरे नर, नाहक क्यों जस धर्म गमावै कोमल वैन चवै किन ऐन,लगै कछु है न सवै मन भावै ॥ तालु छिदै रसना न भिदै न घटै कछु अंक दरिद्र न आवै ॥ जीभ कहैं जिय हानि नहीं, तुझ जी सब जीवनको सुख पावै ॥

(७१) धैर्यधारणोपदेश—कवित्त मनहर ।

आयो है अचानक भयानक असाता कर्म, ताके दूर करिवेको बली कौंन अह रे। जे जे मन भाये ते कमाये पूर्व पाप आप, तेई अब आये निज उदयकाल लह रे॥ एरे मेरेवीर काहे होत है अधीर यामैं, कौऊकौ न सीर तू अकेलौ आप सह रे। भयैं दिलगीर कछू पीर न विनसि जाय ताहीतैं सयाने तू तमासगीर रह रे॥

(७२) होनहार दुर्निवार ।

कैसे कैसे बली भूप भूपर विख्यात भये, वैरी कुल कांपै नेकु भौंहौंके विकारसौं। लंघे गिरि सायर दिवायरसे दिपैं जिनौं, कायर किये हैं भट कोटिन हुंकारसौं॥ ऐसे महामानी मौत आये हू न हार मानी, क्यौं ही उतरे न कभी मानके पहारसौं। देवसौं न हारे पुनि दानेसौं न हारे और, काहूसौं न हारे एक हारे होन-हार सौं॥

(७३) काल सामर्थ्य ।

लोहमई कोट केई कोटनकी ओट करौ,

कांगुरेन तोप रोपि राखौ पट भेरिकैं। इन्द्र चन्द्र चौंकायत चौकस ह्वै चौकी देहु, चतुरंग चमू चहुं ओर रहौ घेरिकैं॥ तहां एक भौंहिरा बनाय बीच बैठौ पुनि, बोलौ मति कोऊ जो बुलावै नाम टेरिकैं। ऐसैं परपञ्च-पांति रचौ क्यों न भांति भांति, कैसैं हू न छोरै जम देख्यौ हम हेरिकैं॥

(७४) मत्तगयन्द सवैया।

अन्त कसौं न छुटै निहचै पर, मूरख जीव निरन्तर धूजै। चाहत है चितमैं नित ही सुख, होय न लाभ मनोरथ पूजै॥ तौ पन मूढ़ बंध्यौ भय आस, वृथा बहु दुःख दवानल भूजै। छोड़ विचच्छन ये जड़ लच्छन धीरज धारि सुखी किन हूजे॥

(७५) धैर्यशिक्षा।

जो धन लाभ लिलार लिख्यौ, लघु दीरघ सुक्रतके अनुसारै। सो लहि है कछु फेर नहीं, मरुदेशके ढ़ेर सुमेर सिधारै॥ घाट न बाढ़ कही

वह होय, कहा कर आवत सोच विचारै। कूप किधौं भर सागरमैं नर, गागर मान मिलै जल सारै॥

(७६) आशारूपी नदी—मनहर कवित्त।

मोहसे महान ऊंचे पर्वतसौं ढर आई,तिहूं जग भूतलमैं याहि विसतरी है। विविध मनोरथ-मै भूरि जल भरी बहै, तिसना तरंगनिसौं आकु-लता धरी है॥ परैं भ्रम भौर जहां रागसों मगर तहां, चिन्ता तट तुङ्ग धर्मवृच्छ ढाय ढरी है। ऐसी यह आशा नाम नदी है अगाध ताकौं, धन्य साधु धीरज जहाज चढ़ि तरी है॥

(७७) महामूढ़ वर्णन।

जीवन कितेक तामैं कहा बीत बाकी रह्यौ, तापै अंध कौन कौन करै हेर फेर ही। आपको चतुर जानै औरनको मूढ़ मानै, सांझ होन आई विचारत सवेर ही। चामहीके चखनतैं चितवै सकल चाल, उरसौं न चौंघे कर राख्यौ है अंधेर ही। बाहै बीन तानकै अचानक ही ऐसौ जम, दीस है मसान थान हाड़नको ढेर ही।

(७८)

केतो बार स्वान सिंघ सांवर सियाल सांप. सिंधुर सारग सूसा सूरी उदरै पर्यौ। केती बार चील चमगीदर चकौर चिरा, चक्रवाक चातक चराडूल तन भी धर्यौ॥ केती बार कच्छ मच्छ मेंडक गिंडोला मीन शंखसीप कौड़ी ह्वै जलूका जलमें तिर्यौ।। कोऊ कहै "जाय रे जनावर!" तो बुरो मानै यौं न मूढ़ जानै मैं अनेकबार ह्वै मर्यौ॥

(७९) दुष्टकथन—छप्पय।

करि गुणअम्रतपान, दोष विष विषम समप्पै।
वंकचाल नहिं तजै, जुगल जिह्वा मुख थप्पै॥
तकै निरन्तर छिद्र, उदै परदीप न रुच्चै।
विन कारण दुख करै, वैर-विष कबहुं न मुच्चै॥
वर मौनमंत्रसौं होय वश, संगत कीयैं हान है।
बहु मिलत बान यातैं सही, दुर्जन सांप समान हैं

(८०) विधातासे तर्क—मनहर कवित्त।

सज्जन जो रचे तौ सुधारससौं कौन काज,

दुष्ट जीव किये कालकूटसौं कहा रही। दाता निरमापे फिर थापै क्यों कलपवृच्छ, जाचक बिचारे लघु तृणहूंतैं हैं सही इष्टके संयोगतैं न सीरौ घनसार कछू, जगतकौ ख्याल इन्द्रजाल सम है वही। एसी दोय दोय बात दीखैं विधि एकहीसी काहेको बनाई मेरे धोखौ मन है यही॥

(८१) चौवीस तीर्थंकरोंके चिह्न-छप्पय।

गऊपुत्र गजराज, बाज बानर मनमोहै।
कोक कमल सांथिया, सोम सफरीपति सोहै॥
सुरतरु गैंड़ा महिष, कोल पुनि सेही जानौं।
वज्र हिरन अज मीन, कलश कच्छप उर आनौं
शतपत्र शंख अहिराज हरि रिषभदेव जिन आदि ले। श्रीवर्द्धमानलौं जानिये, चिन्ह चारु चौवीसये॥ ८१॥

(८२) ऋषभदेवके पूर्वभव—कवित मनहर।

आदि जयवर्मा दूजे महाबलभूप तीजे, सुरग-ईशान ललितांग देव थयौ है। चौथे ब्रज-जंघ एह पाँचवैं जुगल देह, सम्यक ले दूजे देव-

लोक फिर गयौ है ॥ सातवैं सुबुद्धिराय आठवैं अच्युतइन्द्र, नववैं नरेंद्र वज्रनाभ नाम भयौ है। दशे अहमिन्द्र जान ग्यारवैं रिषभ-भान, नाभि-वंश-भूधरके ससि जन्म लयौ है ॥ ८२ ॥

(८३) श्रीचन्द्रप्रभके पूर्वभव गीता।

श्रीवर्म भूपति पालि पुहमी, स्वर्ग पहले सुर भयौ
पुनि अजितसेन छखण्डनायक,इन्द्र अच्युतमैंथयौ
वर परम नाभिनरेश निर्जर, वैजयंति विमानमैं।
चंद्राभस्वामी सातवैं भव, भये पुरुषपुरानमैं ॥

(८४) श्रीशांतिनाथके पूर्वभव कवित (३१ मात्रा)

सिरीसेन आरज पुनि स्वर्गी, अमिततेज खेचरपद पाय। सुर रविचूल स्वर्ग आनतमैं, अपराजित बलभद्र कहाय ॥ अच्युतेंद्र वज्रायुध चक्री, फिर अहमिंद्र मेघरथराय। सरवारथसिद्धेश शांतजिन, ये प्रभुकी द्वादश परजाय ॥

(८५) नेमिनाथके पूर्वभव। छप्पय।

पहले भव वन भील, दुतिय अभिकेतु सेठघर।
तीजे सुर सौधर्म, चौथ चिंतागति नभचर ॥

पंचम चौथे स्वर्ग, छठें अपराजित राजा ।
अच्युतेंद्र सातयें, अमरकुलतिलक विराजा ॥
सुप्रतिष्ठराय आठम नवें, जन्म जयन्तबिमान धर ।
फिर भये नेमि हरिवंशशशि, ये दशभव सुधिकरहुनर

(८६) श्रीपार्श्वनाथके भवान्तर । कवित्त (३१ मात्रा)

विप्रपूत मरुभूत बिचच्छन, वज्रघोष गज गहन मँझार । सुर पुनि सहसरश्मि विद्याधर, अच्युतस्वग अमरि-भरतार ॥ मनुजइंद्र मध्यम ग्र वेयिक, राजपुत्र आनंदकुमार । आनतेंद्र दशवैं भव जिनवर, भये पासप्रभुके अवतार ॥

(८७) राजा यशोधरके भवान्तर । मत्तगयंद सवैया ।

राय यशोधर चन्द्रमती, पहले भव मंडल मोर कहाये । जाहक सर्प नदीमध मच्छ, अजा अज भैंस अजा फिर जाये ॥ फेरि भये कुकड़ा कुकड़ी, इन सात भवांतरमैं दुख पाये । चूनमई चरणायुध मारि, कथा सुत संत हियैं नरमाये ॥

(८८) सुबुद्धिसखीके प्रति वचन—मनहर कवित्त।

कहै एक सखी स्यानी सुन री सुबुद्धि रानी, तेरौ पति दुखो देख लागैं उर आर है। महा अपराधी एक पुग्गल है छहौं माहिं, सोई दुख देत दीसै नाना परकार है॥ कहत सुबुद्धि आली कहा दोष पुग्गलकौ, अपनी ही भूल लाल होत आप ख्वार है। "खोटौ दाम आपनो सराफै कहा लगै बीर," काहूकौ न दोष मेरौ भोंदू भरतार है॥

(८९) द्रव्यलिंगी मुनि मत्तगयंद सवैया।

शीत सहैं तन धूप दहैं, तरुहेट रहैं करुना उर आनैं। झूठ कहैं न अदत्त गहैं, वनिता न चहैं लव लोभ न जानैं॥ मौन बहैं पढ़ि भेद लहैं, नहिं नेम जहैं ब्रत रीति पिछानैं। यौं निबहैं पर मोख नहीं, विन ज्ञान यहै जिन वीर बखानैं॥

(९०) अनुभवप्रशंसा—कवित्त मनहर।

जीवन अलप आयु बुद्धि बल हीन तामैं, आगम अगाधसिंधु कैसैं ताहि डाक है। द्वाद-

शांग मूल एक अनुभौ अपूर्व कला, भवदाघ-हारी घनसारकी सलाक है ॥ यह एक सीख लीजै याहीकौ अभ्यास कीजै, याकौ रस पीजै ऐसो वीरजिन-वाक है । इतनो ही सार येही आतमको हितकार, यही लौं मदार और आगैं ढूकढाक है ॥

(६१) भगवत्प्रार्थना ।

आगम अभ्यास होहु सेवा सरबग्य तेरी, संगति सदीव मिलौ साधरमी जनकी । सन्तनके गुनकौ बखान यह बान परौ, मैटौ टेव देव पर औगुन कथनकी ॥ सबहीसौं ऐन सुखदैन मुख वैन भाखौं, भावना त्रिकाल राखौं आतमीक धनकी । जौलौं कर्म काट खोलौं मोक्षके कपाट तौलौं, येही बात हूजौ प्रभु पूजौ आस मनकी ॥

(६२) जिनधर्म प्रशंसा दोहा ।

छये अनादि अज्ञानसौं, जगजीवनके नैन ।
सब मत मूठी धूलकी, अंजन है मत जैन ॥
मूल नदीके तिरनकौ, और जतन कछु है न ।

सव मत घाट कुघाट हैं, राजघाट है जैन ॥९३॥
तीनभवनमें भर रहे, थावर जंगम जीव।
सव मत भच्छक देखिये, रच्छक जैन सदीव॥
इस अपार जगजलधिमें, नहिं नहिं और इलाज
पाहनवाहन धर्मसव, जिनवरधर्म जिहाज ॥९५॥
मिथ्यामतके मद छके, सव मतवाले लोय।
सव मतवाले जानिये, जिनमत मत्त न होय ॥९६
मत-गुमानगिरि पर चढ़े, वड़े भये मनमाहिं।
लघु देखैं सव लोकको, क्यौं हूं उतरत नाहिं ॥९७
चामचखनसौं सवमती, चितवत करत निवेर।
ज्ञाननैनसौं जैन ही, जोवत इतनो फेर ॥ ९८ ॥
ज्यौं वजाज ढिग राखिकैं, पट परखै परवीन।
त्यौं मतसौंमतकी परख, पावैं पुरुष अमीन ॥९९
दोय पक्ष जिनमत विषैं, नय निश्चय व्यवहार।
तिनविन लहै न हंस यह शिवसरवरकी पार ॥
सीझे सीझैं सीझ हैं, तीन लोक तिहुंकाल।
जिनमतको उपकार सव, जिन भ्रम करहु दयाल
महिमा जिनवर वचनकी, नहीं वचनवल होय।

भुजबलसौं सागर अगम तिरै न तरहिं कोय ॥
अपने अपने पंथको, पोखै सकल जहान ।
तैसैं यह मतपोखना, मति समझौ मतिवान ॥
इस असार संसारमैं, और न सरन उपाय ।
जन्म जन्म हूजो हमैं, जिनवरधर्म सहाय ॥१०४

(१०५) कविका परिचय कवित्त मनहर ।

आगरेमैं बालबुद्धि भूधर खंडेलवाल, बालकके ख्यालसौं कवित्त कर जानै है । ऐसे ही करत भयौ जैसिंघसवाईसूबा, हाकिम गुलाबचंद आये तिहि थानै हैं ॥ हरीसिंघ साहकेसु वंश धर्मरागी नर, तिनके कहैंसौं जोरि कीनी एक ठानै है । फिरि फिरि प्रेरे मेरे आलसकौ अंत भयौ, उनकी सहाय यह मेरौ मन मानै है ॥

(१०६) दोहा ।

सतरहसै इक्यासिया पोह पाख तमलीन ।
तिथि तेरस रविवारको, सतक समापत कीन ॥
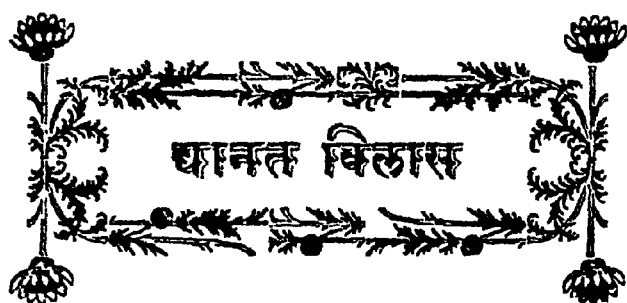
(१) राग विहागड़ो ।

अब हम नेमिजीकी शरन ॥ टेक ॥ और ठौर न मन लगत है, छांड़ि प्रभुके चरन ॥ अब० ॥ १ ॥ सकल भवि-अघ-दहन-बारिद, विरद तारन तरन । इन्द चंद फनिंद ध्यावैं, पाय सुख दुखहरन ॥ अब० ॥ २ ॥ भरम-तम-हर-तरनि-दीपति, करमगन खयकरन । गनधरादि सुरादि जाके, गुन सकत नहिं वरन ॥ अब० ॥ ३ ॥ जा समान त्रिलोकमें हम, सुन्यौ औरन करन । दास द्यानत दयानिधि प्रभु, क्यों तजैंगे परन ॥ ४ ॥

(२) राग सोरठा ।

गलतानमता कब आवैगा ॥ टेक ॥ राग दोष परणति मिट जै है, तब जियरा सुख पावैगा ॥ गलता० ॥ १ ॥ मैं ही ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मैं,

तीनों भेद मिटावैगा । करता किरिया करमभेद मिटि, एक दरब लौं लावैगा ॥ गलता० ॥ २ ॥ निह्चैं अमल मलिन व्योहारी, दोनों पच्छ नसावैगा । भेद गुण गुणीको नहिं ह्वै है, गुरु शिख कौन कहावैगा ॥ गलता० ॥ ३ ॥ द्यानत साधक साधि एक करि, दुबिधा दूर बहावैगा । वचनभेद कहबत सब मिटकै, ज्योंका त्यों ठहरावैगा ॥४॥

(३) राग सारंग ।

मोहि कब ऐसा दिन आय है ॥ टेक ॥ सकल बिभाव अभाव होंहिंगे, विकलपता मिट जाय है ॥ मोहि० ॥ १ ॥ यह परमातम यह मम आतम, भेदबुद्धि न रहाय है । ओरनिकी का बात चलावै, भेदविज्ञान पलाय है ॥ मोहि० ॥ २॥ जानैं आप आपमें आपा, सो व्यवहार बिलाय है । नय-परमान-निखेपन-माहीं, एक न औसर पाय है ॥ मोहि० ॥ ३ ॥ दरसन ज्ञान चरनके विकलप, कहो कहाँ ठहराय है । द्यानत चेतन चेतन ह्वै है, पुदगल पुदगल थाय है ॥२४

(४) राग बिलावल।

जिन नाम सुमर मन ! बावरे, कहा इत उत भटकै ॥ जिन० ॥ टेक ॥ विषय प्रगट विष-बेल हैं, इनमें जिन अटकै ॥ जिन नाम० ॥ १ ॥ दुर्लभ नरभव पायकै, नगसों मत पटकै। फिर पीछैं पछतायगो, औसर जब सटकै ॥जिननाम० ॥ २ ॥ एक घरी है सफल जो, प्रभु-गुन-रस गटकै। कोटि वरष जीयो वृथा, जो थोथा फटकै ॥ जिन नाम० ॥ ३ ॥ द्यानत उत्तम भजन है, लीजै मन रटकै। भव भवके पातक सबै, जै हैं तो कटकै ॥ जिन नाम० ॥ ४ ॥

(५) राग काफी।

तू जिनवर स्वामी मेरा, मैं सेवक प्रभु हों तेरा ॥ टेक ॥ तुम सुमरन बिन मैं बहु कीना, नाना जोनि बसेरा। भाग उदय तुम दरसन पायो, पाप भज्यो तजि खेरा ॥ तू जिनवर० ॥१॥ तुम देवाधिदेव परमेसुर, दीजै दान सबेरा। जो तुम मोख देत नहिं हमको, कहाँ जायँ किंहि

डेरा ॥२॥ मात तात तूही बड़ भ्राता, तोसौं प्रेम घनेरा । द्यानत तार निकार जगततैं, फेर न ह्वै भवफेरा ॥ तू जिनवर० ॥ ३ ॥

(६) राग काफी धमाल ।

सो ज्ञाता मेरे मन माना, जिन निज-निज, पर-पर जाना ॥ टेक ॥ छहों दरवतैं भिन्न जानकै, नव तत्वनितैं आना । ताकौं देखै ताकौं जानै, ताहीके रसमें साना ॥ सो ज्ञाता० ॥ १ ॥ कर्म शुभाशुभ जो आवत हैं, सो तो पर पहिचाना । तीन भवनको राज न चाहै, यद्यपि गांठ दरब बहु ना ॥ सो ज्ञाता० ॥ २ ॥ अखय अनंती सम्पति विलसै, भव तन भोग मगन ना । द्यानत ता ऊपर बलिहारी, सोई "जीवन मुकत" भना ॥

(७) राग केदारो ।

सुन मन ! नेमिजीके वैन ॥ टेक ॥ कुमति-नासन ज्ञानभासन, सुखकरन दिन रैन ॥ सुन० ॥ १ ॥ वचन सुनि बहु होंहिं चक्री, बहु लहैं पद मैन । इन्द चंद फनिंद पद लैं आतम शुद्धनऐन,

सुन० ॥ २ ॥ वैन सुन बहु मुकत पहुंचे, वचन विनु एकै न। हैं अनच्छर रूप अच्छर, सब सभा सुखदैन ॥ सुन० ॥ ३ ॥ प्रगट लोक अलोक सब किय, हरिय मिथ्या-सैन। वचन सरधा करौ द्यानत, ज्यों लहौ पद चैन ॥ सुन० ॥ ४ ॥

(८) राग मल्हार।

काहेको सोचत अति भारी, रे मन! ॥ टेक पूरव करमनकी थित बांधी, सोतो टरत न टारी काहे० ॥ १ ॥ सब दरवनिकी तीन कालकी, विधि न्यारीकी न्यारी। केवलज्ञानविषैं प्रतिभासी, सो सो ह्वै है सारी ॥ काहे० ॥ २ ॥ सोच किये बहु बंध बढ़त है, उपजत है दुख ख्वारी। चिंता चिता समान बखानी, बुद्धि करत है कारी काहे० ॥ ३ ॥ रोग सोग उपजत चिन्तातैं, कहौ कौन गुनवारी। द्यानत अनुभव करि शिव पहुंचे जिन चिन्ता सब जारी॥ काहे० ॥ ४ ॥

(९) राग केदारो।

रे जिय! जनम लाहो लेह ॥ टेक ॥ चरन

ते जिन भवन पहुंचैं, दान दैं कर जेह ॥ रे जिय० ॥ १ ॥ उर सोई जामैं दया है, अरु रुधिरको गेह । जीभ सो जिन नाम गावै, सांच सौं करै नेह ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ आंख ते जिनराज देखैं, और आंखैं खेह । श्रवन ते जिनवचन सुनि शुभ, तप तपै सो देह ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ सफल तन इह भांति ह्वै है, और भांति न केह । ह्वै सुखी मन राम ध्यावो, कहैं सदगुरु येह ॥ रे जिय० ॥ ४ ॥

(१०)

चल देखैं प्यारी, नेमि नवल ब्रतधारी ॥ टेक ॥ रोग दोष विन शोभन मूरति, मुकतिनाथ अविकारी ॥ चल० ॥१॥ क्रोध विना किमि करम विनाशैं, यह अचरज मन भारी ॥ चल० ॥ २ ॥ बचन अनक्षर सब जिय समझैं, भाषा न्यारी न्यारी ॥ चल० ॥ ३ ॥ चतुरानन सब खलक विलोकैं, पूरब मुख प्रभुकारी ॥ चल० ॥ ४ ॥ केवलज्ञान आदि गुण प्रगटे, नेकु न मान

कियारी ॥ चल० ॥ ५ ॥ प्रभुकी महिमा प्रभु न कहि सकैं, हम तुम कौन विचारी ॥ चल० ॥६ द्यानत नेमिनाथ विन आली, कह मौकौं को तारी ॥ चल० ॥ ७ ॥

(११) राग सोरठ।

रुल्यो चिरकाल, जगजाल चहुंगति विषैं, आज जिनराज-तुम शरन आयो ॥ टेक ॥ सह्यो दुख घोर, नहिं छोर आवै कहत, तुमसौं कछु छिप्यो नहिं तुम बतायो ॥ रुल्यो० ॥ १॥ तु ही संसारतारक नहीं दूसरो, ऐसो मुह भेद न किन्ही सुनायो ॥ रुल्यो० ॥ २ ॥ सकल सुर असुर नरनाथ बंदत चरन, नाभिनन्दन निपुन मुनिन ध्यायो ॥ रुल्यो० ॥ ३ ॥ तु ही अरहन्त भगवन्त गुणवन्त प्रभु, खुले मुझ भाग अब दरश पायो रुल्यो० ॥ ४ ॥ सिद्ध हौं शुद्ध हौं बुद्ध अविरुद्ध हौं, ईश जगदीश बहु गुणनि गायो ॥ रुल्यो० ॥ ५ ॥ सर्व चिन्ता गई बुद्धि निर्मल भई, जब हि चित जुगलचरननि लगायो ॥ रुल्यो० ॥ ६ ॥

भयो निहचिन्त द्यानत चरन शर्न गयि, तार अ-
ब नाथ तेरो कहायो ॥ रुल्यो० ॥ ७ ॥

(१२)

कर कर आतमहित रे प्रानी ॥ टेक ॥ जिन
परिनामनि बंध होत है, सो परनति तज दुख-
दानी ॥ कर० ॥ १ ॥ कौन पुरुष तुम कहां रहत
हौ, किहिकी संगति रति मानी। जे परजाय प्र-
गट पुद्गलमय, तेतैं क्यों अपनी जानी ॥ कर०
॥ २ ॥ चेतनजोति झलक तुझमाहीं, अनुपम
सो तैं विसरानी। जाकी पटतर लगत आन नहिं
दीप रतन शशि सूरानी ॥ कर० ॥ ३ ॥ आपमें
आप लखो अपनो पद, द्यानत करि तन-मन-
वानी। परमेश्वरपद आप पाइये, यौं भाषैं केव-
लज्ञानी ॥ कर० ॥ ४ ॥

(१३) राग विहागरो।

जानत क्यों नहिं रे, हे नर आतम ज्ञानी ॥
टेक ॥ रागदोष पुद्गलकी संगति, निहचै शुद्धनि-
शानी ॥ जानत० ॥ १ ॥ जाय नरक पशु नर

सुर गतिमें, ये परजाय विरानी। सिद्ध-स्वरूप सदा अविनाशी, जानत बिरला प्रानी॥ जानत० ॥ २ ॥ कियो न काहू हरै न कोई, गुरु शिख कौन कहानी। जनम-मरन-मलरहित अमल है, कीच विना ज्यों पानी॥ जानत० ॥ ३ ॥ सार पदारथ है तिहुं जगमें, नहिं क्रोधी नहिं मानी। द्यानत सो घटमाहिं विराजै, लख हूजै शिवथानी॥ जानत० ॥ ४ ॥

(१४) राग काफी।

आपा प्रभु जाना मैं जाना॥ टेक॥ परमेसुर यह मैं इस सेवक, ऐसो भर्म पलाना॥ आपा० ॥ १ ॥ जो परमेसुर सो मम मूरति, जो मम सो भगवाना। मरमी होय सोइ तो जानै, जानै नाहीं आना॥ आपा० ॥२॥ जाको ध्यान धरतहैं मुनिगन, पावत हैं निरवाना। अर्हंत सिद्ध सूरि गुरु मुनिपद, आतमरूप बखाना॥ आपा० ॥ ३ ॥ जो निगोदमें सो मुझमाहीं, सोई है शिव थाना। द्यानत निहचैं रंच फेर नहिं जानै सो मतिवाना॥ आपा० ॥ ४ ॥

(१५) राग मल्हार।

परमगुरु बरसत ज्ञान झरी ॥ टेक ॥ हरषि हरषि बहु गरजि गरजिकै, मिथ्यातपन हरी ॥ परमगुरु० ॥१॥ सरधा भूमि सुहावनि लागै, संशय बेल हरी। भविजनमन सरवर भरि उमड़े, समुझि पवन सियरी ॥ परमगुरु० ॥ २ ॥ स्याद्वाद बिजली चमकै,पर-मत-शिखर परी। चातक मोर साधु श्रावकके, हृदय सुभक्ति भरी॥ परम गुरु० ॥ ३ ॥ जप तप परमानन्द बढ्यो है, सुसमय नींव धरी। द्यानत पावन पावस आयो, थिरता शुद्ध करी ॥ परमगुरु० ॥ ४ ॥

(१६) राग काफी।

अब हम आतमको पहचाना जी ॥ टेक ॥ जैसा सिद्धक्षेत्रमें राजत, तैसा घटमें जाना जी अब हम० ॥ १ ॥ देहादिक परद्रव्य न मेरे, मेरा चेतन बाना जी ॥ अब हम० ॥ २ ॥ द्यानत जो जानै सो स्याना, नहिं जानें सो दिवाना जी ॥३॥

(१७)

मेरी बेर कहा ढील करी जी ॥टेक॥ सूली

सौं सिंहासन कीनो, सेठ सुदर्शन विपति हरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ १ ॥ सीता सती अगनिमें पैठी, पावक नीर करी सगरी जी। वारिषेणपै खड्ग चलायो, फूल माल कीनी सुथरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ २ ॥ धन्या वापी पर्यो निकाल्यो, ता घर रिद्ध अनेक भरी जी। सिरीपाल सागरतैं तार्यो, राजभोगकै मुकत बरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ ३ ॥ सांप कियो फूलनकी माला, सोमापर तुम दया धरी जी। द्यानत मैं कछु जाँचत नाहीं, कर वैराग्य दशा हमरी जी ॥ मेरी बेर० ॥ ४ ॥

(१८)

जिनके हिरदै भगवान बसैं, तिन आनका ध्यान किया न किया ॥ टेक ॥ चक्री एक मिलाप भयेतैं, और नर न मिलिया मिलिया ॥ जि०॥१॥ इक चिन्तामणि वांछितदायक, और नग न गहिया गहिया। पारस एक कनी कर आवे, और धन न लहिया लहिया ॥ जिनके० ॥ २ ॥ एक भान दश दिशि उजियारा, और ग्रह न उदिया उदिया

एक कल्पतरु सब सुख दाता, और तरु न उगिया उगिया ॥ जिनके०॥३॥ एक अभय महा दान देय-कें और सुदान दिया न दिया। द्यानत ज्ञानसुधा रस चाख्यो, अम्रत और पिया न पिया ॥ ४ ॥

(१९) राग परज।

माई! आज आनंद कछु कहे न बनै ॥ टेक नाभिराय मरुदेवी-नंदन, व्याह उछाह त्रिलोक भनै ॥ माई० ॥ १ ॥ सीस मुकुट गल अनूपम, भूषन बरनन को बरनै ॥ माई० ॥ २ ॥ गृह सुखकार रतनमय कीनो, चौंरी मंडप सुरगननै ॥ माई० ॥ ३ ॥ द्यानत धन्य सुनंदा कन्या, जाको आदीश्वर परनै ॥ माई० ॥ ४ ॥

(२०) राग परज।

माई! आज आनंद है या नगरी ॥ टेक ॥ गज-गमनी शशि-बदनी तरुनी, मंगल गावत हैं सिगरी ॥ माई० ॥ १ ॥ नाभिराय घर पुत्र भयो है, किये हैं अजाचक जाचक री ॥ माई० ॥२॥ द्यानत धन्य कूंख मरुदेवी, सुर सेवत जाके पग री ॥ माई० ॥ ३ ॥

(२१)

जिनके हिरदै प्रभु नाम नहीं तिन,नर अवतार लिया न लिया ॥टेक॥ दान विना घर-वास वासकै, लोभ मलीन धिया न धिया ॥ जिनके० ॥ १ ॥ मदिरापान कियो घट अन्तर, जल मल सोधि पिया न पिया। आन प्रानके माँस भखेतैं करुना भाव हिया न हिया ॥ जिनके० ॥२॥ रूपवान गुनखान वानि शुभ, शील विहीन तिया न तिया। कीरतवंत मृतक जीवत हैं, अपजसवंत जिया न जिया ॥ ३ ॥ धाम मांहि कछु दाम न आये, बहु व्योपार किया न किया। द्यानत एक विवेक किये विन,दान अनेक दिया न दिया ॥

(२२)

विपतिमें धर धीर,रे नर! विपतिमें धर धीर ॥ टेक ॥ सम्पदा ज्यों आपदा रे!, विनश जै है वीर ॥ रे नर० ॥ १ ॥ धूप छाया घटत वढ़ै ज्यों त्योंहि सुख दुख पीर ॥ रे नर० ॥२॥ दोष द्यानत देय किसको, तोरि करम-जंजीर ॥ रे नर० ॥३॥

(२३)

गुरु समान दाता नहिं कोई ॥ टेक ॥ भानु प्रकाश न नाशत जाको, सो अंधियारा डारै खोई ॥ गुरु० ॥ १ ॥ मेघ समान सबनपै बरसै, कछु इच्छा जाके नहिं होई। नरक पशूगति आगमांहितैं, सुरग मुकत सुख थापै सोई ॥ गुरु० ॥२॥ तीन लोक मन्दिरमें जानौ, दीपकसम परकाशक लोई। दीपतलैं अँधियार भस्यो है अंतर बहिर विमल है जोई ॥ गुरु० ॥३॥ तारन तरन जिहाज सुगुरु हैं, सब कुटुम्ब डोवै जगतोई। द्यानत निशि दिन निरमल मनमें, राखो गुरु-पद पंकज दोई ॥

(२४)

आतम अनुभव करना रे भाई ॥ टेक ॥ जब लौं भेद-ज्ञान नहिं उपजै, जनम मरन दुख भरना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ आतम पढ़ नव तत्त्व बखानै, व्रत तप संजम धरना रे। आतम-ज्ञान बिना नहिं कारज, जोनी-संकट परना रे ॥भाई० ॥ २ ॥ सकल ग्रन्थ दीपक हैं भाई, मिथ्या तमके

हरना रे। कहा करैं ते अंध पुरुषको, जिन्हैं उपजना मरना रे॥ भाई० ॥ ३ ॥ द्यानत जे भवि सुख चाहत हैं,तिनको यह अनुसरना रे। 'सोहं' ये दो अक्षर जपकै,भव-जल पार उतरना रे ॥४

(२५)

धनि ते साधु रहत बनमांहीं ॥टेक॥ शत्रु मित्र सुख दुख सम जानैं, दरसन देखत पाप पलाहीं ॥ धनि० ॥ १ ॥ अट्ठाईस मूल गुण धारै, मन वच काय चपलता नाहीं। ग्रीपम शैल शिखा हिम तटिनी, पावस वरखा अधिक सहाहीं ॥ धनि० ॥ २ ॥ क्रोध मान छल लोभ न जानैं, राग दोष नाहीं उनपाहीं। अमल अखंडित चिद्गुण मण्डित, ब्रह्मज्ञानमें लीन रहाहीं ॥ धनि० ॥३॥ तेई साधु लहैं केवल पद, आठ-काठ दह शिव पुर जाहीं। द्यानत भवि तिनके गुण गावैं, पावैं शिव सुख दुःख नसाहीं ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(२६)

अब हम आतमको पहिचान्यौ ॥टेक॥ जब

ही सेती मोह सुभट वल, खिनक एकमें भान्यौ ॥ अव०॥१॥ राग विरोध विभाव भजे झर, ममता भाव पलान्यौ। दरसन ज्ञान चरनमें, चेतन भेद रहित परवान्यौ ॥ अव० ॥ २ ॥ जिहि देखैं हम अवर न देख्यो, देख्यो सो सरधान्यौ। ताकौ कहो कहैं कैसैं करि, जा जानै जिम जान्यौ ॥ सव० ॥ ३ ॥ पूरव भाव सुपनवत देखे, अपनो अनुभव तान्यो। द्यानत ता अनुभव स्वादत ही, जनम सफल करि मान्यौ ॥ अव० ॥ ४ ॥

(२७)

हमको प्रभु श्रीपास सहाय ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखत जब ही, पातक जाय पलाय ॥ ह० ॥ १ ॥ जाको इंद फनिंद चक्रधर, वंदैं सीस नवाय। सोई स्वामी अंतरजामी, भव्यनिको सुखदाय ॥ हमको० ॥ २ ॥ जाके चार घातिया बीते, दोष जु गये विलाय। सहित अनन्त चतुष्टय साहब, महिमा कही न जाय ॥ हमको० ३ ॥ ताकी या बड़ो मिल्यो है हमको, गहि रहिये

मन लाय। द्यानत औसर बीत जायगो, फेर न कछु उपाय ॥ हमको० ॥ ४ ॥

(२८)

ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी, नेमिजी ! तुम ही हो ज्ञानी ॥ टेक ॥ तुम्हीं देव गुरु तुम्हीं हमारे, सकल दरव जानी ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ तुम समान कोउ देव न देख्या, तीन भवन छानी। आप तरे भवजीवनि तारे, ममता नहिं आनी ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ और देव सब रागी द्वेषी, कामी कै मानी। तुम हो वीतराग अकषायी, तजि राजुल रानी ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ यह संसार दुःख ज्वाला तजि, भये मुकतथानी। द्यानतदास निकास जगततैं, हम गरीब प्रानी। ज्ञानी० ॥ ४ ॥

(२९)

देख्या मैंने नेमिजी प्यारा ॥ टेक ॥ मूरति ऊपर करों निछावर, तन धन जोवन जोवन सारा ॥ देख्या० ॥ १ ॥ जाके नखकी शोभा आगैं कोटि काम छवि डारौं वारा। कोटि संख्य रवि

चन्द छिपत है, वपुकी द्युति है अपरंपारा॥ देख्या० ॥ २ ॥ जिनके बचन सुनें जिन भविजन, तजि गृह मुनिवरको व्रत धारा। जाको जस इन्द्रादिक गावैं, पावैं सुख नासैं दुख भारा॥ देख्या ॥ ३ ॥ जाके केवलज्ञान विराजत, लोकालोक प्रकाशन हारा। चरन गहेकी लाज निबाहो, प्रभुजी द्यानत भगत तुम्हारा ॥ देख्या ॥ ४ ॥

(३०)

आतमरूप अनूपम है, घटमाहिं विराजै ॥ टेक ॥ जाके सुमरन जापसो, भव भव दुख भाजै हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ केवल दरसन ज्ञानमें, थिरतापद छाजै हो। उपमाको तिहुं लोकमें, कोउ वस्तु न राजै हो॥ आतम० ॥ २ ॥ सहै परीषह भार जो, जु महाव्रत साजै हो। ज्ञान विना शिव ना लहै, बहुकर्म उपाजै हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तिहुं लोक तिहुं कालमें, नहिं और इलाजै हो। द्यानत ताकों जानिये, निज स्वारथकाजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

(३१)

नहिं ऐसो जनम बारंबार ॥ टेक ॥ कठिन कठिन लह्यो मनुष भव, विषय भजि मति हार नहिं० ॥ १ ॥ पाय चिन्तामन रतन शठ, छिपत उदधिमँझार। अंध हाथ बटेर आई, तजत ताहि गंवार ॥ नहिं० ॥ २ ॥ कबहुं नरक तिरजंच कबहुं, कबहुं सुरगविहार। जगतमहिं चिरकाल भमियो, दुलभ नर अवतार ॥ नहिं० ॥ ३ ॥ पाय अम्रत पांय धोवै, कहत सुगुरु पुकार। तजो विषय कषाय द्यानत, ज्यों लहो भवपार ॥ नहिं०॥

(३२)

तू तो समझ समझ रे! भाई ॥ टेक ॥ निशिदिन विषय भोग लपटाना, धरम वचन न सुहाई ॥ तू तो० ॥ १ ॥ कर मनका लै आसन मार्यो, बाहिज लोक रिझाई। कहा भयो बकध्यान धरेतैं, जो मन थिर न रहाई ॥तू तो०॥२॥ मास मास उपवास किये तैं, काया बहुत सुखाई। क्रोध मान छल लोभ न जीत्या, कारज कौन

सराई ॥ तू तो० ॥३॥ मन वच काय जोग थिर करकैं, त्यागो विषयकषाई । द्यानय सुरग मोख सुखदाई, सदगुरु सीख बताई ॥ तू तो० ॥ ४ ॥

(३२)

घटमें परमातम ध्याइये हो, परम धरम धंन हेत । ममता बुद्धि निवारिये हो, टारिये भरम निकेत ॥ घटमें० ॥ १ ॥ प्रथमहिं अशुचि निहारिये हो, सात धातुमय देह । काल अनन्त सहे दुख जानैं, ताको तजो अब नेह ॥ घटमें ॥ २ ॥ ज्ञानावरनादिक जमरूपी, जिनतैं भिन्न निहार । रागादिक परनति लख न्यारी, न्यारो सुबुध विचार ॥ घटमें० ॥ ३ ॥ तहां शुद्ध आतम निरविकलप, ह्वै करि तिसको ध्यान । अलप कालमें घाति नसत हैं, उपजत केवलज्ञान ॥ घटमें० ॥४ चार अघाति नाशि शिव पहुँचे, विलसत सुख जु अनन्त । सम्यकदरसनकी यह महिमा, द्यानत लह भव अन्त ॥ घटमें० ॥ ५ ॥

(३४)

समझत क्यों नहिं वानी, अज्ञानी जन ॥ टेक ॥ स्यादवाद-अंकित सुखदाय, भागी केवलज्ञानी ॥ समझत० ॥ १ ॥ जास लखैं निरमल पद पावै, कुमति कुगतिकी हानी। उदय भया जिहमें परगासी, तिहि जानी सरधानी ॥ समझत० ॥ २ ॥ जामें देव धरम गुरु वरनें, तीनौं मुकतिनिसानी। निश्चय देव धरम गुरु आतम, जानत विरला प्रानी ॥ समझत० ॥३॥ या जगमाहिं तुझे तारनको, कारन नाव वखानी। द्यानत सो गहिये निहचैसों, हूजे ज्यों शिवथानी ॥ समझत० ॥ ४ ॥

(३५)

धिक ! धिक ! जीवन समकित विना ॥ टेक ॥ दान शील तप व्रत श्रुतपूजा, आतम हेत न एक गिना ॥ धिक० ॥ १ ॥ ज्यों विनु कन्त कामिनी शोभा, अंबुज विनु सरवर ज्यों सूना। जैसे विना एकड़े बिन्दी, त्यों समकित विन स-

रव गुना ॥ धिक० ॥ २ ॥ जैसे भूप बिना सब सेना, नीव विना मंदिर चुनना । जैसे चन्द बिहूनी रजनी, इन्हें आदि जानो निपुना ॥ धिक० ॥ ३ ॥ देव जिनेन्द्र, साधु गुरु, करुना, धर्मराग व्योहार भना । निहचै देव धरम गुरु आतम, द्यानत गहि मन वचन तना ॥ धिक० ॥ ४ ॥

(३६) गुजरातीभाषा—गीत ।

जीवा ! शूं कहिये तनैं भाई । टेक ॥ पोतानूं रूप अनूप तजीनैं, शामाटै विषयी थाई ॥ जीवा० ॥ १ ॥ इन्द्रीना विषय विषथकी मोटा ज्ञाननू अम्रत गाई । अमृत छोड़ीनै विषय विष पीधा, साता तो नथी पाई ॥ जीवा० ॥२ ॥ नरक निगोदना दुख सह आव्यो, वली तिहनैं मग धाई एहवी बात रूड़ी न छै तमनैं, तीन भवनना राई जीवा० ॥ ३ ॥ लाख बातनी बात ए छै, मूकीनै विषयकषाई । द्यानत ते वारैं सुख लाधौ, एम गुरु समझाई ॥ जीवा० ॥ ४ ॥

(३७) राग मल्हार।

ज्ञान सरोवर सोई हो भविजन ॥टेक॥ भूमि छिमा करुना मरजादा, सम-रस जल जहँ होई॥ भविजन० ॥ १ ॥ परहति लहर हरख जलचर वहु, नय-पंकति परकारी। सम्यक कमल अष्ट-दल गुण हैं, सुमन भँवर अधिकारी ॥ भविजन० ॥ २ ॥ संजम शील आदि पल्लव हैं, कमला सुमति निवासी। सुजस सुवास कमल परिचयतैं, परसत भ्रम तप नासी ॥ भविजन० ॥ ३ ॥ भव मल जात न्हात भविजनका, होत परम सुख साता। द्यानत यह सर और न जानैं, जानैं बिरला ज्ञाता ॥ भविजन० ॥ ४ ॥

(३८)

जीव ! तैं मूढ़पना कितपायो ॥ टेक ॥ सब जग स्वारथको चाहत है, स्वारथ तोहि न भायो ॥ जीव० ॥ १ ॥ अशुचि अचेत दुष्ट तनमांहीं, कहा जान विरमायो। परम अतिन्द्री निजसुख हरिकै, विषय रोग लपटायो ॥ जीव० ॥२॥ चेतन

नाम भयो जड़ काहे, अपनो नाम गमायो । तीन लोकको राज छांड़िकै, भीख मांग न लजायो । जीव० ॥ ३ ॥ मूढ़पना मिथ्या जब छूटै, तब तू संत कहायो । द्यानत सुख अनन्त शिव विलसो, यों सद्गुरु बतलायो ॥ जीव० ॥ ४ ॥

(३९) राग सारंग ।

हम लागे आतमरामसों ॥ टेक ॥ विनाशीक पुद्गलकी छाया, कौन रमै धनमानसों ॥ हम० ॥ १ ॥ समता सुख घटमें परगास्यो, कौन काज है कामसों । दुविधा-भाव जलांजुलि दीनौं, मेल भयो निज स्वामसों ॥ हम० ॥२॥ भेदज्ञान करि निज परि देख्यौ, कौन विलोकै चामसौं । उरै परैकी बात न भावै, लौ लाई गुणग्रामसों ॥ हम० ॥ ३ ॥ विकलप भाव रंक सब भाजे, झरि चेतन अभिरामसों । द्यानत आतम अनुभव करिकै छूटे भव दुखधामसों ॥ हम० ॥ ४ ॥

(४०)

प्रभु अब हमको होहु सहाय ॥ टेक ॥ तुम

विन हम बहु जुग दुख पायो, अब तो परसे पांय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ तीन लोकमें नाम तिहारो, है सबको सुखदाय। सोई नाम सदा हम गावैं, रीझ जाहु पतियाय॥प्रभु० ॥ २ ॥ हम तो नाथ कहाये तेरे, जावैं कहां सु बताय। बांह गहेकी लाज निवाहौ,जो हो त्रिभुवनराय ॥ प्रभु० ॥ ३ द्यानत सेवकने प्रभु इतनी, विनती करी बनाय। दीनदयाल दया धर मनमें, जमतैं लेहु बचाय॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(४१)

वसि संसारमें मैं, पायो दुःख अपार॥ टेक मिथ्याभाव हिये धस्यो नहिं, जानों सम्यकचार ॥ बसि० ॥ १ ॥ काल अनादिहि हौं रुल्यौ हो, नरक निगोदमँझार। सुर नर पद बहुते धरे पद, पद प्रति आतम धार॥ बसि० ॥ २ ॥ जिनको फल दुखपुंज है हो, ते जानें सुखकार। भ्रम मद पोय विकल भयो नहिं, गह्यो सत्य व्योहार॥ बसि० ॥ ३ ॥ जिनवानी जानी नहीं हो, कुगति

विनाशनहार । द्यानत अब सरधा करी दुख, मेटि लह्यो सुखसार ॥ बसि० ॥ ४ ॥

(४२)

धनि धनि ते मुनि गिरिवनवासी ॥ टेक ॥ मार मार जगजार जारते, द्वादस ब्रत तप अभ्यासी ॥ धनि० ॥ १ ॥ कौड़ी लाल पास नहिं जाके जिन छेदी आसापासी । आतम-आतम, पर-पर जानैं, द्वादश तीन प्रकृति नासी ॥ २ ॥ जा दुख देख दुखी सब जग ह्वै, सो दुख लख सुख ह्वै तासी । जाकों सब जग सुख मानत है, सो सुख जान्यो दुखरासी ॥ धनि० ॥ ३ ॥ वाहज भेष कहत अंतर गुण, सत्य मधुर हितमित भासी । द्यानत ते शिवपंथपथिक हैं, पांव परत पातक जासी ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(४३) राग कल्याण (सर्व लघु)

कहत सुगुरु करि सुहित भविकजन ! ॥टेक॥ पुद्गल अधरम धरम गगन जम, सब जड़ मम नहिं यह सुमरहु मन ॥ कहत० ॥ १ ॥ नर पशु

नरक अमर पर पद लखि, दरव करम तन करम पृथक भन । तुम पद अमल अचल विकलप बिन अजर अमर शिव अभय अखय गन ॥कहत० ॥ २ ॥ त्रिभुवनपतिपद तुम पटतर नहिं, तुम पद अतुल न तुल रविशशिगन । वचन कहत मन गहन शकति नहिं, सुरत गमन निज निज गम परनन ॥ कहत० ॥ ३ ॥ इह विधि बँधत खुलत इह विधि जिय, इन बिकलपमहिं शिवपद सधत न । निरविकलप अनुभव मन सिधि करि, करम सघन वनदहन दहन-कन ॥४॥

(४४)

हो भैया मोरे ! कहु कैसे सुख होय ॥टेक॥ लीन कषाय अधीन विषयके, धरम करै नहिं कोय ॥ हो भैया० ॥ १ ॥ पाप उदय लखि रोवत भोदू !, पाप तजै नहिं सोय । स्वान-वान ज्यों पाहन सूंघै, सिंह हनै रिपु जोय ॥ हो भैया० ॥ २ ॥ धरम करत सुख दुख अघसेती, जानत हैं सब लोय । कर दीपक लै कूप परत है, दुख पैहै

भव दोय ॥ हो भैया० ॥ ३ ॥ कुगुरु कुदेव कुधमें भुलायो, देव धरम गुरु खोय। उलट चाल तजि अब सुलटै जो, द्यानत तिरै जग-तोय ॥४॥

(४५)

प्रभु मैं किहि विधि थुति करौं तेरी ॥टेक॥ गणधर कहत पार नहिं पावै, कहा बुद्धि है मेरी ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ शक्र जनम भरि सहस जीभ धरि, तुम जस होत न पूरा । एक जीभ कैसैं गुण गावै, उलू कहै किमि सूरा॥ प्रभु० ॥ २ ॥ चमर छत्र सिंघासन बरनों, ये गुण तुमतैं न्यारे । तुम गुण कहन वचन वल नाहीं, नैन गिनैं किमि तारे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

(४६)

भज श्रीआदिचरन मन मेरे, दूर होंय भव भव दुख तेरे ॥ टेक ॥ भगति बिना सुख रंच न होई, जो ढूंढ़ै तिहुं जगमें कोई ॥ भज० १ ॥ प्रान-पयान-समय दुख भारी, कंठविषैं कफकी अधिकारी । तात मात सुत लोग घनेरा, तादिन

कौन सहाई तेरा ॥ भय० ॥ २ ॥ तू वसि चरण चरण तुझमाहीं, एकमेक ह्वै दुविधा नाहीं । तातै जीवन सफल कहावै, जनम जरा मृत पास न आवै ॥ भज० ॥ ३ ॥ अब ही अवसर फिर जम घेरैं, छांढ़ि लरक-बुध सद्गुरु टेरैं। द्यानत और जतन कोउ नाहीं, निरभय होय तिहूँ जगमाहीं

(४७)

प्राणी लाल ! धरम अगाऊ धारो ॥ टेक ॥ जबलौं धन जोवन हैं तेरे, दान शील न विसारौ ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ जबलौं करपद दिढ़ हैं तेरे, पूजा तीरथ सारौ। जीभ नैन जबलौं हैं नीके, प्रभु गुन गाय निहारौ । ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ आसन श्रवन सबल हैं तोलौं, ध्यान शब्द सुनि धारौ। जरा न आवै गद न सतावै, संजम परउपकारौ ॥ प्राणी० ॥ ३ ॥ देह शिथिल मति विकल न तौ लौं, तप गहि तत्त्व विचारौ । अन्तसमाधिपोल चढ़ि अपनो, द्यानत आतम तारौ ॥प्राणी०॥४॥

(४८) राग सोरठ।

नेमि नवल देखैं चल री । लहैं मनुष भवको

कलरी ॥ टेक ॥ देखनि जात जात दुख तिनको भान जथा तम-दल दल री। जिन उर नाम बसत है जिनको, तिनको भय नहिं जल थल री ॥ नेमि० ॥ १ ॥ प्रभुके रूप अनूपम ऊपर, कोट काम कीजे बल री। समोसरनकी अदभुत शोभा नाचत शक्र सची रल री ॥ नेमि० ॥ २ ॥ भोर उठत पूजत पद प्रभुके, पातक भजत सकल टल री। द्यानत सरन गहौ मन! ताकी, जै हैं भवबंधन गल री ॥ नेमि० ॥ ३ ॥

(४६)

भवि! पूजौ मन वच श्रीजिनन्द, चितचकोर सुखकरन इंद ॥ टेक ॥ कुमतिकुमुदिनी हरनसूर, विघनसघनवनदहन भूर ॥ भवि० ॥१॥ पाप उरग प्रभु नाम मोर, मोह-महा-तम दलन भोर ॥ भवि० ॥२॥ दुख-दालिद-हर अनघ-रैन, द्यानत प्रभु दैं परम चैन ॥ भवि० ॥३॥

(५०)

मगन रहु रे! शुद्धातममें मगन रहु रे ॥टेक॥

रागदोष परको उतपात, निहचै शुद्ध चैतनाजात ॥ मगन० ॥ १ ॥ विधि निषेधको खेद निवारि, आप आपमें आप निहारि ॥ मगन० ॥ २ ॥ बंध मोच्छ विकलप करि दूर, आनँदकंद चिदातम सूर ॥ मगन० ॥३॥ दरसन ज्ञान चरन समुदाय, द्यानत ये ही मोच्छ उपाय ॥ मगन० ॥ ४ ॥

(५१)

आतम जानो रे भाई ! ॥ टेक ॥ जैसी उज्जल आरसी रे, तैसी आतम जोत । काया-करमनसौं जुदी रे, सबको करै उदोत ॥ आतम० ॥ १ ॥ शयन दशा जागृत दशा रे, दोनों विकलपरूप । निरविकलप शुद्धातमा रे, चिदानंद चिद्रूप ॥ आतम० ॥ २ ॥ तन वचसेती भिन्न कर रे, मनसों निज लौं लाय । आप आप जब अनुभवै रे, तहां न मन वच काय ॥ आतम० ॥३॥ छहौं दरब नव तत्त्वतैं रे, न्यारो आतम राम । द्यानत जे अनुभव करैं रे, ते पावैं शिव धाम ॥४॥

(५२)

दरसन तेरा मन भावै ॥ दरसन० ॥ टेक ॥

तुमकौं देखि त्रिपति नहिं सुरपति, नैन हजार बनावै ॥ दरसन० ॥ १ ॥ समोसरनमें निरखै सचिपति, जीभ सहस गुन गावै। कोड़ कामको रूप छिपत है, तेरो दरस सुहावै ॥ दरसन०॥२॥ आँच लगै अंतर है तो भी, आनँद उर न समावै। ना जानों कितनों सुख हरिको, जो नहिं पलक लगावै ॥ दरसन० ॥ ३ ॥ पाप नासकी कौन बात है, द्यानत सम्यक पावै। आसन ध्यान अनूपम स्वामी, देखैं ही बन आवै ॥४॥

(५३)

री ! मेरे घट ज्ञान घनागम छायो ॥ री० ॥ टेक ॥ शुद्ध भाव बादल मिल आये, सूरज मोह छिपायो ॥ री० ॥ १ ॥ अनहद घोर घोर गरजत है, भ्रम आताप मिटायो। समता चपला चमकनि लागी, अनुभौ-सुख झर लायो ॥ री० ॥२॥ सत्ता भूमि बीज समकितको, शिवपद खेत उपायो। उद्धत (?) भाव सरोवर दीसै, मोर सुमन हरषायो ॥री०॥ ३ ॥ भव-प्रदेशतैं बहु दिन पीछैं

चेतन पिय घर आयो । द्यानत सुमति कहै सखियनसों, यह पावस मोहि भायो ॥री०॥ ४॥

(५४)

हो स्वामी ! जगत जलधितैं तारो॥ हो० ॥ टेक ॥ मोह मच्छ अरु काम कच्छतैं, लोभ लहरतैं उबारो ॥ हो० ॥१॥ खेद खारजल दुखदावानल, भरम भँवर भय टारो ॥ हो० ॥ २॥ द्यानत बार बार यौं भाषैं, तू ही तारनहारो ॥३॥

(५५) राग बसंत ।

मोहि तारो हो देवाधिदेव, मैं मनवचतनकरि करौं सेव ॥ टेक ॥ तुम दीनदयाल अनाथनाथ, हमहूको राखो आप साथ ॥ मोह० ॥ १ ॥ यह मारवाड़ संसार देश, तुम चरनकलपतरु हर कलेश ॥ मोह० ॥ २ ॥ तुम नाम रसायन जीय पीय, द्यानत अजरामर भव त्रितीय ॥ मोह० ३॥

(५६) राग केदारो ।

रे जिय ! क्रोध काहे करै ॥ टेक ॥ देखकै अविवेकि प्रानी, क्यों विवेक न धरै ॥ रे जिय० ॥१

जिसे जैसी उदय आवै, सो क्रिया आचरै । सहज तू अपनो बिगारै, जाय दुर्गति परै ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ होय संगति-गुन सबनिकों, सरब जग उच्चरै । तुम भले कर भले सबको, बुरे लखि मति जरै ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ वैद्य परविष हर सकत नहिं, आप भखिको मरै । बहु कषाय निगोद-वासा, छिमा द्यानत तरै ॥ रे जिय० ॥४॥

(५७)

फूली वसन्त जहँ आदीसुर शिवपुर गये ॥ टेक ॥ भारतभूप बहत्तर जिनगृह, कनकमयी सब निरमये ॥ फूली० ॥ १ ॥ तीन चौवीस रतनमय प्रतिमा, अंग रंग जे जें भये । सिद्ध समान सीस सम सबके, अदभुत शोभा परिनये ॥ फूली० ॥ २ ॥ बालि आदि आहूठ जोड़ मुनि, सबनि मुकति सुख अनुभये । तीन अठाई फागनि (?) खग मिल, गावैं गीत नये नये ॥ फू० ॥ ३ ॥ वसु जोजन वसु पैड़ी (?) गंगा, फिरी बहुत सुरआलये । द्यानत सो कैलास नमौं हौं, गुन कापै जा वरनये ॥ फूली० ॥ ४ ॥

(५८)

तुम ज्ञानविभव फूली वसन्त, यह मन मधुकर सुखसों रमन्त ॥ टेक ॥ दिन बड़े भये बैराग भाव, मिथ्यामत रजनीको घटाव ॥ तुम० १॥ बहु फूली फैली सुरुचि बेलि, ज्ञाताजन समता संग केलि ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत वानी पिक मधुररूप, सुरनरपशु आनंदघनसुरूप ॥ तुम० ॥३॥

(५९) राग मल्हार।

जगतमें सम्यक उत्तम भाई ॥ टेक ॥ सम्यकसहित प्रधान नरकमें, धिक शठ सुरगति पाई जगत० ॥ १ ॥ श्रावकव्रत मुनिव्रत जे पालैं, ममता बुद्धि अधिकाई। तिनतैं अधिक असंजमचारी, जिन आतम लव लाई ॥ जगत० ॥ २ ॥ पंच-परावर्तन तैं कीनै, बहुत बार दुखदाई। लख चौरासि स्वांग धरि नाच्यौ, ज्ञानकला नहिं आई जगत० ॥ ३ ॥ सम्यक विन तिहुं जग दुखदाई, जहँ भावै तहँ जाई। द्यानत सम्यक आतम अनुभव, सद्गुरु सीख बताई ॥ जगत० ॥ ४ ॥

(६०) राग गौड़ी।

भाई! अब मैं ऐसा जाना ॥ टेक ॥ पुद्गल दरव अचेत भिन्न हैं, मेरा चेतन बाना ॥ भाई०॥ ॥ १ ॥ कलप अनन्त सहत दुख बीते, दुखकौं सुख कर माना। सुख दुख दोऊ कर्म अवस्था, मैं कर्मनतैं आना ॥ भाई० ॥२॥ जहां भोर था तहां भई निशि, निशिकी ठौर विहाना। भूल मिटी जिनपद पहिचाना, परमानन्द निधाना ॥ भाई० ॥ ३ ॥ गूंगेका गुड़ खांय कहैं किमि, यद्यपि स्वाद पिछाना। द्यानत जिन देख्या ते जानै, मेंडक हंस पखाना ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(६१) राग ख्याल।

आतम जान रे जान रे जान॥ टेक ॥ जीवनकी इच्छा करै, कबहुं न मांगै काल। (प्राणी) सोई जान्यो जीव है, सुख चाहै दुख टाल ॥ आतम० ॥ १ ॥ नैन वैनमें कौन है, कौन सुनत हैं बात। (प्राणी) देखत क्यों नहिं आपमें, जाकी चेतन जात ॥ आतम० ॥२॥ बाहिर ढूंढै दूर है,

अंतर निपट नजीक । (प्राणी !) ढूंढनवाला कौन है, सोई जानो ठीक ॥ आतम० ॥ ३ ॥तीन भवनमें देखिया, आतम सम नहिं कोय । (प्राणी !) द्यानत जे अनुभव करैं, तिनकौं शिवसुख होय ॥ आतम० ॥ ४ ॥

(६२) राग सोरठा ।

मन ! मेरे राग भाव निवार ॥ टेक ॥ राग चिक्कनतैं लगत है कर्मधूलि अपार ॥ मन० ॥१॥ राग आस्रव मूल है, वैराग्य संवर धार । जिन न जान्यो भेद यह, वह गयो नरभव हार ॥ मन ॥ २ ॥ दान पूजा शील जप तप, भाव बिवध प्रकार । राग विन शिव सुख करत हैं, रागतैं संसार ॥ मन० ॥ ३ ॥ बीतराग कहा कियो, यह बात प्रगट निहार । सोइ कर सुखहेत द्यानत, शुद्ध अनुभव सार ॥ मन० ॥ ४ ॥

(६३) राग रामकली ।

हम न किसीके कोई न हमारा, झूठा है जगका व्योहारा ॥ टेक ॥ तनसंबंधी सब परवारा

सो तन हमने जाना न्यारा ॥ हम० ॥ १ ॥ पुन्य उदय सुखका बढ़वारा, पाप उदय दुख होत अपारा । पाप पुन्य दोऊ संसारा, मैं सब देखन हारा ॥ हम० ॥ २ ॥ मैं तिहुं जग तिहुं काल अकेला, पर संजोग भया बहु मेला । थिति पूरी करि खिर खिर जाहीं, मेरे हर्ष शोक कछु नाहीं हम न० ॥ ३ ॥ राग भावतैं सज्जन मानैं, दोष भावतैं दुर्जन जानैं । राग दोष दोऊ मम नाहीं, द्यानत मैं चेतनपदमाहीं ॥ हम न० ॥ ४ ॥

(६४) राग पंचम ।

भ्रम्यो जी भ्रम्यो, संसार महावन, सुख तो कबहुं न पायो जी ॥ टेक ॥ पुदगल जीव एक करि जान्यो, भेद-ज्ञान न सुहायो जी ॥ भम्यो० ॥ १ ॥ मनवचकाय जीव संहारो, झूठो वचन बनायो जी चोरी करके हरष बढ़ायो, विषयभोग गरवायो जी ॥ भम्यो० ॥ २ ॥ नरकमाहिं छेदन भेदन बहु, साधारण वसि आयो जी । गरभ जनम नरभव दुख देखे, देव मरत बिललायो जी

भम्यो० ॥ ३ ॥ द्यानत अब जिनवचन सुनै मैं, भवमल पाप वहायो जी। आदिनाथ अरहन्त आदिगुरु, चरनकमल चितलायो जी ॥ भम्यो० ॥

(६५) राग रामकली।

जियको लोभ महा दुखदाई, जाकी शोभा (?) वरनी न जाई ॥ टेक ॥ लोभ करै मूरख संसारी, छांड़ै पण्डित शिव अधिकारी ॥ जियको० ॥ १ ॥ तजि घरवास फिरै वनमाहीं, कनक कामिनी छांड़ै नाहीं। लोक रिझावनको ब्रत लीना, ब्रत न होय ठगई साकीना ॥ जियको० ॥ २ ॥ लोभवशात जीव हत डारै, झूठ बोल चोरी चित धारै। नारि गहै परिग्रह विसतारै, पांच पाप कर नरक सिधारै ॥ जियको० ॥ ३ ॥ जोगी जती गृही वनवासी, वैरागी दरवेश सन्यासी। अजस खान जसकी नहिं रेखा, द्यानत जिनकै लोभ विशेखा ॥ जियको० ॥ ४ ॥

(६६)

रे मन! भज भज दीनदयाल ॥ टेक ॥

जाके नाम लेत इक छिनमैं, कटैं कोट अघजाल. रे मन० ॥ १ ॥ परमब्रह्म परमेश्वर स्वामी, देखैं होत निहाल । सुमरन करत परम सुख पावत, सेवत भाजै काल ॥ रे मन० ॥ २ ॥ इन्द्र फनिंद चक्रधर गावैं, जाको नाम रसाल । जाको नाम ज्ञान परगासै, नाशै मिथ्याजाल । रे मन० ॥३ ॥ जाके नाम समान नहीं कछु, ऊरध मध्य पताल सोई नाम जपो नित द्यानत, छांड़ि विषय विकराल ॥ रे मन० ॥ ४ ॥

(६७)

तुम प्रभु कहियत दीनदयाल ॥ टेक ॥ आपन जाय मुकतमैं बैठे, हम जु रुलत जगजाल ॥ तुम० ॥ १ ॥ तुमरो नाम जपैं हम नीके, मन वच तीनौं काल । तुमतो हमको कछू देत नहिं, हमरो कौन हवाल ॥ तुम० ॥ २ ॥ बुरे भले हम भगत तिहारे, जानत हो हम चाल । और कछू नहिं यह चाहत हैं, राग दोषकौं टाल ॥ तुम० ॥ ३ ॥ हमसौं चक परी सो वकसो, तुम तो

कृपाविशाल। द्यानत एक बार प्रभु जगतैं, हमको लेहु निकाल ॥ तुम० ॥ ४ ॥

(६८) राग ख्याल।

मैं नेमिजीका बंदा, मैं साहबजीका बंदा ॥ टेक ॥ नैन चकोर दरसको तरसैं, स्वामी पूरनचंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ १ ॥ छहौं दरबमें सार बतायो, आतम आनंदकन्दा। ताको अनुभव नित प्रति कीजे, नासै सब दुख दंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ २ देत धरम उपदेश भविक प्रति, इच्छा नाहिं करंदा। राग दोष मद मोह नहीं नहीं, क्रोध लोभ छल छंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ ३॥ जाको जस कहि सकैं न क्योंही, इंद फनिंद नरिन्दा। मैं नेमिजी० ॥ ४ ॥

(६९)

मैं निज आतम कब ध्याऊंगा ॥ टेक ॥ रागादिक परिनाम त्यागकै, समतासौं लौ लाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ १ ॥ मन वच काय जोग थिर करकै, ज्ञान समाधि लगाऊंगा। कब हौं चि

पकश्रेणि चढ़ि ध्याऊं चारित मोह नशाऊंगा मैं निज० ॥ २ ॥ चारों करम घातिया खन करि परमातम पद पाऊंगा । ज्ञान दरश सुख बल भंडारा, चार अघाति वहाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ३ ॥ परम निरंजन सिद्ध शुद्धपद, परमानंद कहाऊंगा । द्यानत यह सम्पति जब पाऊं, बहुरि न जगमें आऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ४ ॥

(७०)

अरहंत सुमर मन बावरे ॥ टेक ॥ ख्याति लाभ पूजा तजि भाई, अन्तर प्रभु लौ लाव रे ॥ अरहंत० ॥ १ ॥ नरभव पाय अकारथ खोवै, विषय भोग जु बढ़ाव रे । प्राण गये पछितैहे मनवा, छिन छिन छीजै आव रे ॥ अरहंत० ॥ २ ॥ जुवती तन धन सुत मित परिजन, गज तुरंग रथ चाव रे । यह संसार सुपनकी माया, आंख दिखराव रे अरहंत० ॥ ३ ॥ ध्याव ध्याव रे अब है दाव रे, नाहीं मंगल गाव रे । द्यानत बहुत कहां लौं कहिये, फेर न कछू उपाव रे ॥ ४ ॥

(७१)

वन्दौ नेमि उदासी, मद मारिनेकौं ॥टेक॥ रजमतसी जिन नारी छाँरी, जाय भये बनवासी ॥ बन्दौं० ॥ १ ॥ हय गय रथ पायक सब छांड़े, तोरी ममता फाँसी। पंच महाव्रत दुद्धर धारे, राखी प्रजति पचासी ॥ बन्दौं० ॥ २ ॥ जाकै दरसन ज्ञान विराजत, लहि वीरज सुखरासी। ज्ञाकौं बन्दत त्रिभुवन-नायक, लोकालोकप्रकासी ॥ बन्दौं० ३ ॥ सिद्ध शुद्ध परमारथ राजैं, अविचल थान निवासी। द्यानत मन अलि प्रभु पद-पंकज, रमत रमत अघ जासी ॥ बन्दौं० ॥४॥

(७२)

आतम अनुभव कीजै हो ॥ टेक ॥ जनम जरा अरु मरन नाशकै, अनत काल लौं जीजै हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ देव धरम गुरुकी सरधा करि, कुगुरु आदि तज दीजै हो। छहौं दरब नव तत्त्व परखकै, चेतन सार गहीजै हो ॥ आतम० ॥२॥ दरव करम नोकरम भिन्न करि, सूक्षम दृष्टि धरी-

जै हो। भाव करमतैं भिन्न जानिकै, बुधि विला-
स न मरीजै हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ आप आप
जानै सो अनुभव, द्यानत शिवका दीजै हो। और
उपाय बन्यो नहिं बनिहै, करै सो दक्ष कहीजै
हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

(७३)

कर रे! कर रे! कर रे!, तू आतम हित
कर रे ॥ टेक ॥ काल अनन्त गयो जग भमतैं,
भव भवके दुख हर रे ॥ कर रे० ॥ १ ॥ लाख को-
टि भव तपस्या करतैं, जितो कर्म तेरी जर रे।
स्वास उस्वासमाहिं सो नासै, जब अनुभव चित
धर रे ॥ कर रे० ॥ २ ॥ काहे कष्ट सहै बनमाहीं,
राग दोष परिहर रे। काज होय समभाव विना
नहिं, भावौ पचि पचि मर रे ॥ कर रे० ॥ ३ ॥
लाख सीखकी सीख एक यह, आतम निज, पर
पर रे। कोट ग्रंथको सार यही है, द्यानत लख
भव तर रे ॥ कर रे० ॥४॥

(७४)

भाई ज्ञानका राह सुहेला रे ॥भाई०॥टेक॥

दरव न चहिये देह न दहिये, जोग भोग न नवेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ लड़ना नाहीं मरना नाहीं, करना बेला लेला रे। पढ़ना नाहीं गढ़ना नाहीं, नाच न गावन मेला रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ न्हानां नाहीं खाना नाहीं, नाहिं कमाना धेला रे। चलना नाहीं जलना नाहीं, गलना नाहीं देला रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ जो चित चाहै सो नित दाहै, चाह दूर करि खेला रे। द्यानत यामैं कौन कठिनता, बे परवाह अकेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(७५)

प्रभु तेरी महिमा किहि मुख गावैं ॥ टेक ॥ गरम छमास अगाउ कनक नग (?) सुरपति नगर बनावैं ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ छीर उदधि जल मेरु सिंहासन, मल मल इन्द्र न्हुलावै। दीक्षा समय पालकी बैठो, इन्द्र कहार कहावैं ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ समोसरन रिध ज्ञान महातम, किहिविधि सरव बतावैं। आपन जातकी बात कहा शिव, बात सुनैं भवि जावैं ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ पंच कल्यानक थानक

स्वामी, जे तुम मन वच ध्यावैं । द्यानत तिनकी कौन कथा है, हम देखैं सुख पावैं ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(७६)

प्रभु तेरी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ थुति करि सुखी दुखी निंदातैं, तेरैं समता भाय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जो तुम ध्यावै, थिर मन लावै, सो किंचित् सुख पाय । जो नहिं ध्यावै ताहि करत हो, तीन भवनको राय ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ अंजन चोर महाअपराधी, दियो स्वर्ग पहुँचाय । कथानाथ श्रेणिक समदृष्टी, कियो नरक दुखदाय ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ सेव असेव कहा चलै जियकी, जो तुम करो सु न्याय । द्यानत सेवक गुन गहि लीजै, दोष सबै छिटकाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(७७) राग विलावल ।

प्रभु तुम सुमरनहीमें तारे ॥ टेक ॥ सूअर सिंह नौल बानरने, कहौ कौन ब्रत धारे ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ सांप जाप करि सुरपद पायो, स्वान श्याल भय जारे । भेक बोक गज अमर कहाये, दुरग-

ति भाव विदारे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ भील चोर मा-
तंग जु गनिका, बहुतनिके दुख टारे । चक्री भर-
त कहा तप कीनौ, लोकालोक निहारे ॥ प्रभु० ॥
॥ ३ ॥ उत्तम मध्यम भेद न कीन्हों, आये शरन
उबारे । द्यानत राग दोष बिन स्वामी, पाये भाग
हमारे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

(७८) राग भैरों ।

ऐसो सुमरन कर मेरे भाई, पवन थँभै मन
कितहूँ न जाई ॥ टेक ॥ परमेसुरसों साँच रहीजै.
लोकरंजना भय तज दीजै ॥ ऐसो० ॥ १ ॥ जप
अरु नेम दोउ विधि-धारै, आसन प्राणायाम
सँभारो । प्रत्याहार धारना कीजै, ध्यान-समाधि-
महारस पीजै ॥ ऐसो० ॥ २ ॥ सो तप तपो बहु-
रि नहिं तपना, सो जप जपो बहुरि नहिं जपना ।
सो व्रत धरो कहुरि नहिं धरना, ऐसे मरों बहुरि
नहिं मरना ॥ ऐसो० ॥ ३ ॥ पंच परावर्तन लखि
लीजै, पांचों इन्द्रीकी न पतीजै । द्यानत पांचों
लच्छि लहीजै, पंच परम गुरु शरन गहीजै ॥४॥

(७६) राग विलावल।

कहिवेकों मन सूरमा, करनेकों काचा ॥टेक॥ विषय छुड़ावै और पै, आपन अति माचा ॥ कहिवे० ॥ १ ॥ मिश्री मिश्रीके कहैं, मुँह होय न मीठा। नीम कहैं मुख कटु हुआ, कहुँ सुना न दीठा ॥ कहिवे० ॥ २ ॥ कहनेवाले बहुत हैं, करनेकों कोई। कथनी लोक रिझावनी, करनी हित होई ॥ कहिवे० ॥ ३ ॥ कोड़ि जनम कथनी कथै, करनी बिनु दुखिया। कथनी विनु करनी करै, द्यानत सो सुखिया ॥ कहिवे० ॥ ४ ॥

(८०) राग विलावल।

श्रीजिननाम अधार, सार भजि ॥टेक॥ अगम अतट संसार उदधितैं, कौन उतारै पार ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ कोटि जनम पातक कटैं, प्रभु नाम लेत इक बार। ऋद्धि सिद्धि चरननसों लागै, आनँद होत अपार ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ पशु ते धन्य धन्य ते पंखी, सफल करैं अवतार। नाम विना धिक मानवको भव, जल बल ह्वै है

छार ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥ नाम समान आन नहिं जग सब, कहत पुकार पुकार। द्यानत नाम तिहूँ पन जपि लै, सुरगमुकति दातार ॥ ४ ॥

(८१)

देखे सुखी सम्यकवान ॥ टेक ॥ सुख दुखको दुखरूप विचारैं, धारैं अनुभव ज्ञान ॥ देखे० ॥१॥ नरक सातमेंके दुख भोगैं, इन्द्र लखैं तिन मान। भीख मांगकै उदर भरैं न करैं चक्रीको ध्यान ॥ देखे० ॥ २ ॥ तीर्थंकर पदको नहिं चावैं जपिउदय अप्रमान। कुष्ट आदि बहु व्याधि दहत न, चहत मकरध्वज थान ॥ देखे० ॥ ३ ॥ आधि व्याधि निरबाध अनाकुल, चेतनजोति पुमान। द्यानत मगन सदा तिहिमाहीं, नाहीं खेद निदान ॥ देखै० ॥ ४ ॥

(८२)

ज्ञानी जीव-दया नित पालैं ॥ टेक ॥ आरंभतैं परघात होत है, क्रोध घात निज टालैं ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ हिंसा त्यागि दयाल कहावै, जलै

कषाय वदनमें । बाहिर त्यागी अन्तर दागी, पहुंचै नरकसदनमें ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ करै दया कर आलस भावी, ताको कहिये पापी । शांत सुभाव प्रमाद न जाकै, सो परमारथ व्यापी ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ शिथिलाचार निरुद्यम रहना, सहना बहु दुख भ्राता । द्यानत बोलन डोलन जीमन, करैं जतनसों ज्ञाता ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

(८३)

कारज एक ब्रह्महीसेती ॥ टेक ॥ अंग संग नहिं बहिरभूत सब, धन दारा सामग्री तेती ॥ कारज० ॥ १ ॥ सोल सुरग नव ग्रैविकमें दुख, सुखित सातमें ततका वेति । जा शिवकारन मुनिगन ध्यावैं, सो तेरे घट आनंदखेती ॥ कारज० ॥ ॥ २ ॥ दान शील जप तप व्रत पूजा, अफल ज्ञान विन किरिया केती । पंच दरब तोतैं नित न्यारे, न्यारी रागदोष विधि जेती ॥ कारज० ॥३ तू अविनाशी जगपरकासी, द्यानत भासी सुकलावेती । तजौ लाल ! मनके विकलप सब, अनुभवमगन सुविद्या एती ॥ कारज० ॥ ४ ॥

(८४)

चेतन खेलै होरी ॥ टेक ॥ सत्ता भूमि छिमा वसन्तमें, समता प्रानप्रिया संग गोरी ॥ चेतन० १ ॥ मनको माट प्रेमको पानी, तामें करुना केसर घोरी। ज्ञान ध्यान पिचकारी भरिभरि, आपमें छोरै होरा होरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ गुरुके वचन मृदंग बजत हैं, नय दोनों डफ ताल टकोरी। संजम अतर विमल ब्रत चोवा, भाव गुलाल भरै भर झोरी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ धरम मिठाई तप बहु मेवा, समरस आनंद अमल कटोरी। द्यानत सुमति कहै सखियनसों, चिरजीवो यह जुगजुग जोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

(८५)

भोर भयो भज श्रीजिनराज, सफल होंहिं तेरे सब काज ॥ टेक ॥ धन सम्पत मनबांछित भोग, सब विधि आन बनैं संजोग ॥ भोर० ॥१ कल्पबृच्छ ताके घर रहै, कामधेनु नित सेवा बहै। पारस चिन्तामनि समुदाय, हितसों आय मिलैं

सुखदाय ॥ भोर० ॥ २ ॥ दुर्लभतैं सुलभ्य ह्वै जाय, रोग सोग दुख दूर पलाय । सेवा देव करैं मन लाय, विघन उलट मंगल ठहराय ॥ भोर० ॥ ३ ॥ डांयन भूत पिशाच न छलै, राजचोरको जोर न चलै । जस आदर सौभाग्य प्रकास, द्यानत सुरग मुकतिपदवास ॥ भोर० ॥ ४ ॥

(८६)

आयो सहज बसन्त खेलैं सब होरी होरा ॥ टेक ॥ उत बुधि दया छिमा बहु ठाढ़ीं, इत जिय रतन सजै गुन जोरा ॥ आयो० ॥ १ ॥ ज्ञान ध्यान डफ ताल बजत हैं, अनहद शब्द होत घन-घोरा । धरम सुराग गुलाल उड़त है, समता रंग दुहूंने घोरा ॥ आयो० ॥ २ ॥ परसन उत्तर भरि पिचकारी, छोरत दोनों करि करि जोरा । इततैं कहै नारि तुम काकी, उततैं कहैं कौनको छोरा आयो० ॥ ३ ॥ आठ काठ अनुभव पावकमें, जल बुझ शांत भई सब ओरा । द्यानत शिव आनन्दचन्द छवि, देखैं सज्जन नैन चकोरा ॥

(८७)

अजितनाथसों मन लावो रे॥ टेक ।। कर-सों ताल वचन मुख भाषौ, अर्थमें चित लगावो रे ॥ अजित० ॥ १ ॥ ज्ञान दरस सुख बल गुन-धारी, अनन्त चतुष्टय ध्यावो रे। अवगाहना अवाध अमूरत, अगरु अलघु बतलावो रे ॥ अ-जित० ॥ २ ॥ करुनासागर गुनरतनागर, जोति-उजागर भावो रे। त्रिभुवननायक भवभयघायक आनँददायक गावो रे ॥ अजित० ॥ ३ ॥ परम-निरंजन पातकभंजन, भविरंजन ठहरावो रे। द्यानत जैसा साहिब सेवो, तैसी पदवी पावो रे ॥

(८८) राग आसावरी।

अब हम अमर भये न मरैंगे ॥ टेक ॥ तन कारन मिथ्यात दियो तज, क्यों करि देह धरैंगे अब० ॥ १॥ उपजै मरै कालतैं प्रानी, तातैं काल हरैंगे। राग दोष जग बंध करत हैं, इनको नाश करैंगे ॥ अब० ॥ २ ॥ देह विनाशी मैं अविनाशी भेदज्ञान पकरैंगे। नासी जासी हम थिरवासी,

चोखे हों निखरैंगे ॥ अब० ॥ ३ ॥ मरे अनन्त वार बिन समझैं, अब सब दुख विसरैंगे । द्यानत निपट निकट दो अक्षर, विन सुमरैं सुमरैंगे ॥

(८९) राग आसावरी

भाई ! ज्ञानी सोई कहिये ॥ टेक ॥ करम उदय सुख दुख भोगेतैं, राग विरोध न लहिये ॥ भाई० ॥ १ ॥ कोऊ ज्ञान क्रियातैं कोऊ, शिवमारग बतलावै । नय निहचै विवहार साधिकै, दोऊ चित्त रिझावै ॥ भाई० ॥ २ ॥ कोई कहै जीव छिनभंगुर, कोई नित्य बखानै । परजय दरबित नय परमानै, दोऊ समता आनै ॥ भाई० ॥ ३ ॥ कोई कहै उदय है सोई, कोई उद्यम बोलै । द्यानत स्यादवाद सुतुलामें, दोनों वस्तैं तोलै ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(९०) राग आसावरी ।

भाई ! कौन धरम हम पालैं ॥ टेक ॥ एक कहैं जिहि कुलमें आये, ठाकुरको कुल गालैं ॥ भाई० ॥ १ ॥ शिवमत बौध सु वेद नयायक,

मीमांसक अरु जैना । आप सराहैं आगम गाहैं, काकी सरधा ऐना ॥ भाई० ॥ २ ॥ परमेसुरपै हो आया हो, ताकी वात सुनी जै । पूछैं वहुत न वोलैं कोई, वड़ो फिकर क्या कीजै ॥ भाई० ॥३ जिन सव मतके मत संचय करि, मारग एक वताया । द्यानत सो गुरु पूरा पाया, भाग हमारा आया ॥ भाई० ॥ ४ ॥

(६१) राग गौरी ।

हमारो कारज कैसें होय ॥टेक ॥ कारण पंच मुकती मारगके, तिनमेंके हैं दोय ॥ हमारो० ॥१ हीन संघनन लघु आयूषा, अल्प मनीषा जोय । कच्चे भाव न सच्चे साथी, सव जग देख्यो टोय हमारो० ॥ २ ॥ इन्द्री पंच सुविषयनि दौरैं, मानैं कह्या न कोय । साधारन चिरकाल वस्यो मैं धरम विना फिर सोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ चिन्ता वड़ी न कछु वनि आवै, अव सव चिन्ता खोय । द्यानत एक शुद्ध निजपद लखि, आपमें आप समोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

(६२) राग गौरी ।

हमारो कारज ऐसें होय ॥ टेक ॥ आतम आतम पर पर जानैं, तीनौं संशय खोय ॥ हमारो० ॥ १ ॥ अंत समाधिमरन करि तन तजि, होय शक्र सुरलोय विविध भोग उपभोग भोगवैं, धरमतनों फल सोय ॥ हमारो० ॥२॥ पूरी आयु विदेह भूप ह्वै, राज सम्पदा भोय । कारण पंच लहै गहै दुद्धर, पंच महाव्रत जोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ तीन जोग थिर सहै परिषह, आठ करम मल धोय । द्यानत सुख अनन्त शिव विलसै, जनमैं मरै न कोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

(६३) राग गौरी ।

देखो ! भाई श्रीजिनराज विराजैं ॥ टेक ॥ कंचनमनिमय सिंहपीठपर, अन्तरीच्छ प्रभु छाजैं देखो० ॥ १ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन जस जंपैं, चौंसठि चमर समाजैं । वानी जोजन घोर मोर सुनि, डर अहि पातक भाजैं ॥ देखो० ॥ २ ॥ साढ़े बारह कोड़ दुन्दुभी, आदिक बाजे बाजैं ।

वृक्ष अशोक दिपत भामंडल, कोड़ि सूर शशि लाजें ॥ देखो० ॥ ३ ॥ पहुपवृष्टि जलकन मंद पवन, इन्द्र सेव नित साजैं । प्रभु न बुलावैं द्या-नत जावैं सुरनर पशु निज काजैं ॥ देखो० ॥४

(६४) राग गौरी।

देखो भाई ! आतमराम विराजै ॥ टेक ॥ छहो दरब नव तत्त्व ज्ञेय हैं,आप सुज्ञायक छाजै ॥देखो०॥ १ ॥ अर्हंत सिद्ध सूरि गुरु मुनिवर, पाचौं पद जिहिमाहीं । दरसन ज्ञान चरन तप जिहिमें, पटतर कोऊ नाहीं ॥ देखो० ॥२॥ ज्ञान चेतना कहिये जाकी, वाकी पुद्गलकेरी । केवल ज्ञान विभूति जासुकै, आनविभौ भ्रमकेरी ॥३॥ एकेन्द्री पंचेन्द्री पुद्गल, जीव अतीन्द्री ज्ञाता । द्यानत ताही शुद्ध दरवको जांनपनो सुखदाता ॥४

(६५) राग गौरी।

अब मोहि तार लेहु महावीर ॥टेक॥ सिद्धा-रथनन्दन जगवंदन, पापनिकन्दन धीर ॥ अब० ॥ १ ॥ ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, बानी गहर

गंभीर । मोक्षकेकारन दोषनिवारन, रोष विदारन वीर ॥ अब० ॥२॥ आनंदपूरत समतासूरत, चूरत आपद पीर । बालजती दृढ़ब्रती समकिती, दुख दावानल नीर ॥ अब० ॥३॥ गुरु अनन्त भगवन्त अन्त नहिं, शशि कपूर हिम हीर । द्यानत एकहु गुन हम पावैं, दूर करैं भव भीर ॥ अब० ॥ ४ ॥

(६६) राग गौरी ।

जय जय नेमिनाथ परमेश्वर ॥टेक॥ उत्तम पुरुषनिको अति दुर्लभ, बालशीलधरनेश्वर ॥ज० ॥१॥ नारायन बहु भूप सेव करैं, जय अघतिमिर-दिनेश्वर । तुम जस महिमा हम कहा जानै, भाखिं न सकत सुरेश्वर ॥ जय० ॥२॥ इन्द्र सबै मिल पूजैं ध्यावैं, जय भ्रम तपत निशेश्वर, गुण अनन्त हम अन्त न पावैं वरन न सकत गनेश्वर ॥ जय०॥ गणधर सकल करैंथुति ठाढैं, जय भव जल पोतेश्वर । द्यानत हम छदमस्थ कहा कहैं, कह न सकत सरवेश्वर ॥ जय० ॥४॥

(६७) राग गौरी ।

आदिनाथ तारन तरनं ॥ टेक ॥ नाभिराय-

मरुदेवी नन्दन, जनम अजोध्या अघहरनं ॥ आ-
दि० ॥ १ ॥कलपवृच्छ गये जुगल दुखित भये-
करमभूमि विधिसुखकरनं। अपछर नृत्य मृत्यु
लखि चेते, भव तन भोग जोग धरनं ॥ आदि० ॥
२ ॥ कायोत्सर्ग छमास धर्यो दिढ़, वन खग मृ-
ग पूजत चरनं। धीरजधारी बरस अलारी, सह-
स वरस तप आचरनं ॥ आदि०॥३॥ करम नासि
परगासिज्ञानको, सुरपति कियो समोसरनं।
सब जन सुख दे शिवपुरपहुंचे, द्यानत भवि तुम
पदशरनं ॥ आदि० ॥ ४ ॥

(६८) राग गौरी।

सैली जयवन्ती यह हूजो ॥ टेक॥ शिव मा-
रगको राह बतावे और न कोई दूजो ॥सैली०॥१
॥ देवधरम गुरुसांचे जानै, झूठो मारग त्याग्यो ॥
सैलोकेपरसाद हमारो, जिनचरनन चित लाग्यो
॥ सैली० ॥ २ ॥ दुख चिरकाल सह्यो अति भा-
री, सो अब सहज विलायो। दुरिततरन सुखक-
रन मनोहर, धरम पदारथ पायो ॥ सैली० ॥३॥

द्यानत कहै सकल सन्तनको, नित प्रति प्रभुगुन गायो । जैनधरम परधान ध्यानसौं, सब ही शिवसुख पावो ॥ सैलो० ॥ ४ ॥

(६६) राग सोरठ ।

देखो ! भेक फूल लै निकस्यो, विन पूजा फल पायो ॥ टेक ॥ हरषित भाव मरयो गजपगतल, सुरगत अमर कहायो ॥ देखो० ॥ ॥ मालिनि-सुता देहली पूजी, अपछर इन्द्र रिझायो । हाली चरुसों दृढ़ब्रत पाल्यो, दारिद तुरत नसायो ॥ देखो० ॥ २ ॥ पूजा टहल करी जिन पुरुषनि, तिन सुरभवन बनायो । चक्री भरत नयौ जिनवरको, अवधिज्ञान उपजायो ॥ देखो० ॥ ३ ॥ आठ दरव लै प्रभुपद पूजै, ता पूजन सुर आयो । द्यानत आप समान करत हैं, सरधासों सिर नायो ॥ देखो० ॥ ४ ॥

---

(१) प्रभाती।

जयवंतो जिनबिंब जगतमें, जिन देखत निजपाया है॥ जयवंतो॥ टेर॥ वीतरागता लखि प्रभुजीकी, विषयदाह विनशाया है। प्रगट भयो संतोष महागुण, मन थिरतामें आया है॥ जयवंतो॥ १॥ अतिशय ज्ञान शरासन पै धरि, शुक्ल ध्यान शर वाह्या है। हानि मोह अरि चंड चौकडी, वह स्वरूप दिखलाया है॥ जयवंतो॥ २॥ वसुविधि अरि हरि करि शिव थानक, थिर स्वरूप ठहराया है। सो स्वरूप शुचि स्वयं सिद्ध प्रभु, ज्ञान रूप मन भाया है॥ जयवंतो॥ ३॥ यदपि अचेत तदपि चेतनको, चितस्वरूप दिखलाया है। कृत्याकृत्य 'जिनेश्वर' प्रतिमा, पूजनीय गुरु गाया है॥ जयवंतो॥ ४॥

(२)

कैसी छवि सोहै मानो सांचेमैं ढारी, कैसी छवि सोहै मानो सांचेमैं ढारी । सांचेमैं ढारी स्वामी सांचेमैं ढारी, कैसी छवि सोहै मानो सां-चेमैं ढारी ॥ टेक ॥ महिमा कहूं क्या आसन अ-चलकी, आंखोंकी दृष्टि स्वामी नासोंपै डारी ॥ कैसी० ॥ १ ॥ जिनका स्वभाव वीतरागी कहावै, करुणा निधान और पर उपकारी ॥ कैसी० ॥२॥ तजके शृंगार वनवासी भये हैं, तौभी रूप आगै लुभावै पदधारी ॥ कैसी० ॥ ३ ॥ दोऊ कर जो-ड्यां जिनेश्वर खड़ा है, ऐसी योगमुद्रा मुझे दी-ज्यो जयतारी ॥ कैसी० ॥ ४ ॥

(३) राग कसूमी ।

वंदों जगतपती नामी, तीर्थेश्वर महाराज ॥ वंदों० ॥ टैंक ॥ तिनके गर्भते पहिले बरसे, रतन बहुभांत ॥ वंदों० ॥ १ ॥ जिनके जनमकी महि-मा, गावै सुरगण नार ॥ वंदों० ॥ २ ॥ जिनजो जगतसे उदासी, चारी न लीनो संगकाज ॥वंदों०

॥ ३॥ घाति चतुक अरि चूरे, प्रभुने पायो शिव-थान ॥ वंदों० ॥ ४ ॥ जगमें भविक प्रतिबोधे, उत्तम पायो शिवथान ॥ वंदों० ॥ ५ ॥ अरजी जिनेश्वर येही, मोकों दीज्यो निर्भय थान ॥३॥

(४)

श्रीजी तौ आज देखो भाई, जाकी सुन्दर-ताई ॥ श्रीजी० ॥टेर ॥ कंचन मणिमय अंग तन राजै, पद्मासन छवि अधिकाई ॥ श्रीजी० ॥१॥ तीन छत्र शिर ऊपर जिनके, चौसठि चमर ढुरै भाई ॥ श्रीजी० ॥ २ ॥ वृक्ष अशोक शोक सब नाशै, भामंडल छवि अधिकाई ॥ श्रीजी० ॥३॥ धुनि जिनवरकी अतिशय गाजै, सुरनर पशुके मन भाई ॥ श्रीजी० ॥४॥ पुष्प वृष्टि सुर दुंदुभि बाजै, देख 'जिनेश्वर' रुचि आई ॥ श्रीजी ॥५॥

(५) राग माड ।

म्हेतो थांपर वारीजो जिनंद, चतुरानन सुख कंद ॥ टेर ॥ सिंहासनपै आप विराजे, पद-मासन महाराज । तीन छत्र शिर सोहने, चौसठि

चमर समाज ॥ म्हेतो० ॥ १ ॥ तेजवंत देही दिपै, कोटिक सूर लजंत । ज्ञान दर्श सुख वीर्य-को, पाया नाही अंत ॥ म्हेतो० ॥ २ ॥ जिनकी वानी सुख मई, सब जग आनंद कंद । सहित जिनेश्वर देवको, सेवत लहै अनंद ॥ म्हेतो० ३॥

(६)

सुनिये सुपारस अरज हमारी । सुनिये ॥ टेर ॥ लख चौरासी जोन फिस्यौ मै, पायो दुख अधिकारी । सुनिये ॥ १ ॥ बड़े पुण्यतैं नर भव पायो, शरन गही अब थारी । सुनिये० ॥ २ ॥ रत्नत्रय निधि निजकी दीजै, कीजे विधि निर-वारी । सुनिये० ॥ ३ ॥ अधम उधारक देव जिने-श्वर, आज हमारी वारी । सुनिये० ॥ ४ ॥

(७)

मेरी जिनवर सुनो पुकार, बसुविध कर्म जलानेवाले । मेरी० ॥ टेर ॥ मेरे कर्म अनादी साथ, मेरी संपति इनके हाथ, मोको देते दुख दिन रात, बैरी धर्म भुलानेवाले ॥ मेरी० ॥ १ ॥

मैने कीना नहीं विगार, तौभी देते दुःख अपार, इनका ऐसाहै इखत्यार नाहक दुःख दिखाने वाले मेरी० ॥ २ ॥ मैंतो सदा अकेलो एक, मेरे दुश्मन कर्म अनेक, सवकैं दुख देनेकी टेक, कातिल ये कहलानेवाले। मेरी० ॥ ३ ॥ देवैं गाफिल करके मार, लेते वैर कुगतिमें डार, मोकों भवदधिसे कर पार, जिनेश्वर धर्म चलाने वाले मेरी० ॥ ४ ॥

(८) राग—अमर सिंहके ख्यालकी ।

जगनायक स्वामी, छाई तिहुं जगमें, कीरति आपकी। जगनायक ॥ टेक ॥ निज लक्ष्मीके मालिक हो जी, थे म्हाका सिरदार। सुरगईस आदिक नमैस जी, सीस महीतलधार ॥ अधम उधारन कारन प्रभुजी, आप लियो अवतार। रेखता—येजी म्हेतौ थाँकी सरन सहाईजी, म्हा का प्रभुजीवो राज। म्हेंतौ थांकूं जान्या सरन सहाईजी, यह मेरे मनभाई, क्यों देर लगाई, छाई तिहुं जगमें कीरति आपकी, जगनायक ॥ १ ॥

छायकदर्शन ज्ञान विराजो, सुख अनंत बलधार। दोष अठारहरहित प्रभूजो, गुण छयालीस प्रकार ॥ असनविना तन जोति विराजै, कोट सुरज उनहार। रेखता—एजी थांको वानी सब हितदाई है, म्हार प्रभुजीवो राज, थारा सबको आप हितदाई हो, अनअक्षररूप कहाई, यथारथ देत बताई। छाई० ॥ २ ॥ श्रीगृहमें हरि आसन सोहै, तापर कमल विराजै। पद्मासन है पद्मपैसजी, अंतरीक्ष महाराजै ॥ तीन छत्र शिर ऊपर जिनके, चौसठ चमर समाजै। रेखता—येजी देख्यो थाँको प्रभाचक्र सुखदाई हो, म्हांका प्रभुजी हो राज येजी प्रभुदेख्यो प्रभाचक्र सुख दाई हो, जन्म निज सात लखाई, हृदयमें अति सुखदाई। छाई० ॥ ३ ॥ तीनलोकके नायक स्वामी, तुम्हीं हो जगमें सार। जिनने सरन लियो तुमपदको, ते पहुंचे भवपार ॥ सरन 'जिनेश्वरने' लीनो है, मोको जगतैं त्यार। रेखता-येजी म्हाने दीज्यो आपतनी ठकुराई, हो, म्हाका प्रभु-

जी वो राज, प्रभुम्हाने दीज्यो आपतनी ठकुराई, बड़ी जगमै वरदाई, यहीमें आस लगाई। छाई तिहूं जगमें कीरति आपकी। जगनायक स्वा० ४

(६) लावनी रंगत लंगड़ी।

करुनानिधि जगत्यार शिरोमनि, मेरी एक पुकार सुनो। मो अनाथकी नाथ यह, अरजी तो इकवार सुनो। टेर॥ या जगमें विधि वैरी ने चिर, काल हमें दुख दीना है। गाफिल करके सुहितकर ज्ञान सवैं हरलीना है॥ मोह जहरकी लहरि विषै मैं, निज परको नहिं चीना है। परमें फंसिकें चतुरगति, भ्रमण बहुतसा कीना है॥ तारन तरन विरद जगजाहर, तुम सबके सिर-दार सुनो, मो अनाथकी॥ १॥ कबहूं नरक पशू गति माही, छेदन भेदन सहना है। क्षुधा त्रिषाकी वेदना, तहां निरंतर सहना है॥ इष्ट वियोग रोग दारिद दुख, भारसहित मग बहना है। मानुषगतिमें बहुतविधि, दुखदावानल दह-ना है॥ सुरगतिमें भी मानसीक दुख, कहत न

पाऊं पार सुनो, मो अनाथकी ॥ २ ॥ जिस कारणसे परवश होकर, बहुविध मैं दुखपाता हूं। ईश्वर होके दीन बन, जगमें रंक कहाता हूं ॥ उस कारणको दूर करो मैं, सजातीय कहलाता हूं। हे प्रभु तेरे चरनको, बार वार शिर नाता हूं ॥ सरनागत प्रतिपाल सरन मैं आपकी अधम उधार सुनो। मो अनाथकी ॥ ३ ॥ मेरो पद त्रैलोक्यपती स्वाधीन निरंतर ज्ञाता है। आप वताया अक्षयानंत सदा सुखसाता है। जिस कारणसे मिलै स्वपद वह, हेतु तुम्हींसे पाता है। हे जगतारी जगतपति तुमसम और न दाता है ॥ कृपासिंधु अरहंत 'जिनेश्वर' करो यही उपकार सुनो। मो अनाथकी ॥ ४ ॥

(१०) पद राग ख्यालमें।

श्रीचंद्रनाथजी हूज्यो सहाई, या कलिकाल में ॥ टेर ॥ या संसार असार बनीमें, कोई न सरन सहाई। मिथ्या विषय कषाय कुलिंगी, जगजनको भरमाई ॥ ज्ञान महानिधि लूट निदयी, देय कुगति पहुंचाई।

दोहा—

सुखदाई संसारमें, जिनवर धम महान।
ताके मारगको कुधी, रोके दुष्ट अजान॥

जान वश इनके प्रभुजी, हूज्यो सहाई या कलिकालमें॥ १॥ धर्ममूल परधान तासको, होन न देत मिथ्यात। विषय कषाय महाविष राच्यो, जप तप नाहिं सुहात॥ फिर उपदेश मिल्यो तब खोटो, तब कैसी कुशलात। दोहा-हित अनहित समझ्यो नहीं, करै कर्म अघखान॥ फस्यो कुमतिके फंदमें, अंध भये विज्ञान। आपकी वानी न पाई॥ हूज्यो०॥ २॥ चिन्ता मणि यह नरभव पायो, उत्तम कुल अवतार। श्री जिनदेव दिगंबर गुरुजी, धर्मदयामय सार ऐसो जोग पाय मत भूलै, अपनो काज सम्हार दोहा—तजि मिथ्या मद मोहको, विषय कषाय निवार। भजि अरहंत महंतको, चरन अनूपम सार, यहो मैं आस लगाई॥ हूज्यो०॥ ३॥ तत्त्वारथ सरधान सम्हारो, जिनशासन अनुसार।

पूजा दान दया चित धारो, निज परभेद विचार ॥ ऐसे काज कियेतैं जगमें, सफल गृहस्थाचार । दोहा—शील शिरोमन सर्वथा, पालो मन वच-काय । यही जिनेश्वर देवकी, आज्ञा है हितदाय, ग्रहूं मैं शिव सुखदाई ॥ हू० ॥ ४ ॥

(११) पद ।

चंद्रनाथदुति चंद्रवरन पगमैं शशिराजैजी नाथपगमैं शशिराजैजी, चन्द्र० ॥ टेर ॥ षट नव मास जनमसे पहिले, बहु वरसे नग पंचवरन । पितामात सवै आनंद कारन सुरदुंदुभि बाजैजी चन्द्र० ॥ १ ॥ जन्म वियोग सचीपती कीनो, फिर तप लीनो तारन तरन । बरसानल यो प्रभु निरावरन, रविकी छवि लाजैजी । चन्द्र० ॥ २ ॥ इन्द्र हुकुमतैं धनददेवने, रच्यो गगनमें समोस-रन । प्रभुराजत हैं तहां निराभरन, धुनिदिव्य सुगाजैजी ।चंद्र० ॥ ३ ॥ जिनवाणी सबको सुख-दानी, जिन जीवनने लिया सरन । सब दूर हुवा तिन जनममरन, शिवमाही विराजैजी । चंद्र०

॥ ४ ॥ पंचकल्यानक नायक प्रभुजी, एक जिनेश्वर राखीसरन। जिन भाव गहूं करि त्याग परन जगसाजै समाजैंजी ॥ चंद्र० ॥ ५ ॥

(१२) पद जानकी राग मैं।

श्रीचन्द्र प्रभु महाराज अरज सुनलीजै। शुभ ज्ञान दान सुख साज आज मोहि दीजै॥ जिनराज विलंब अब नेक न लावोजी। सुनो हमारी अरज जगतपति हिरदै आवोजी॥ १ ॥ या जगमें भ्रमत अनादि बहुत दुख पायो। गति चार चुरासी लाख जोनि भ्रम आयो॥ महाराज मिला नहिं सरन सहाईजी। परम दिगंवर सुगुरु कृपासे निजनिधि पाईजी॥ श्रीचंद्रप्रभु० ॥ २ ॥ तुम चरन कमलको देव इन्द्रशिर नावैं। गुणगावैं निरखि मुनिराज पार नहिं पावैं॥ महाराज विरद सुन आशि लगाईजी। करुनानिधि जगत्यार शिरोमणि प्रतिपाल जगतमें होउ सहाईजी। सैर—अरहंत संत महंत सबमें यही जाहिर बात है। जगमाहिं और न

देव दूजा, तुम समान लखात है। जगपाल दीन-दयाल तुम ही, अरज यह सुन लीजिये। संसार सागर पार मोकों करि कृपा जस लीजिये॥

चौपाई—अधम उधारक नाम तुम्हारो।
जगजीवन के काज सुधारो॥
ध्यान धरै तस विपति निवारो।
गणधरने यों विरद उचारयो॥

चलत—त्रैलोकपती अब लाज हमारी राखो।
मेरो पूरो कर वृषकाज धर्मको साखो॥
महाराज जिनेश्वर विरद कहावोजी सु०।

[१३] पद नीहालदेकी चालमें।

सुमरन करले पारस देवको दिव शिव सुख दातार॥ सुमरन०॥ टेर॥ पहिले भवमें स्वामी मरुभूति छाजी कोई ब्राह्मन कुल अवतार। कमठ अरीने शिल शिर मारियो जी कोई भयो बली गजसार। सुमरन०॥ १॥ अणुव्रत पाले गजने भावसूंजी प्रभु सुरग बारमे जाय। तहां से चय कर स्वामी नरभव लियो जी २ कोई

विद्याधर नरराय ॥ सुमरन० ॥ २ ॥ तापकरि पहुंचे सोलम दिवविषै जी कोई फिर चक्री पद पाय। मुनिव्रत धरकर स्वामी मेरे वन वसे जी २ कोई हते भीलने आय ॥ सुमरन० ॥ ३ ॥ मध्यम ग्रीवक स्वामी मेरे सुरभयो जी कोई फिर आनंद कुमार। षोड़श कारन भाई प्रभु भावना जी२कोई, प्राणत दिवपति सार। सुमरन० ॥४॥ तहां से चयकर स्वामीमेरे अवतंरथो जी कोई, पारसनाथ महान। पंच कल्यानक महिमा सुर करी जी२ प्रभु धरे जिनेश्वर ध्यान। सुम० ॥

(१४) पद।

अनुपम छवि अविकारी॥नाथकी, आलीजा जिनराज प्रभुकी आछवि लागै प्यारों राजी कोई अनुपम छवि अविकारो, नाथकी निरखन दो असवारी ॥ टेर ॥ पद्मासन दृढ मुद्रा जिनकी, दृष्टि नासिका धारी। वीतरागता भावविराजै, भविजनको हितकारी॥ नाथको० ॥ १ ॥ वस्त्राभरन विना तन सोहै, बालकवत अबिकारी। वि-

षय अनंग महाविषनाशन मंत्रसिखावनहारी ॥ नाथकी० ॥ २ ॥ यदपि ज्ञानविन दिखित ज्ञानको, कारन है अनिवारी । वचन विना मुनि जगजीबनको, दे शिक्षा हितकारी ॥ नाथकी० ॥३॥ आगम अरु अनुमान सिद्ध यों, जिनप्रतिमा भवतारी । कृत्याकृत्य जिनेश्वरकी छवि, पूजो शिवमगचारी ॥ नाथकी० ॥ ४ ॥

(१५)

घड़ी दो घड़ी मंदिरजीमें जाया करो, २ एजी जाया करो, जी मन लगाया करो, घड़ी ॥ टेर ॥ सब दिन घर धंदामें खोया, कछु तो धर्ममें विताया करो ॥ घड़ी० ॥ १ ॥ पूजा सुनकर शास्त्र भी सुणल्यो, आध घड़ी तो जापमें विताया करो ॥ घड़ी ॥ २ ॥ कहत जिनेश्वर सुन भविप्रानी, जावत मनको लगाया करो ॥ ३ ॥

(१६) लावनी राग भैरवीमें ।

अपना भाव उर धरना प्यारेजी, अपना भाव सुखदान बड़ा । अपना भाव जिनने उर धा-

रा, तिन पाया शिव थान बड़ा ॥ टेर ॥ नर भव पाय चतुर मति चूकै, यह मोका हितदान बड़ा। जो करना सो निजहित करलै, चिंतामन सम जान बड़ा ॥ अपना० ॥ १ ॥ धन जोबन बादल-की छाया, को इसमें ललचाता है। इन ही भा-वनतैं सुन प्यारे, कर्म अरी भरमाता है ॥ अपना० ॥ २ ॥ धन संबध करमकी छाया, इन सबमें तू न्यारा है। ये जड़ प्रगट अचेतन प्यारे, तू सब जाननहारा है ॥ अपना० ॥ ३ ॥ राग द्वेष मद मोह छोड़कैं, वीतराग परनाम किया। पूरन ब्रह्म परम पद पावन, आप 'जिनेश्वर' सरन लिया ॥ अपना० ॥ ४ ॥

(१७) राग भैरवी।

मिथ्या भाव मत रखना प्यारे जी, मिथ्या भाव दुखदानी बड़ा। मिथ्या भाव तजके निज हेरो, सो ज्ञाता जग जान बड़ा ॥ टेर ॥ निज प-रकों विन जाने जगत जन, कर्म जालमें आते हैं। धन दौलत विषयनिमें फंसिके, बहुत भांति दुख

पाते हैं ॥ मिथ्या० ॥ १ ॥ विषयनसैं हट जा रे सुधी नर, इनका विष चढ़ जावैगा । त्रिसना लहर जहरका मारया, फिर गाफिल हो जावैगा ॥ मिथ्या० ॥ २ ॥ तन धन यौवन जीवन वनिता, इनको जो अपनावैगा । ये तेरे नहिं संग चलैंगे, फिर पाछैं पछतावैगा ॥ मिथ्या० ॥ ३ ॥ तज परभाव स्वभाव सम्हारे, वीतराग पद ध्यावैगा । कहत 'जिनेश्वर' यह जगवासो, तब शिवमंदिर पावैगा ॥ मिथ्या० ॥ ४ ॥

(१८)

सुमती हित करनी सुखदाय, जरा उर अंतर बस ज्याये, अंतर बस ज्याये हिरदै बसज्याधे हित करनी सुखदाय, जरा उर अंतर बस ज्याये ॥ टेरी ॥ दया छिमा तेरो बहन कहीजै सत्य शील थारा भाई ये ॥ सुमती० ॥१॥ समकित तौ थारो तात जी, भवि जीवन को प्यारी ये ॥ सुमति० ॥ २ ॥ श्रीजिनदेव चरन अनुरागी, शिव कामिनकी प्यारी ये ॥ सुमती० ॥३॥

संत सुधीजन तोहि अराधैं, मान जिनेश्वर बानी ये ॥ सुमती० ॥ ४ ॥

(१९) राग मरैठी।

जगउकी झूठी सब माया,अरे नर चेत वक्त पाया ॥ टेर ॥ कंचन वरनी कामिनी, जोबनमें भर पूर। अंतर दृष्टि निहारते, मलमूरत मशहूर ॥ कुधी नर इनमें ललचाया ॥अरे नर०॥१॥ लछमी तौ चंचल बड़ी, विजलीके उनहार। याके फंदेतैं बचोजी, अपनी करो सम्हार। विवेकी मानुष भव पाया, अरे नर चेत वक्त पाया ॥२॥ स्वच्छसुगंध लगायके, करके सब सिंगार। तिहं तनमें तू रति करै जी, सो शरीर है छार, वृथा क्यों इनमें ललचाया, अरे नर चेत वक्त पाया ॥ ३ ॥ तन धन ममता छांड़िकैं रागदोष निरवार। शिव मारग पग धारियेजी, धर्म जिनेश्वर सार ॥ सुगुरुने ऐसें बतलाया अरे नर चेत वक्त पाया ॥ ४ ॥

(२०)

सुगुरु कृपाकर यों समझावैं, इन विषयनमें

मत ना राचै, ये चहुंगति भरमावैं सुगुरु० ॥टेक॥ सपरस वस गज मीन रसन वश, कंटक कंठ छिदावै। नासावस अलि कमलबंधमें. परत महा दुख पावै, सुगुरु० ॥ १ ॥ चक्षु विषयवस दीप शिखामें, अंग पतंग तपावै। करनविषयवश हिरन अरनमें, नाहक प्रान गमावै, सुगुरु० ॥२॥ विषयनके वश हिंसा चोरी, झूंट कुशील कहावै परधन परकामिनिके लोभी, परिग्रहमें चित लावै ॥ सुगुरु० ॥ ३ ॥ इनहीके वश मिथ्या परनति, करत महादुख पावै। याहीतैं जगमाहिं 'जिनेश्वर' मिथ्याविषय छुड़ाबै ॥ सुगुरु० ॥ ४ ॥

(२१)

कर्म बड़ा देखो भाई, जाकी चंचलताई ॥ कर्म बड़ा० ॥ टेक ॥ राजा छिनमें रंक होत हैं, भिक्षुक पावै प्रभुताई ॥ जाकी ॥ १ ॥ निर्धन धनिक होय सुख पावै, धनविन होय निधनताई ॥ जाकी ॥ २ ॥ शत्रु मित्र सम सब दुख देवै मित्र करै फिर कुटिलाई ॥ जाकी० ॥ ३ ॥ सुत

त्रिय बांधवको निज जानै, सो निज अहित करै भाई ॥ जाकी ॥ ४ ॥ सुख दुखमैं परदोष न दीजै, यही 'जिनेश्वर' बतलाई ॥ जाकी० ॥५॥

(२२)

तुम त्यागो जी अनादी भूल, चतुर सुविचारो तौ सही ॥ टेक ॥ मोह भरमतमभूल, अनादी तोडो तौ सही। ऐजी निज हितका रख-ज्ञान, दृगन सुधारो तौ सही ॥ तुम ॥ १ ॥ जीवादिक सततत्त्व स्वरूप विचारो तौ सही। निश्चय अरु व्यवहार, सुरुचि उर धारो तौ सही ॥ तुम० ॥ २ ॥ विषयमहाविष त्याग सु, संजम धारो तौ सही। चहुंगति दुखका बीज, सुबंध-विदारो तौ सही ॥ तुम० ॥ ३ ॥ सब विभाव परत्यागि, सुभाव विचारो तौ सही। परमातम पदपाय जिनेश्वर तारो तौ सही ॥ तुम० ॥ ४ ॥

(२३) पद राग रेखता।

आपके हिरदै सदा,सुविचार करना चाहिये।
जापकर निजरूपका, निरधार करना चाहिये॥

टेक ॥ त्यागकैं परकी झलक, निजभावको परखा करो । चढ़ि वीतरागता शिखर, फिर ना उतरना चाहिये । आपकु० ॥ १ ॥ धारिकैं समता सहज, तज दीजिये ममता सबै । लोभविषयनिकेविषैं, नाहक ना गिरना चाहिये ॥ आपके ॥ २ ॥ जान निजपरको सजन, कल्यानकी सूरत यही । संसार सागरपार यों, जल्दीसे तिरना चाहिये ॥ आपके० ॥ ३ ॥ श्रद्धा समझकर आचरन, जिनराजका मारग यही । हितदाय जिनेश्वर धर्मको, इख्त्यार करना चाहिये । आपके० ॥ ४ ॥

(२४) रेखता ।

जिनधर्म रत्नपायके, स्वकाज ना किया । नरजन्मपायके वृथा, गमाय क्यों दिया ॥ टेर ॥ अरहंतदेव सेव सर्व सुक्खकी मही । तजके कुधी कुदेवकी, अराधना गही ॥ पश अन्द तो परतच्छ, स्वच्छ ज्ञानको हरैं । इनमें रचे कुजीवजे, कुजोनिमैं परैं ॥ जिनधर्मरत्न० ॥ १ ॥ पर संगके परसंगतैं, परसंग ही किया । तजके सुधास्वरू-

पको, जलक्षार ही पिया ॥ जिनधर्ममद मोह काम लोभकी, झकोरमें परो । तज इनको ये वैरी वड़े, लखि दूरसे डरो । जिनधर्म० ॥ २ ॥ हिरदै प्रतीतकीजिये, सुदेव धर्मकी । तजि राग-दोष मोह, औ कुटेव कर्मकी ॥ सजि वीतराग-भाव जो, स्वभाव आपना । विधिबंध फंदके निकंद, भाव आपना ॥ जिनधर्मरत्न० ॥ ३ ॥ मनका मता निरोध, बोध सोध लीजिये । तजि पुण्य पाप वीज, आप खोज कीजिये ॥ सधर्मका यह भेव श्री, गुरुदेवने कहा । शिववासकाज यों, 'जिनेशदासने' गहा ॥ जिनधर्मरत्न० ॥ ४ ॥

(२५) पदख्याल ।

श्रावक कुलपायो, अपनो क्यों इष्ट गमायो धर्मको ॥टेर॥ श्रावकधर्मपंचपरमेष्टी इष्ट कह्यो भगवान । जिनको नाम धाम विन जाने, मूरख करत गुमानजी ॥ श्रावक० ॥ १ ॥ अपने २इष्ट देवको, सव ही पूजै ध्यावै । इष्ट तज्यो सो नर या जगमै, पापी ही कहलावैजी ॥ श्रावक० ॥२॥

परमसुगुरुउपदेश शास्त्रको, हिरदैमें नहिं आयो
बालख्याल मदमोहजालमें, योंही जन्म गुमायो
जी ॥ श्रावक० ॥ ३ ॥ मूलविना फल फूल ल-
गैना, यों सतगुरु समझावै । जो वेश्याका पूत
होय सो, बाप किसै बतलावैजी ॥ श्रावक० ॥४॥
शीलवती पतिवरता नारी, निजपतिहीको चावै ।
कैसो ही दुख क्यों न परै वह, व्रत अपनों न
गमावैजी ॥ श्रावक० ॥ ५ ॥ ये दृष्टांत जानकर
अपने, मनमैं आप विचारो । रागद्वेषको त्याग
जिनेश्वर आज्ञा उरमें धारोजी ॥ श्रावक० ॥६॥

(२६) रेखता ।

रतनत्रयधर्म हितकारी, सुगुरुने यों बताया है ।
मिलैना दाव फिर ऐसा, वक्त यह हाथ आया
है ॥ टेर ॥ सुकुलनरजन्म मुस्किल है, नहीं हर-
वार पाता है । सुसंगतिज्ञान उत्तम क्या हमेशा
हाथ आता है । रतन० ॥ १ ॥ सुभगजिनदेवका
पाना, सुरुचि जिनधर्मकी आना । स्वपरविज्ञा-
न मनमाना, मिलै यह मुसकिलसे बाना । रतन०

॥ २ ॥ अरे नर दाव यह पाया, कहा विषय-निमैं ललचाया । सुधारस छोड़ विष खाया, रतन तजि कांच मनभाया ॥ रतन० ॥ ३ ॥ गमाओ वक्त मत प्यारे, तजो ये भोग अहित्कारे जिनेश्वर वचन ये धारे, जिन्होंको मिलते सुख-सारे ॥ रतन० ॥ ४ ॥

(२७) ख्याल ।

सुनियो भविलोको करमनकी गति बांकड़ी सुनियो० ॥ टेर ॥ तीरथ ईश जगतपति स्वामी रिषभदेव महाराज । एकवर्ष आहार न मिलियो, भयो असंभव काजजी, सुनियो ॥१॥ अर्ककीर्त्ति परनारी कारन, जयकुमारसे हार । कीरति खोय दई सब छिनमें, कर्म उदय अनिवार जी, सुनियो० ॥ २ ॥ विधिवस रावन हरी जानकी, अपजस भयो अपार । पांडव पांच भेषधर निकले, तव पायो आहारजी । सुनियो० ॥ ३ ॥ छप्पनकोडि यदुवंश कहावे, हरित्रिखंड पतिसार । जनमत मंगल भयो न जिनके, मरे न रोवनहा-

रजी सुनियो० ॥ ४ ॥ कर्मनकी गति रुकै न काहू, तीनलोक मंझार । एक जिनेश्वर भक्ति जगतमें, शिवसुखदायक सारजो सुनियो० ॥५॥

(२८)

श्रीगुरु यों समझाई जिया राग बड़ो दुखदाई ॥टेर॥ राग उदय परवस्तुग्रहणकर, जानों नितहितदाई । अथिर पदारथको थिर मानै, मोह गहल अधिकाई ॥ जिया० ॥ १ ॥ हिंसादिकबहुपाप आरंभे, जनम जनम दुखदाई । निज पद तीन लोकके स्वामी, सो दीनो विसराई जिया० ॥ २ ॥ राग सचिक्कनसों चित लागै, कर्मधूल अधिकाई । राग अग्नि निजगुण उपवनको, छिनमें देत जराई ॥ जिया० ॥ ३ ॥ वीतराग जिनने क्या कीनो, समझो हिरदै भाई । तज संकल्प विकल्प जिनेश्वर, वीतराग पद ध्याई जिया० ॥ ४ ॥

(२९) पद मराठी ।

कल्पतरु जिनवरवृष छाया, धार भवि जी-

वन सुखछाया ॥ टेर ॥ जगत दुखसागर अति-
भारी, जगत बहु देखत भयकारी ॥ रहे जे जग
में अविचारी, सहैं वे दुख भी अतिभारी ॥दोहा
जगदुखदुखिया जीवको, दुखसे लेइ निकार।
सुखी करै सो जगतमें, 'धर्म' कहावै सार, दिगं-
बरगुरुने इम गाया, धार० ॥ १ ॥

देवगुरु आगम सरधानो, धर्मका मूल यही
जानो। शास्त्रमें लच्छन पहिचानो, परखकर इन-
को उरमानो ॥ दोहा-विना परख गुरुदेवकी, करैं
अज्ञानी सेव। मदमातो हट पच्छमें, नहिं जानै
गुरुदेव ॥ रतन चिंतामनि कर आया धार०॥२॥

दोष अष्टादश परिहारी, अनूपम गुण अ-
नंत धारी ॥ दिगंबर रत्नत्रय धारी, परमगुरु
सबको हितकारी ॥ दोहा—जिनवर आगममें
कह्यो, यह सरधा उरधार। श्रावक मुनिवरधर्मको,
सफल करै यह सार ॥ इसीसे दिवशिव सुख-
पाया, धार० ॥ ३ ॥

सुभग यह जिनवर दरसाया, सुफलकर

श्रीगुरु दिखलाया ॥ मुझे अरि जिसको तरसाया, स्वबल यह हिरदैं दरसाया ॥ दोहा-धन्य गुरू परमार्थी, निजपरहितकरतार। असरन सरन सहायहो, या कलिकालमझार, जिनेश्वर धर्म सुगुरु भाया धार० ॥ ४ ॥

(३०) पद।

दुर्लभ पायो जिनवर धरमको करले अपनो काज। टेर, मानुष भवमें मनमेरा आयके, नहिं देख्यो निजरूप। तिन जीवनको मनमेरा जीवनो, विनपानीको कूप ॥ दुर्लभ० ॥ १ ॥ एक कंचन अर मनमेरा कामनी, जगजाहर बटमार। इनके वस जग मनमेरा डूबियो, अपनी कीज्यो सम्हार। दुर्लभ० ॥ २ ॥ विषयवासना मनमेरा त्यागके, करले तत्त्व विचार। जिनवर वच उर मनमेरा धारकेंजो, जिनको कीज्यो विचार दुर्लभ० ॥ पांचो इन्द्री मनमेरा वस करोजी, पालो संजम संत। रागद्वेषको मनमेरा परिहरोजी, यही जिनेश्वर पंथ ॥ दुर्लभ० ॥ ४ ॥

(३१)

त्रिदशपंथउरधार चतुर नर यो वरनो जिनवानीजी ॥ त्रिदश० ॥ टेर ॥ तीर्थंकरको भक्ति हृदयधरि, परिगहविनगुरुज्ञानीजी । जिनमतगुरु जिनचारिसंघकी, भक्ति करो सुखदानीजी ॥ त्रिदश० ॥ १ ॥ पंचपाप निजबलसम त्यागो, चारकषायदबानीजी । सज्जनता गुणखानजीवकी, संगतिसहित बखानीजी ॥ त्रिदश०॥२॥ इन्द्रियदमनशक्तिसमकीजो, दानचार वरदानीजी । यथाशक्तिसम्यकतप करना, द्वादशभावसुध्यानीजी त्रिदश० ॥ ३ ॥ भवतनभोगविरागभाव यों, तेरहपंथप्रमानीजी । मुक्तावलीशास्त्रमें शशिप्रभु, कही जिनेश्वरबानीजी ॥ त्रिदश० ॥ ४ ॥

(३२) पद राग ख्याल ।

मति वृथा गमावैं, सहसा नहि पावै, मानुष जन्मको ॥टेर॥ मानुषजन्म निरोगी काया, उरविवेक चतुराई । धर्म अधर्म पिछान किये विन, काम कछू नहिं आईजी ॥ मति वृथा० ॥ १ ॥

जिनवर धर्म दिगंवर ताकों, यदि उरधरनोंभाई। तौ आगम अनुसार देवगुरु, तत्त्वपरखि सुखदाईजी ॥ मति वृथा ॥२॥ खान पान अरु विषय-भोगके, सेवनकी चतुराई। कूकर शूकर पशुभी करते, यासें कहा बड़ाईजी ॥ मतिवृथा० ॥ ३ ॥ क्षणभंगुरविषयनिके काजै, निर्भय पाप कमावै। है नर करत कहा अनरथ यह, शुभशिक्षा न सुहावै जी ॥ मतिवृथा० ॥ ४ ॥ बहुविधिपाप करत हरखावै, सब कुटंबमिलखावै। दुखपावै जब नरकधरासैं, कोईय न काम जु आवैजी ॥ मतिवृथा० ॥ ५ ॥ मानुषदेह रतनसम पाकर, जो निजहित करवावै। कहत 'जिनेश्वर' सो नरभवके, धारनकौ फल पावैजी ॥

(३३) लावनी रंगत लंगड़ी।

परनारीसे दूररहो परनारी नागनकारी है। नरकनिशानी धर्मका पंथ विगारनहारी है ॥टेर॥ अत्रसुगंध फुलेल लगाकर, अंग दिखावन हारी है। बड़े ढोंगसे मुफतका माल उड़ावन हारी है।

ऊपर चमक दमक अति सुंदर मोह जगावनहारी है। दीपशिखासी अधमनर, जंतु जरानेवारी है ॥ संत जिनोंसे दूर रहै सो हजार पुरुषकी नारी है। नरकनि० ॥ १ ॥ ऊपर कोमल वचन सुधासम बोल बोल मन ललचावै । उर अंतरमें किसीकी कभी नहीं खातिर ल्यावै ॥ मूरख मोही सरवथा मन, लगा लगाकर बललावै। धरम गुमावन पावै इष्ट दुखी हो विललावै ॥ परनारीकी प्रीत सबनको दाग लगानेवारी है। नरकनि० ॥ २ ॥ चितवन बकसम फनी विषधरी विषकी बुझीकटारी है। लागै उसको उसी दम करै कुगतिकी त्यारी है ॥ लगै दूरसे चोट ओट फिर खून सुखावनहारी हैं। घायल होकै हरीहर ब्रह्मा बुद्धि बिसारी है॥ कठिन कटारी अजसकी फांसी सज्जनने परिहारी है ॥ नरक० ॥ ३ ॥ परवस दीनबनै जस खोवै ज्ञान ध्यान घननाहि रहै । जोवन छीजै बुद्धिबल रूपचतुर पन नाहि रहै ॥ धीरज साहस अरु उदारता

सुविद्धर्म मन नाहि रहै । एक शील विन सुगु-
ण सब दूर सूरपन नाहि रहै ॥ कहै जिनेश्वरदा-
स सरवथा दुखसमुद्र परनारी है ॥ ४ ॥

(३६)

वनमें नगन तन राजै, योगीश्वर महाराज वनमें०
॥ १ टेर ॥ इक तो दिगम्बर स्वामी, दूजो कोई
नहि साथ ॥ वनमें० ॥ १ ॥ पांचों महाव्रत धा-
री, परीसह जीते बहु भांति ॥ वनमें० ॥ २ ॥ जि-
अतन मन मार्यो, हिरदै धार्यो बैराग ॥ वनमें०
॥ ३ ॥ रजनी भयानक कारी, विचरैं व्यंतर वै-
ताल ॥ वनमें० ॥ ४ ॥ बरसै विकट घनमाला,
दमके दामिनि चालै वाय ॥ वनमें० ॥ ५ ॥ स-
रदी कपिन मद गालै, थरहर कांपै सब गात ॥
वनमें० ॥ ६ ॥ रविकी किरण सर सोखै, गिरपै
ठाड़े मुनिराज ॥ वनमें० ॥ ७ ॥ जिनके चरनकी
सेवा, देवे शिवसुख साज ॥ वनमें० ॥ ८ ॥ अ-
रजी जिनेश्वर येही, प्रभुजी राखो मेरी लाज ॥ ९ ॥

(३७) संगत लंगड़ी ।

परम वीतरागी गृहत्यागी शिवभागी निरग्रं-

थ महान। अचरजकारी जिन्होंकी, परनति जानै सकल जहान॥ टेर॥ त्रस थावर हिंसा तज दीनी, झूठ वचन नहिं भाखत हैं। परिग्रहत्यागी दया षट काय तनी उर राखत हैं॥ चोरी तजैं महादुखदायी, पर सनेह सब राखत हैं। निजमें रचिकै गुरुजी, ब्रह्मचर्य रस चाखत है॥ रेखता— निरखिके पग धरैं भूपर, मधुर हितमित वच कहे। अहार शुद्ध समाल बृष उपकरन निरखि धरै गहें॥ मलमूत्र हू निर्जंतु भुवि, एकांतमें छेपै सही। षट वंदनादिक अवशि कारज, नित करे बृषकी मही॥ पंचेंद्रियको वशमें राखै, तिनको वर्णन सुनो सुजान॥ अचरज०॥ १॥

सुंदररूप सची रतिरमनी, वा राक्षसनी भेष कराल। सुखदुखकारी और जे, जड़ चेतनके भेष कराल॥ कोमल कठिन दुर्गंध सुगंधित, रसनोरस वच शुद्ध कराल। समकर जानै न जानै, पर परनतिकों अपनी चाल॥ सैर—दृष्टि सब दिश छांडकैं, नाशाग्रमैं थिरता लही। मनविषय

और कषाय तजि, शुभध्यानमें थिरता गही ॥ दृढ़ धारि आसन मौन सेती, शुद्ध आतम ध्यावते । तनमन वचन वश करै गुरु वे, सुरग शिवसुख पावते ॥ एकबार भोजन आदिक अठ, वीस मूलगुण धारक जान ॥ अचरज० ॥२॥

सूखजाय सरवरपर रीता, पंथी पथतज दीना है । ग्रीषमऋतुमें चील निज, अंडनको तज दीना है ॥ जलचारी अरु पवन अहारी, नभचारी इम कीना है । तज निज थलको जिन्होंने, सघन वनाश्रय लीना है ॥ सैर—ऐसी विकट गरमी विषै गिर, गुफा वनकों छोडकैं । शिल शैल श्रृंग समाधि धार्यो आस,जीकी छोड़कैं ॥ जिनकै सुभानन भान सनमुख आममाननभान है । बहु ज्योति मूरतधीर धारी इन समान न आन है ॥ एकबार जिनके दर्शनतैं सभी, निकट आवै कल्यान ॥ अचरज कारी० ॥ ३ ॥

घन गरजै लरजै अतिदादुर, मोर पपैया शोर करैं । चपला चमकै पवनचालै जलधारा जोर

परै ॥ तरुतल निवसै सुगुरु साहसी, अचल अंग तप घोर करै। शीतकालमैं नीरतट, तपसी तप अति घोर करै ॥ सैर—बहुरिद्धि सिद्धि स्वभाव-थिरता, ज्ञाननिधि या भवविषै। पावै तपस्वी सुर असुरपति, मोक्षपद परभव विषै ॥ ऐसे गुरूकी भक्तिकरि बहु, नमूं मनवच कायसौं। गुरुदेव मोहि छुड़ाय दीज्यो, मोहरूपी बायसौं ॥ कुगुरु त्यागकरसेव सुगुरुकी, धरै जिनेश्वर धर्म महान ॥ अचरज कारी० ॥ ४ ॥

(३६) सुगुरुस्वरूप लावनी रंगत लंगड़ी।

कहूं चिन्ह कछु सुनो सुगुरुके, जिनशासन अनुसारी है। भ्रमतमहारी जिन्होंके वचन स्वपर हितकारी है ॥ टेर ॥ प्रथम दिगंबरभेष गुरूका, वस्त्राभूषण त्याग दिया। शांतस्वरूपी अथिर-जग, जान मान वैराग लिया ॥ बनमैं वसै कसै तनमनकूं, निजनिधिमय सद्ध्यान दिया। परि-ग्रहत्यागी अनुपम, ज्ञानसुधा हित जान पिया ॥ वदनचंद्रछवि अनुपम जिननें, वीतरागता धारी

है । भ्रमतम० ॥ १ ॥ असनहेत नहि जात बु-लाये, ना कछु संग सवारी है । भेट न चाहैं अ-सन कछु, मिलै मधुर वा खारी है ॥ रागद्वेष नहिं करै कदाचित, जिनआज्ञा चितधारी है । भोजनकरके गुरू कर, जाय गमन तिहवारी है ॥ यंत्र मंत्र नहिं करै कुकिरिया, निरतिचार ब्रह्म-चारी है । भ्रमतम० ॥ २ ॥ त्रणकंचन अरि-मित्र बराबर, जीवनमरनसमानगिनै । सहै प-रीषह धीरजी, समताको परधानगिनै ॥ काम-क्रोधमदमोह लोभके, परिकरकों दुखदान गिनै । विषयवासना महा अपवित्र पापकी खान गिनै ॥ लोकरीतपरिहरी जिन्हौंने, बृत्ति अलौकिक धारी है । भ्रमतम० ॥ ३ ॥ तारन तरन जैनके गुरुको, यह स्वरूप बाहिरजारी । उरअंतरमैंशु-द्धरतन, त्रयनिधिकों सहचारी ॥ ये ही सरनस-हाय जगतमैं शिवमगमैं ये सहचारी । अचर-जकारी जिन्हींकी परनति है जगतैं न्यारी ॥ गु-रुपदकमल 'जिनेश्वर' उरमें वास करो अनिवारी है । भ्रमतम० ॥ ४ ॥

(३७) लावनी रंगत लंगड़ी।

या कलिकाल महानिशिमें जिन, वचनचंद्रिका जारी है। परिग्रहत्यागी गुरुकी, सेवा शिवहितकारी है ॥ टेर ॥ कुंदकुंद प्रमुखादि-गुरु उप-कार करगये सब जगका। शास्त्रबनाकै सर्व वरताव, दिखागये शिवमगका। सतजिन धर्म लहै सो ज्ञाता, सरनगहै जो इस मगका। ज्ञानचक्षुसें लगें सब, सत्यझूंठ हर मजहबका ॥ ज्ञानविरागविषै सुनि भाई, शिवलक्ष्मी सहकारी है। परिग्रह० ॥ १ ॥ विद्याके अभ्यासविना नहिं ज्ञानवृद्धिकों पाता है। विना ज्ञानके नहीं पर-मागम मर्म लखाता है। परमागम विन धर्म न जानै, धर्मविना दुख पाता है। इसकारनसे एक यह, विद्या शिवसुखदाता है ॥ हाय हाय विद्याके दुस्मन, आज धर्मअधिकारी हैं ॥ परिग्रह० ॥ २॥ विषयवासना फसिकें जिनने धर्मकमको लोप-दिया। लोभउदयसे जिन्होंने, सतमारगको गोप किया ॥ धर्मकल्पतरुकाटि आपने, पापवृक्षकों

रोपदिया। धिक धिक इनकों सत्य कहनेवालों पर कोप किया ॥ कहा कहों मैं विषयचाहवस, बनगये आप भिखारी हैं। परिग्रह० ॥ ३ ॥ तज कर ज्ञानविरागआप बन, गयेविषयवश अज्ञानी। खानपानमें ऐस इस्तरमैं सबके अगवानी ॥ धम-मूल अरहंतदेव निर, ग्रंथ गुरू है जिनवानी। इनके संगमें महाशठ, भैरूंकी पूजा ठानी ॥ अर्ज जिनेश्वरदेवसुनो, यह मोहकर्म अभिवारी है ॥ परिग्रह० ॥ ४ ॥

(३८) लावनी रंगतलंगड़ी। (कुगुरुस्वरूप)

सम्यग्ज्ञान विना जगमें, पहिचाननवाला कोई नहीं। जैनधर्मका यथावत,जाननवाला को-इ नहीं, ॥ टेर ॥ पहिले ज्ञान आपकों चहिये, विना ज्ञान क्या समझैंगे। सत्यझूंठका कहो वे, निरनय कैसैं करलेंगे ॥ विन निर्धार किये जि-नमतके, उर प्रतीत क्या धरलेंगे। विन प्रतीतके क्रियाकरि, भवदधि कैसैं तिरलेंगे ॥ दुर्लभजान ज्ञान होना यह, माननवाला कोई नहीं। जैन-

धर्मका० ॥ १ ॥ गुरुका काम ज्ञानदेना वा, धर्मदेशना करना है। आप धर्ममें लीन हो, कर्म अरीको हरना है॥ हा कलिकालप्रभाव आज गुरु, जगहं जगहं लड़ मरना है। अधर्म करके पापका भार आप सिरधरना है। विन विद्याबल इन बातोंका, छाननवाला कोई नहीं। जैनधर्मको० ॥ २ ॥ ज्ञानदानके बदलेमैं श्रुत, पाठन पठन निवार दिया। पढै जो कोई उसे, पुस्तक देना इनकार किया॥ जहां जिनागमकी चर्चा तहां विन कारन तकरार किया। भोले भाले जहां देखे तहं, रहनेका इकत्यार किया। शिवमगमें ऐसे ठगको गुरु, माननवाला कोई नहीं। जैनधर्मको० ॥ ३ ॥ धर्मदेशनाके बदले लौकीक कथाको करते हैं। बड़े ढोंगसे आप निज विषय विथाको हरते हैं। सरस मनोहर असनवसन सय, नासन नहीं विसरते हैं। बड़े सूर हैं जगतसे, जरा नहीं वे डरते हैं॥ वचन जिनेश्वर सत्य तदपि पहिचाननवाला कोई नहीं, जैनधर्मको० ॥ ४ ॥

(३९) लावनी रंगत लंगड़ी ।

काम क्रोध-वशि होय कुधी जिन, मतके दाग लगाते है। धिक् धिक् इनकों धम बिन, जिनधर्मी कहलाते हैं ॥ टेर ॥ जिनवर वचन उ-थापि आपने, वाग जाल विस्तार दिया। खूब विचारी आपका, संग सहित निस्तार किया ॥ ब्रह्मचर्य व्रत धारि बहुरि, शृंगार गलेका हार किया। खान पानमें पुष्ट रस, भोजनको इक-त्यार किया ॥ इत्र फुलेल सुगंध लगाकर, काम दाह उपजाते हैं। धिक्० ॥ १ ॥ सुनो महाशय अर्ज हमारी, जरा गौर करकें देखो। मृग तृण-चारी जिन्होंके, सुख समाजको नहिं लेखो ॥ शीत उष्ण दुख सहे निरंतर, अरु संकित मनमें पेखो। वे भी वनमें मृगी लखि, कामत्रियामें रत देखो ॥ कहो आप फिर किस कारनसे, निरवि-कार रह जाते हैं ॥ धिकधिक० ॥ २ ॥ भोजन जाय करावै बहुविधि, शुद्ध करावै सेवकसों। यह चालाकी धन्य यह पाप भयो सब सेवकसों

पहिले असन पाय देकरके, पीछे धन ले सेवक-सों । तुष्ट होयकर बारता, करै राग युत सेवक-सौं ॥ तुष्ट सुफल यह रुष्ट भये क्या जाने क्या दे जाते हैं ॥ धिक धिक० ॥ ३ ॥ चौमासाके प्रथम दिवस धरि, भेष दिगंबर पद्मासन । जिन प्रतिमाके सामनै, करै प्रतिज्ञावसनासन् ॥ सेवकगनसे यों कहलावै, वक्त नही सुन गुरु भाषन् । परिग्रह धारो तजो यह, योग्यप्रतिज्ञाको आसन । इम सुन वचन ततच्छन उठकर, फिर भेषी बन जाते हैं ॥ धिक धिक० ॥ ४ ॥ खूब अनुग्रह किया आपने, सेवक गन सब तार दिया । जरा देरमें अधोगति, बंधनका हकदार किया ॥ समझो सेवकगन हिरदैमैं, क्या अनुपम उपहार दिया ॥ ज्ञान चक्षुको खोलकर, देखो क्या उपकार किया ॥ मोंहनींदके जोर अज्ञजन, योंही काल गमाते हैं । धिक धिक० ॥ ५ ॥ आंख खोलकर देखो आगम, भगवतने क्या किया बयान् । देव धर्म गुरु इन्होंका, स-

स्वरूप लीजो पहचान् ॥ इनको जान यथावत निजपर, तत्त्वनको कीज्यो सरधान। यह जिनमतको मूल है, याको पहिले निश्चयजान् ॥ या विन भेष निरर्थक सबही भव बनमें भटकाते हैं ॥ धिक धिक० ॥ ६ ॥

(४०) लावनी राग लंगड़ी।

देखो कालप्रभाव आजपा—खंडजगतमें छाया है। जैनधर्मको नीच लोगोंने, दाग लगाया है ॥ टेर ॥ जगजाहर अरहंत देव निरग्रंथ गुरू हैं जिनमतके। दयाधर्म है जिनागम, सत्यवचन हैं जिनमतके ॥ इनहीको जानै मानै श्रद्धान, करै जन जिनमतके। सिवा इन्होंके औरको, कभी न मानै जिनमतके ॥ इनको तजि अज्ञानोंने मनकल्पित ठाठ बनाया है। जैन धर्मको० ॥ १ ॥ कोई बने कलयुगी अचारज, अरजधर्म विसार दिया। महंत होकै धर्मके, कामोंको इखत्यार किया। पहिले नगन दिगंबर होके, फिर वस्त्रादिक भार लिया। परिग्रह तज-

के वनिज, व्योपार व्याजका कार किया ॥ देखो हीन आचरन करके, भगतनको सरमाया है। जैनधर्मको० ॥ २ ॥ कोई भोले जीव जिन्होंने, जिनशासनको नहिं जाना। जो कुछ जैसी किसीने, कही उसीको सच माना ॥ खान पान लड़नेमें चातुर, पढ़नेमें मन अलसाना। क्रोधी मानी लोभवश, लिया कृपणताका बाना ॥ हाय हाय ऐसे जीवोंने, नरभव वृथा गमाया है। जैनधर्मको० ॥ ३ ॥ कोई उद्यमहीन दीन नर, पेट काज भये ब्रह्मचारी। खानपानकों मिलातब, धर्‍यो भेष स्वेच्छाधारी ॥ पूछे पर वो जबाब दें हम, इतने ही दिन व्रतधारी। धिकधिक उनको धर्म, पद छोड़भये जे गृहचारी ॥ सुनिये देव जिनेश्वर अरजी, यह कलियुगकी छाया है। जैनधर्म को० ॥ ४ ॥

(४१) लावनी गृहस्थाचार्यकी रंगत लंगड़ी।

उत्तम नर जिनमतकों धारें सो श्रावक कहलातेहैं। कोई उन्ही में गृहस्था, चारजका पद-

पातेहैं ॥ टेर—गर्भादिक संस्कार क्रियाजे,सभीक रानेका अधिकार। जिनगृह प्रतिमा प्रतिष्ठा, तथा धर्मके काम अपार॥ व्रतबिधानकी सभी प्रक्रिया, अथवा प्रायश्चित परचार। गृहधर्मीको करावे, इसभव परभव हितव्यवहार ॥ धर्म क्रियाको करते करते, जो उत्तम कहलाते हैं। कोई उन्हीमें० ॥ १ ॥ किरिया विशेष गृहस्थाचारज, करते जिनका सुनो वयान्। जाके सुनते समझलें, सर्व हालको चतुर अयान् ॥ दीक्षान्वय अवतार क्रियामें, ग्रहन करै जिनमत सुखदान। चौथा दरजा त्यागकर, कुदेवपूजन निंद्य महान् श्रीअरहंतदेवके पूजक, सद्गृहस्थ कहलाते हैं। कोई उन्हींमें० ॥ २ ॥ बृतका चिन्ह जनेऊधारैं, नवमी क्रियाविषै वृतवान्। फिर क्रम क्रमसे पंद्रमी, क्रिया लहै उपनीत महान् ॥ प्रायश्चित्त शास्त्रके ज्ञाता, जानत नयनिक्षेप प्रमान। सो बड़भागी गृहस्थाचारज जानों सम्यकवान् ॥ सभी गृहस्थी उन को मानै, जो श्रावक कह-

लाते हैं। कोई उन्हीमें० ॥ ३ ॥ श्रामत आदि-
पुराण शास्त्रमें, उन्तालिसमा है अधिकार। दी-
क्षान्वयकी क्रिया उपनीतविषे देखो निरधार ॥
गुण लक्षण पहिचान सुधोजन, यथायोग्य करते
व्यवहार। विना परखके धर्मधन, खोवै मूरख
जीव अपार ॥ यही जिनेश्वरकी आज्ञा है, जो
श्रावक उरलाते है, कोई उन्ही में० ॥ ४ ॥

(५२) लावनी रंगत लंगड़ी।

कर्म उदय अनिवार जगतमें, सभी जीव
भरमाये हैं। कर्म उदयकी चालमें, बड़े पुरुष
भी आये हैं ॥टेर॥ युगके आदि तीर्थंकरस्वामी,
छै महिना विन असन रहे। कर्मउदयसे सुपा-
रस, पारस जिन उपसर्ग लहे ॥ कर्मउदय च-
क्रीपदपायो, भरतेश्वर बहु सुक्ख लहे। कर्म
उदयसे उन्होंने मान भंगके दुःख सहे ॥ रेखता-
जो आदिकुलका तिलक क्षत्री, अर्ककीर्ति कु-
मार है। भारतेशका बेटा बड़ा युव, राजनृप-
शिरदार है ॥ परनारिकाज अकाज सो, क्या

करै अपजसकार है। यह कर्मकी करतव्यता, जगमैं बड़ी अनिवार है ॥ बहुतवार जगजीव-कर्मने, बहुतभांति भटकाये हैं ॥ कर्मउदयकी० ॥ १ ॥ कर्म उदय दशरथराजाने, रघुवरसे सुतपाये थे। कर्म उदयसे उन्हीको, वनके वास कराये थे ॥ लछमनके रावनकी शक्तीलगी राम घबराये थे। कर्म उदयसे पवनसुत, नारि विसल्या ल्याये थे ॥ रेखता—फांसी लगाके वन-विषैं वनमालि जिसकी चाहमें। मरती वही लछमन तहां, विधियोग पहुंचे राहमैं ॥ संबूकने बारहबरष, साधा खड़ग दुखपायके। विधिजोगसों सहजे लयो, लछमनने हाथबढ़ायके ॥ तिह असिसे संबूक कुमरनें, बनमें प्रान गमाये हैं ॥ कर्म उदयकी० ॥ २ ॥ कर्म उदय पांडव बहुभटके, अपने नाम छिपाये थे। देश देशमें उन्होंने, रूप अनेक बनाये थे ॥ बारह बरस सहे दुखभारी, भोजन भी नहि पाये थे। कर्मयोगसे विप्र बनपाल ग्वाल कहलाये थे ॥

रेखता—विधियोग नंगे पगचली, वह विकटवन की बाटमें। सतवंति रानी द्रौपदी, मालिन बनी वैराटमें॥ अति विकट रनकर राजपायो, आपनो हरिसाथमें। विधियोग फिर भी देशछूट्यो, कर्म नहिं निज हाथमें॥ क्या कोई तदवीर करै नर, पदवोधर घबराये हैं॥ कर्मउदयको० ॥३॥ नगर शेठ कोटीध्वज घरमें, जन्म हुआ सो शेठ कुमार। कर्म उदयसे विसन में, खोया सारा द्रव्य गमार॥ कर्म उदय पर देश भ्रमनमैं रहा न बाकी दुःख लगार। कर्म उदयसे उसीने, फिर भी पाया निधिभंडार॥ रेखता—कर्म ही सों राज पावै, कर्म तावेदार है। कर्महीसौं रंक बनकर, फिर बनै सिरदारहै॥ जितनी अवस्था कर्म कृत, सो नहीं निज इकत्यार है। वह धन्य है संसार में जो, करै आपसम्हार हैं॥ कर्म जीत पद लहै 'जिनेश्वर' वे जगदीशकहाये हैं॥ कर्म उदयको० ॥ ४ ॥

---

(४३)

जोलों कर्म जोग जीवन के तौलों निज न-लखाता है। कर्म जोगका नाश कर, अचलरिद्धि नर पाता है ॥ टेर ॥

दौड़ रेखता—कर्म ही जगमें बड़ो सब कर्म ही के हाथ है। कर्म ही ऊंचा करै फिर कर्म नीचा-पातहै ॥ बहुराजकाज समाज संपति, कर्म हीके-साथहै। वसुकर्म हनि शिवसुखमिलै, यह बात जग विख्यातहै ॥ कर्मयोगसों जोगमिलै सब,वि-षय भोग सुरथान महान्। कर्म योगसों सकल-परि, वार सुरासुर मानै आन् ॥ कर्मयोग प्यारी देवीका, किया अचानक प्राणपयान्। कर्मयो-गसें दूसरी, देवी आई उसी समान् ॥ रेखता--बहुरिद्ध दूजे देवकी, लखिके भयो दिलगीर है। अथवा हुआ वाहन किसीका, सदा दुख जंजीर हैं ॥ मरते समय छोटे वड़े, सुर ना धरै उरधीर हैं। विधियोग वहांसे आयकैं, पावै कुयोन शरीर है ॥ हा धिक धिक इस कमयोगको, क्यासे क्या दिखलाता है। कमयोगका० ॥ १ ॥

कर्मयोग मानुषगति पाई, मन भाई संपति अरु नार। कर्मयोगसे भोग मनभावन, पाया दिन दो चार॥ कर्मयोगका भोग बदलते, हो बैठे छिनमें लाचार। कर्मयोगसे वही फिर, भये मुसाइब नृपदरवार॥ रेखता--गाफिल न होना भ्रात यह, संसार स्वप्न समान है। सुखदुख सभी परवार परिकर, प्रगट निजसे आन है॥ यदि इनमें ललचायगा, पछतायगा चिरकाल है। जग जालमें विधि जालसे, वच काल आप सम्हाल है॥ कर्मयोगमें रचे जिन्होंके दुखका अन्त न आता है। कर्मयोगका ॥२॥

माता सुता सुता माता तिय तात भ्रात सुत होते हैं। आप पुत्रके पुत्र हो, गूंगे बन मुख जोते हैं॥ आप आपके पुत्र होय, ये कर्मयोगके गोते हैं। कर्मयोगसे जीव छिन, छिनमें हंसते रोते है॥ रेखता—यह मित्र यह संसार भारी, वन भयानक घोर है। बहु कुमत तम अन्धियार छाया तासको अति जोर है॥ जहं विषय और

कषाय तस्कर, दुखद अतिचहुं ओर हैं। विधि-योग सिंहसमूह जिनको, अति भयानक शोर है। इन्द्रजालसे अधिक अथिरपन, कर्मयोग दिखलाता है। कर्मयोगका० ॥३॥

कर्मयोगसे सती निरादर, आदर व्यभिचारिन पावै। कर्म योगसे चौर ठग शाह, ठग कहलावै॥ कर्मयोगधर्मी दुख पावै, पापी मनमें हरषावै। कर्मयोगसे रंकजन, अतुल राज संपति पावै॥ रेखता—याकर्म ही के योगसों, नारक दुखी बहु रटत है। तिरजंच दुख जाहर सबैं, परतच्छ सो सब सहत है॥ इस कर्मके संयोगसे क्या क्या, न दुख जन लहत हैं। जिनधर्म धरि निरवार विधिकों, यह जिनेश्वर कहत है। तीन लोक तिहुंकाल भावमैं कर्मयोग दुख दाता है॥ ॥ कर्मयोगक० ॥ ४ ॥

(४४)

कोई नहिं सरन सहाय जगतमैं भाई। मोही नहिं मानै सुगुरु वचन सुखदाई॥ टेर॥ ज्यों

नाहर पगतर पस्यो हिरन बिललावै। त्यों जीव कर्मवश पस्यो, बहुत दुख पावै॥ या जगत विषै अति बली, इंद्र नश जावै। हरिहर ब्रह्माको काल ग्रास कर जावै॥ तब और कौन अब होगा सरन सहाई, मोही० ॥१॥ जब कर्म उदय दुख होय जीव विललावै। तिहिवार अनेक प्रकार जतन करवावै॥ विन पुण्य उदयके दुखका अंत न आवै सब जंत्र मंत्र औषधी, विफल होजावै॥ कोइ राख सकै नहिं जीव देह तजि जाई। मोही० ॥ २॥ जब आवै आयुको अंत मरन तब होवै। मूरख मनमें पछताय बहुतसा रोवै॥ विपरीत काम कर बीज पापका बोवै। सब देवी देव मनाय धम निज खोवै॥ नहिं कभी किसीने किसीकी आयु बढ़ाई ॥ मोही० ॥ ३ ॥ ग्रह व्यंतर भैरव जच्छ जोगिनी माता। मिथ्यातभाव वश निश दिन तिन्हे मनाता। नहिं पावै मनका इष्ट दुखी बिललाता। तौभी नहिं छोड़ै निंद्य टेव दुखदाता॥ जगमाहिं जिनेश्वर सरन सदा सुखदाई। मोही० ॥ ४ ॥

(४५) पद मराठी ।

करमवश चारों गति जावै, जीव कोई संग नहीं आवै ॥ टेर ॥ अकेलो सुरगोंमें जावै, अकेलो नरक धरा धावै । अकेलो गर्भ माहिं आवै, अकेलो मनुष जन्म पावै । दोहा--बूढा होवै आपही, थरहर कांपै देह । बलवीरज जातों रहैसजी, घरके तजैं सनेह, गेह तज द्वारामैं ल्यावै, जीव कोई संग नहीं आवै । कर्म० ॥ १ ॥ उदयवस रोग जबै आवै, बहुत फिर मनमें पछतावै । एक छन थिरता नहिं पावै, कुटुंब सब बैठो बिललावै ॥ दोहा--चलै दवाई एक ना, बड़े बड़े उपचार । कोई काम नहिं आवईसजी, गये वैद्य सब हार, विपतिमैं बहुविधि बिललावै । जीव कोई० ॥ २ ॥ अकेलो मरन दुःख पावै, अकेलो दूजी गति जावै । अकेलो पापविषै धावै, अकेलो धर्मी कहलावै ॥ दोहा—पाप उदय नारकि बनै, दुखी रहै दिनरात । पुण्य उदय सब संपदा सजी, लहै अकेलो भ्रात ॥ सुखी सुरगतिमैं कह-

लावै जीव कोई० ॥ ३ ॥ अकेलो मिथ्या परिहारै, अकेलो समकित उर धारै। अकेलो कर्म सभी टारै, अकेलो अक्षय पद धारै। दोहा—यही अकेलो जगतमें, यही आतमा राम। कही जिनेश्वर देवने सजी, गई सुबुधि गुणधाम, स्वहित निज संपति दरसावै। जीवको० ॥ ४ ॥

(४६) लावनी रंगत लंगड़ी।

कर्मजोग संपति मिल बिछुरै, फिर छिनमें मिल जाती है। कर्मयोगको अथिरपन जान, जान घबराती है ॥ टेक ॥ कर्म जोग जोगी बन बन बन, नगन चरन मग धरते हैं। कर्मयोगसें वही फिर इंद्रासन सुख भरते हैं ॥ कर्म जोग हाथी असवारी, छत्र शीशपर फिरते हैं। कर्मजोगसे वही शिर, बोझ धार मग गिरते हैं ॥ सैर--कर्मके परसंगसे परसंग सब मिल जात हैं। सुख दुख अनेकन वार जगमैं, मिलन थिर न रहात हैं ॥ सुत मित्र धन परिवार प्यारो, नार अथिर लखात हैं। फिर मित्र विधिवश क्यो पड्यो, तू

क्या यहां कुशलात है ॥ सुंदर तन जोबनकी आभा, दामनि ज्यों दरसाती है। मर्मयोगको० ॥ १ ॥ कर्म योगसें रानी अंजना, पतिवियोग दुख पाया था। कर्म योगसें बरस बाईस नृपति नहिं आया था ॥ कर्म जोग परदेशी पतिसें, मिल करके सुख पाया था। कर्म जोगसे सासने वन् वन् वास कराया था ॥ सैर—हनुमंतसे बलबीरकी माता, महा दुख पावती। कैसैं विकट बन छोड़कैं, मामाके घर वह आवती ॥ क्या मात कोई गिरे सुतको, जीवता फिर पावती। या कर्मकी करतव्यता, कछु ख्यालमें नहिं आवती ॥ घर आई संपति नसि जावै, दुर्लभनिधि मिलजाती है। कर्मजोगको ॥२ ॥ कर्म जोगसे सीता रानी वन वनमें भटकानी थी। कर्म जोगसे दशानन हितकी बात न मानी थी ॥ अर्जुन कोप्राणोंसे प्यारी, सती द्रोपदी रानी थी। कर्म जोगसे वही फिर, नृपके हाथ हरानी थी ॥ सैर—भारी समंदर पार रानी, रहत अरिके सदनमैं। अति

बिकट सरकी चोट भारी, लगी ताके बदनमैं। विधिजोग तहँ भी पतिसमागम, मिल्यो हरिके जतनमैं। बहुकाल शील सम्हाल राख्यो, साहसी दुखपतनमैं॥ बड़ी बड़ी तदवीर जगतमैं सभी, विफल हो जाती हैं। कर्मयोगको ॥ ३ ॥ कर्मजोग श्रीकृष्णजन्मका नाहीं मंगलाचार हुआ। कर्म जोगसे त्रिखंडी हरिप्रताप विस्तार हुआ॥ कर्मजोगसे तृषित वनीमें आतबान पग पार हुआ। कर्मजोगसे मरनके, समय न रोवनहार हुआ॥ सैर—या कर्मकी करतव्यता, भाई बड़ी दुर्लच्च है। जानी परै नहिं जगतमैं, जिनराजके परतच्च है॥ त्यागो कुसंगति विषय, और कषाय जो जगदच्च है। पावो सभी सुख संपदा जो, जगतके परतच्च है॥ कर्मजोगतैं सिद्धि 'जिनेश्वर' जाकरले फिर आती है। कर्मजोगको० ॥ ४ ॥

(४७) लावनी रंगत लंगड़ी।

मोह अरीकी सेनामैं यह, मनसिज जोधा भारी है। याके वसमैं सुरासुर, पशुपंछी नर नारी

है ॥ टेर ॥ ज्ञान वजीर कहै आतमसौं, मालिक अरजी सुन लीजै । मनथिर करके मात, सारद-की मरजी सुन लीजै ॥ बृष जननी गुरु देव वचन तज, यह खुद्गरजी नहिं कीजै । जिनसे पाया जगतसुख, तिनसौं डरजी नहिं कीजै ॥ रेखता—धनधानरूप अनूप नारी, पुत्र अरु परिवार है । सुखसार संपति मिलै क्यों, करो यह निरधार है ॥ गाफिल हो खुद्गरजी करते, तिनने बात विगारी है ॥ याके० ॥ १ ॥ क्योंकर जुग सुख मिल्यो हमें, यह खबर नहीं सुन ज्ञान बजीर । देवगुरुनिका मति सारद, का क्या क्या हुकम नजीर ॥ खुद गरजी हम क्या करते हैं, हवाल सभी समझावो वीर । तुम ही हमारे बड़े सत, मित्र कहाओ साहस धीर ॥ रेखता—तुम जिन्हें दुस्मन कहो वे, करत हमसे प्यारजी । चिरकाल मेरे संग है, उनको बड़ा इकत्यारजी ॥ तुम तो नये वजीर भये, करदीना विग्रह भारी है ॥ याके० ॥ २ ॥ जिनवर वचन मात सारद्की,

पहिले जो सेवा कीनी । उनकी आज्ञा शीस ध-
रि, सुगुरु वचन परनति कीनी ॥ भक्त जननकी
देखादेखी, करि प्रवृत्ति बृषरस भीनी । तिहं प्र-
भावसे आज तुम, सुरनर पति पदवी लीनी ॥
रेखता— अब उन्हौंकी येही आज्ञा, तजो विषय
कषाय है । जो सीख तुम मानों नहीं, यह खुद
गरजी दुखदाय है ॥ आगैं और सुनो साहब जो,
कहो हकीकत सारी है ॥ याके० ॥ ३ ॥ दुस्मन हौ
कर प्यार करै तौ, दगा जरूर समझ लेना । छल
बल करके साथ, रहै तौ उसको तज देना ॥ भूल
गये इनकी करनी दुख, नरक पशू गतिका रहना ।
जल कन त्रणाको काल तहाँ भटक भटक कर
दुख सहना ॥ रेखता—सीलउष्ण अनेक बाधा,
छेद भेद शरीरको । रमनी विना नरनीच कुलमें,
दुख सह्यो अशरीरको ॥ सदा संगमें नूतन क्यों-
कर, तजो कुबुधि अविचारी है ॥ याके० ॥४ ॥
काल अनंत गमाय दियो अब, समय अपूरब
पाया है । अब कछु कर ले चेतन, नृप, चिंतामन

कर आया है ॥ आगे जो जिन महावीर तिन बल कर मोह दबाया है। उसी तरहसों करो पुरुषारथ सो बल आया है ॥ रेखता—आस जीकी छोड़कैं, असरीर गढ मन मारिये। चित चाह विषय कषाय पावक, पंचसरगन जारिये ॥ सुन सत वचन कर्म अरिगतिमैं, आतम तेज सवारी है ॥ याके० ॥ ५ ॥

(४८) लावनी रंगत लंगड़ी । (ब्रह्मचर्य)

श्रीअरहंत भक्ति दृढ़ हिरदै, ब्रह्मचर्य शिरमुकुट गहीर। जिनने धारा भये वे, भव्यसुधी भवसागर तीर ॥ टेर ॥ रूप बल क्रांति कीर्त्ति, विस्तरै काय आरोग्य रहै। पुण्यवंतहो धीरजी, वचनसिद्ध गतछोभ रहै ॥ विकटानन सम साहस निर्भय, आनन ओज मनोज रहै। इष्ट संपदा पुण्यवश, विद्यमान हररोज रहै ॥ या अनुपम ब्रतके गुण गावत, थकित भये सहसानन वीर ॥ जिनने० ॥ १ ॥ केहरि हरि शार्दूल सूर गज, कूर कूरपन तज देवै। तिहपगतरकी सीस

पर, दुष्ट देवगन रज लेवै ॥ अग्नि नीर जलनिधि सरवरसम शर शशिरस्मि सुमनवेवै । विष अम्रतसम जिन्होंके, चरन कमल सुरगन सेवै ॥ भूत पिशाच प्रबल बैरीबल, ब्रह्म सामने धरै न धीर ॥ जिनने० ॥ २ ॥ तीच्छण बुद्धि विचच्छण बानी, अच्छनको वशकर राखै । मंदकषायी अनूपम, निजस्वभाव अमिरत चाखै ॥ यथायोग्य सब करै क्रिया, गृहधासबसै विधि अरिनासै । महा विवेकी सुगुरु निरग्रंथ पंथ नित अभिलासै ॥ कंचन उपल नील पथ तिलमैं, तेलगिनै त्यौं ब्रह्म शरीर ॥ जिनने० ॥ ३ ॥ लाभ अलाभविषैं संतोषी, आशा तृसना परिहारी । जिन शासनकी तत्त्वरुचि, दृढ़ प्रतीत हिरदै धारी ॥ परकामिल देखन सुमरन, अभिलाष राग परनति टारी । शिवमगचारी जगत मैं, धन्य शील व्रतका धारी ॥ सूरनके शिर सूर जिनेश्वर, शासनसेवक साहसधीर ॥ जिननेधारा० ॥ ४ ॥
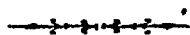
(४९) रंगत लंगड़ी।

समरथ सूरसुधी समदरशी, जिनशासनका बाना है। जिनने लीना उन्होंने, निजपरको पहिचाना है ॥ टेर ॥ जगका ठाठ अथिर सब जानै, छन भंगुरता देखत है। छिन छिन छीजै आयुबल, तदपि हृदय नहिं चेतत है ॥ महादाह तृष्णातुर होकर, विषयनिमैं सुख पेखत है। शठ अविवेकी दाहमें, देख दवानल सेकत है ॥ यह कायरता तजि करकैं, अरहंत पंथ मनमाना है ॥ जिनने० ॥ १ ॥ विधि अरिजो तनको ब्रतधारै, यथाशक्ति निरवाह करै। पुरुषारथसे सुधी नर, कर्म अरीकों दाह करै ॥ जो कदाचि ब्रत भंग होय तौ, बहुरि धारि निरवाह करै। यातैं बढ़िकै और ब्रत, धारनकी उर चाह करै ॥ मोह जनित अज्ञान भाव तजि, जिनवर सरन महाना है ॥ जिनने० ॥ २ ॥ निज पद योग्य करै सब किरिया, वसि गृहस्थ पदमैं भाई। ग्यारह प्रतिमा धरै जब, प्रगटै निज बल अधिकाई ॥ उ-

त्तम दीक्षा धारी सुगुरुके संग रहै वनमैं जाई । धन्य धीरजी मनुष्यगति, सफल जिन्होंने कर-पाई ॥ शेष परिग्रह तजिकरकें, निरग्रंथ मुनीका वाना है जिन० ॥ ३ ॥ त्रण कंचन अरु मित्र बराबर, जीवन मरन समानगिनै । सुख दुख कारन मिलै तव, समताको परधान गिनै ॥ अट्ठाईस मूल गुण धारै, धर्म शुकल सत् ध्यान गिनै । विषयवासना त्यागकरि, आतमज्ञान प्रमान गिनैं ॥ स्वरुचि 'जिनेश्वर' पदमाही यह, समदरसी गुन जाना है । जिनने० ॥ ४ ॥

(५०) रंगत लंगड़ी ।

स्वरस सुधारस सबसौं न्यारा, वीतरागका वाना है । या भववनमैं भव्यनको, दायक शिव-कल्याना है ॥ टेर ॥ कायरका क्या काम धाम, आराम वासको तज करकैं । वनमें वसना दिगंवर, सुगुरुनामको सजकरके ॥ विकटाननसम प्रवलसाहसी, निजस्वरूपकी धजि करके । याकै आगैं मोहअरि छिपै, सर्व दिशा भजि करकैं ॥ दुर्द्धर जोग जान ऐसो यह, वीर पुरुषका बाना

है ॥ या भव० ॥ १ ॥ कोई सूर सुधी समदरशी, विषयनको विषसम पहिचान् । देशव्रती हो गृहस्थी, महापापका त्यागी जान् ॥ अंतर आगमज्ञान ध्यान बल उद्यमवंतसुधी गुनखान् । मोह अरीकों जीतकर, धारै दृढ़व्रत धर्ममहान् ॥ असिधाराव्रत ब्रह्मचर्य जग, धीर वीरका बाना है ॥ या भव० ॥ २ ॥ मोह अरीके फंद फंसे तन, कसे अष्टविधिबंधनमैं । पराधीन हो रचे रमनीरस ज्यों अलि गंधनमैं ॥ श्रीजिनभक्ति प्रभाव सुधीदृग, ज्ञान लहै जिम अंधनमैं शांतस्वभावी स्वपर पहिचान सर्व संबंधनमैं ॥ इष्ट अनिष्ट नपरमैं मानै, यह सम्यक्की बाना है । याभव० ॥ ३ ॥ अनागार वनवास करै सागारव्रती वा सरधानी । शिवमगचारी जिन्होंकी, आखिरकी शिवरजधानी ॥ जगतवासको आस तजो है, जिनको प्यारी शिवरानी । जिनने मानी सुधासम, सार जिनेश्वरकी वानी ॥ धर नहिं सकै कुधी कायर यह, महावीरका बाना है । याभव०॥

(५१) रंगतलंगड़ी समवसरनकी रचना।

समवसरनकी महिमा लखिकै, सुरपति उर हरषाया है। दर्शन करके भव्यजीवन, ने शिव सुखपाया है ॥ टेर ॥ समवसरनमें बारह जोजन समवसरनकी जान मही। क्रमक्रमसे घटति वीरके, इकजोजन भुवि आन रही ॥ मध्यविषै श्रीमंडप सोहै, चौबिस भाग प्रमाण सही तामे आगैं भाग दोमाही प्रथम वेदिका कही ॥ सैर गीता—आगैं सभाकी भूमि सोहै वीसभाग प्रमान है। चहुंओर दुइसो भागमाही, फटिककोट महान है ॥ फिर तूपभूमि महान सोहै, भाग चउचालीस है। आगें कनकमयवेदिका, चहुंभाग नमत सचीस है ॥ निरखत नयन तृप्ति नहिं होवे, सहस चक्षु ललचाया है। दर्शन० १॥ आगैं कल्पसरोवर पृथिवी, भाग अठासीमें जानो। ताके आगे कनकमय, कोटभाग वसुपरमानो ॥ धुजा भूमि है भाग अठासी, आठ भाग वेदी मानो। भाग अठासी अगारी, उपवन को-

ट सुधी जानो ॥ सैर गीता—आगैं रजत मय कोट तीजो, आठभाग प्रमान है । फिर पुष्पवारी भू अठासी, भागमे सुखदान है ॥ वसुभागमें फिर जान वेदी, छवि सुवर्ण समान है । आगें चवालिस भागमाही, खातिका जलखान है ॥ पुंडरीक उत्पलनीरजलखि, हंस हृदय हुलसाया है ॥ दर्सन० ॥ २ ॥ आगें वेदी चार भागमें, सु वरन वरन अनूप लसै । ताके आगें चैत्यकी, भूमि चवालिस भाग वसै । धूलीशाल कोट वसु आगें, चारभाग चहुं ओर लसै । पंचरत्नमय अनूपम, समवसरनकी घेरवसै ॥ सैर-गीता-सब पांचसौ छिहत्तर,ऊपर भागमाहि प्रमान है । श्री-समवसरन अनूपशोभा, सुखसमान निधान है ॥ मंडपविषै जिनवर विराजैं, देत वृषको दानहैधन-भाग है जीव जिनधुनि सुनै जो निजकान है ॥ वसुप्रातिहारजयुत विराजै, सुरपतिनै सिरनया है । दर्शन०॥ ३ ॥ चारघातियाकर्म नाश करि, केव लज्ञान सुभाव लहा । जगजीवनिको जिन्होंने,सु

खदायक उपदेश कहा ॥ जीवादिक सब तत्व प्रकाशे, उत्तम धर्म विशेषमहा । शिव सुख पाया जिन्होंने, दृढमनसे व्रतवेश गहा ॥ सैर--गीता—
आदिनाथ पुरानमें वर्णन, किया जिनसेनजी । श्री समवसरन विधानमंडल, सर्वकों सुखदेनजी ॥ सो ही कह्यो संक्षेपसों, वर्णन सुनो यह एनजी । जयवंत वरतौ जगजिनेश्वर, देवगुरु जिनसेनजी ॥ समवसरन लक्ष्मीपति दरजा, यही 'जिनेश्वर' चाया है । दर्शन० ॥ ४ ॥

(५२) अथ पद राग मरहठी ।

दोहा—इस भवकाननकेविषै, आन न सरन सहाय । चतुरानन अरहंतको, ध्यान धरो मनमाय ॥ सुताअकंपनरायकी, जिनमंदिरमें जाय । तातवचन उरधारिकैं, कायोत्सर्ग कराय ॥ छंद—स्वयंवर मंडपका करना, सोमपितु राजकुमर वरना ॥ दुरमषस वचन कान धरना, चक्रपतिकुमर मान हरना ॥ १ ॥ दोहा—रवीकीर्त्ति कोपित भयो, सुनत अकंपनराय । जयकुमारकों पूछिकैं, दोनो दूत पठाय ॥ आज नरनायकसों

लरना, नहीं उनमारग पग धरना। कोप क्या सेवकपर करना ॥ १ ॥ सचो समझावत अधिकारी, सुनो नरनारी बुधि धारी। सोम अर नाथ वंश जारी, किये जगदीश्वर हितकारी ॥ दोहा—सबलकरे तुम तातने, मानत हित अधिकाय। न्यायपंथ तुमतैं चलै, यह जानो सतभाय। कुवरजी उर विचार करना, कोप क्या० ॥२॥ न्याय तजि अर्ककीर्ति जगमैं, रोप रन अपजसके मगमें। बजे रन पटहादिक बाजे, सजे नरसिंह सूर गाजे ॥ दोहा—जयकुमार रनभूमिमैं, सब राजनके माहि। चत्रशूलसों कहत है, यह तुम लायक नाहिं ॥ वृथा क्यों निज अकाज करना ॥ कोप क्या० ॥ ३ ॥ देश भंडार सैन सारी, नाथकर वंश गगनचारी। आप हो सबके अधिकारी, युद्धमें होय हानि भारी ॥ दोहा—समझायो मान्यो नहीं, अर्ककीर्ति सर सांधि। आयो जब जयकुमारपै, लियो पट्टसों बांधि ॥ ज़िनेश्वर भक्ति आप करना ॥ कोप क्या० ॥ ४ ॥

दौलत-विलास

(१)

जिनवर-आनन-भान निहारत, भ्रमतमघान नसाया है ॥ जिन० ॥ टेक ॥ वचन-किरन-प्रसरनतैं भविजन, मनसरोज सरसाया है। भवदुखकारन सुखविसतारन, कुपथ सुपथ दरसाया है ॥ जिन० ॥ १ ॥ विनसाई, कज जलसरसाई निशिचर समर दुराया है। तस्कर प्रबल कषाय पलाये, जिन धनबोध चुराया है ॥ जिन० ॥ २ ॥ लखियत उडु न कुभाव कहूं अब, मोह उलूक लजाया है। हंस कोकको शोक नश्यो निज,—परनतिचकवी पाया है ॥ जिन० ॥ ३ ॥ कर्मबंधकजकोष वंधे चिर, भवि अलि मुंचन पाया है। दौल उजास निजातम अनुभव, उर जग अन्तर छाया है ॥ जिन० ॥ ४ ॥

(२)

पारस जिन चरन निरख, हरख यों लहायो, चितवत चन्दा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक॥ ज्यों सुन घनघोर शोर, मोरहर्षको न ओर, रंक निधिसमाज राज पाय मुदित थायो ॥ पारस०॥ ज्यों जन चिरछुधित होय, भोजन लखि सुखित होय, भेषज गदहरन पाय, सरुज सुहरखायो ॥ पारस० ॥ २ ॥ वासर भयो धन्य आज, दुरित दूर परे भाज, शाँतदशा देख महा, मोहतम पलायो ॥ पारस० ॥ ३ ॥ जाके गुन जानन जिम, भानन भवकानन इम, जान दौल शरन आय, शिवसुख ललचायो ॥ पारस०॥ ४ ॥

(३)

वंदों अद्भुत चन्द्र वीर जिन, भवि-चकोर चितहारी ॥ वंदों० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनृपकुल-नभ—मंडन, खंडन भ्रमतम भारी। परमानंद-जलधिविस्तारन, पाप ताप छयकारी ॥ वंदों० ॥ १ ॥ उदित निरंतर त्रिभुवन अन्तर, कीरति कि-

रन पसारी। दोष-मलंक-कलंक अटंकित, मोह-राहु निरवारी॥ वंदों०॥ २॥ कर्मावरन-पयोद-अरोधित, बोधित शिवमगचारी। गणधरादि मुनि उडुगन सेवत, नित पूनमतिथि धारी॥ वन्दों०॥ ३॥ अखिल अलोकाकाश-उलंघन, जासु ज्ञान उजियारी। दौलत मनसा-कुमुदनि मोदन, जयो चरम-जगतारी। वन्दों०॥ ४॥

(४)

निरखत जिनचन्द्र—वदन, स्वपरसुरुचि आई। निरखत जि०॥ टेक॥ प्रगटी निज आनकी, पिछान ज्ञान भानकी, कला उदोत होत काम, जामिनी पलाई। निरखत०॥ १॥ सास्वत आनन्द स्वाद, पायो विनस्यो विषाद, आनमें अनिष्ट इष्ट, कल्पना नसाई। निरखत०॥ २॥ साधी निज साधकी, समाधि मोहव्याधिकी, उपाधिको विराधिकैं, अराधना सुहाई। निरखत०॥ ३॥ धन दिन छिन आज सुगुनि, चितें जिन राज अब, सुधरे सब काज दौल, अचल सिद्धि पाई। निरखत०॥ ४॥

(५)

जिया तुम चालो अपने देश, शिवपुर थारो शुभथान। जिया० ॥ टेक ॥ लख चौरासीमें बहु भटके, लह्यौ न सुखरो लेश ॥ जिया० ॥ १ ॥ मिथ्यारूप धरे बहुतेरे, भटके बहुत विदेश ॥ जिया० ॥ २ ॥ विषयादिक बहुत दुख पाये, भुगते बहुत कलेश ॥ जिया० ॥ ३ ॥ भयो तिरजंच नारकी नर सुर, करि करि नाना भेष ॥ जिया० ॥ ४ ॥ दौलत राम तोड़ जगनाता, सुनो सुगुरु उपदेश ॥ जिया० ॥ ५ ॥

(६)

जय जय जग-भरम-तिमर, हरन जिन धुनी ॥ टेक ॥ या बिन समुझे अजौं न, सौंज निज मुनी। यह लखि हम निजपर अवि वेकता लुनी ॥ जय जय० ॥ १ ॥ जाको गनराज अंग, पूर्वमय चुनी। सोई कही है कुन्द कुन्द, प्रमुख बहु मुनी ॥ जय जय० ॥ २ ॥ जे चर जड़ भये पीय, मोह बारुनी। तत्व पाय चेते जिन, थिर

सुचित सुनी ॥ जय जय० ॥ ३ ॥ कर्ममल पखा-
रनेहि, विमल सुरधुनी । तज विलंब अंब करो,
दौल उर पुनी ॥ जय जय० ॥ ४ ॥

(७)

अब मोहि जानि परी, भवोदधि तारनको
है जैन ॥ टेक ॥ मोह तिमिरतैं सदा कालके,
छाय रहे मेरे नैन । ताके नाशन हेत लियो, मैं
अंजन जैन सु ऐन ॥ अब० ॥ १ ॥ मिथ्यामती
भेषको लेकर, भाषत हैं जो बैन । सो वे बैन
असार लखे मैं, ज्यों पानीके फैन ॥ अब मोहि०
॥ २ ॥ मिथ्यामती वेल जग फैली, सो दुख फ-
लकी दैन ॥ सतगुरु भक्तिकुठार हाथ लै, छेद
लियौ अति चैन ॥ अब० ॥ ३ ॥ जा विन जीव
सदैव कालतैं विधि वश सुखन लहै न । अश-
रन-शरन अभय दौलत अब, भजो रैन दिन
जैन ॥ अब० ॥ ४ ॥

(८)

सुन जिन वैन, श्रवन सुखं पायौ ॥ टेक ॥

नस्यौ तत्त्व दुर अभिनिवेश तम, स्याद् उजास कहायौ। चिर विसस्यौ लह्यौ आतम रैन (?) ॥ श्रवन० ॥ १ ॥ दह्यौ अनादि असंजम दवतैं, लहि व्रत सुधा सिरायौ। धीर धरी मन जीतन मन (?) ॥ श्रवन सुख० ॥ २ ॥ भरो विभाव अभाव सकल अब, सकल रूप चित लायौ। दास लह्यौ अब अविचल जैन ।श्रवनसुख० ॥ ३ ॥

(६)

बामा घर बजत बधाई, चलि देखि री माई ॥ टेक ॥ सुगुनरास जंग आस भरन तिन, जने पार्श्व जिनराई। श्री ह्री धृति कीरति बुद्धि लछमी, हर्ष अंग न माई ॥ चलि० ॥ १ ॥ वरन वरन मनि चूर सची सब, पूरत चौक सुहाई। हाहा हूहू नारद तुम्बर, गावत श्रुति सुखदाई ॥ चलि० ॥ २ ॥ तांडव नृत्य नटत हरिनट तिन, नख नख सुरीं नचाई। किन्नर कर धर बीन बजावत हग मनहर छवि छाई ॥ चलि० ॥ ३ ॥ दौल तासु प्रभुकी महिमा सुर, गुरुपै कहिय न जाई। जाके जन्म समय नरकनमें, नारकि साता पाई ॥

(१०)

जय श्री ऋषभ जिनेन्द्रा । नाश तौ करो स्वामी मेरे दुखदंदा ॥ मातु मरुदेवी प्यारे, पिता नाभिके दुलारे, वंश तो इख्वाक जैसे नभवीच चंदा ॥ जय श्री० ॥ १ ॥ कनक वरन तन, मोहत भविक जन, रवि शशि कोटि लाजै, लाजै मकरन्दा ॥ जय श्री० ॥ २ ॥ दोष तौ अठारा नासे, गुन छियालीस भासे, अष्टकर्म काट स्वामी भये निरफंदा ॥ जय श्री० ॥ ३ ॥ चार ज्ञानधारी गनी, पार नाहिं पावै मुनी, दौलत नमत सुख चाहत अमंदा ॥ जय श्री० ॥ ४ ॥

(११)

जाऊं कहां तज शरन तिहारे ॥ टेक॥ चूक अनादितनी या हमरी, माफ करो करुणा गुन धारे ॥ १ ॥ डूबत हों भवसागरमें अब, तुम बिन को मुह वार निकारे ॥ २ ॥ तुम सम देव अबर नहिं कोई, तातैं हम यह हाथ पसारे ॥ ३ ॥ मो सम अधम अनेक उधारे, वरनत हैं श्रुत शास्त्र

अपारे ॥ ४ ॥ "दौलत"की भवपार करो अब, आयो है शरनागत थारे ॥ ५ ॥

(१२

भविन—सरोरुहसूर भूरिगुनपूरित अरहंता। दुरित दोष मोष पथघोषक, करन कर्मअन्ता ॥ भविन० ॥ टेर ॥ दर्शबोधतैं युगपतलखि जाने जु भावऽनन्ता । विगताकुल जुतसुख अनन्त विन, अन्त शक्तिवन्ता ॥ भविन० ॥ जा तनजोत-उदोतथकी रवि, शशिदुति लांजन्ता । तेजथोक अवलोक लगत है, फोक सचीकन्ता भविन० ॥ २ ॥ जास अनूप रूपको निरखत, हरखत हैं सन्ता । जाकी धुनि सुनि मुनि निजगुनमुन, पर गर उगलंता भविन० ॥ ३ ॥ दौल तौल विन जस तस वरनत, सुरगुरु अकुलंता । नामाक्षर सुन कान स्वानसे, रांक नाकगंता ॥ भविन०४॥

(१३)

हमारी वीर हरो भवपीर । हमारी० ॥ टेक॥ मैं दुख तपित दयामृतसर तुम, लखि आयो

तुम तीर ।तुम परमेश मोखमगदर्शक, मोहदवा नलनीर ॥ हमारी० ॥ १ ॥ तुम विनहेत जगत-उपकारी शुद्ध चिदानंद धीर । गनपतिज्ञानसमुद्र न लंघैं तुम गुनसिंधु गहीर ॥ हमारी० ॥ २ ॥ याद नहीं मैं विपति सही जो, धर धर अमित शरीर । तुम गुनचिंतत नशत तथा भय, ज्यों धन चलत समीर ॥ हमारी० ॥ ३ ॥ कोटवारकी अरज यही है, मैं दुख सहूं अधीर । हरहु वेदना फन्द दौलको, कतर कर्म जंजीर ॥ हमारी०॥४॥

(१४)

सब मिल देखों हेली म्हारी हे, त्रिसलाबाल वदन रसाल । सब० ॥ टेक ॥ आये जुतसमव-सरन कृपाल, विचरत अभय व्यालमराल, फलि त भई सकल तरुमाल । सब० ॥ १ ॥ नैनन हाल भृकुटी न चाल, वैन विदारै विभ्रमजाल छवि लखि होत संत निहाल । सब० ॥ २ ॥ व-न्दन काज साज समाज, संग लिये स्वजन पुर-जन भ्राज, श्रेणिक चलत है नरपाल । सब० ॥३

यों कहि मोदजुत पुरबाल, लखन चाली चरम जिनपाल, दौलत नमत धर धर भाल ॥ सब०४

(१५)

हे जिन मेरी, ऐसी बुधि कीजै । हे जिन० ॥ टेक ॥ रागद्वेषदावानलतें बचि, समतारसमें भीजैं । हे जिन० ॥ १ ॥ परकों त्याग अपनपो निजमें, लाग न कबहूं छीजै ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ कर्मफलमाहि न राचै, ज्ञानसुधारस पीजै ॥ हे जिन० ॥ ३ ॥ मुझ कारजके तुम कारन वर, अरज दौलकी लीजै । हे जिन० ॥ ४ ॥

(१६)

सामरियाके नाम जपेतैं, छूट जाय भवभामरियाँ । शाम० ॥ टेक ॥ दुरित दुरत पुन पुरत फुरत गुन, आतमको निधि आगरियां । विघटत है परदाह चाह झट, गटकत समरस गागरियां शाम० ॥ १ ॥ कटत कलंक कर्म कलसायन, प्रगटत शिवपुरडागरियां । फटत घटाघन मोह छोह हट, प्रगटत भेदज्ञान घरियां ॥ शम० ॥२

कृपाकटाक्ष तुमारीहीतैं, जुगलनागविपदा टरि-यां । धार भये सो मुक्तिरमावर, दौल नमैं तुव पागरियां ॥ शाम० ॥ ३ ॥

(१७)

शिवमगदरसावन रावरो दरस । शिवमग० ॥ टेक ॥ पर-पद-चाह-दाह-गद नाशन, तुम बचभेषज-पान सरस । शिवमग० ॥ १ ॥ गुणचितवत निज अनुभव प्रगटै, विघटै विधिठग दुविध तरस । शिवमग० ॥ २ ॥ दौल अबाची संपति साँची, पाय रहै थिर राच सरस । शिव० ३

(१८)

मैं आयो, जिन शरन तिहारी । मैं चिरदुखी विभावभावतैं, स्वाभाविक निधि आप विसारी ॥ मैं० ॥ १ ॥ रूप निहार धार तुम गुम सुन, वैन होत भवि शिवमगचारी । यौं मम कारजके कारन तुम; तुमरी सेव एक उर धारी ॥ मैं० ॥ २ ॥ मिल्यौ अनन्त जन्मतैं अवसर, अब बिनऊं हे भवसरतारी । परम इष्ट अनिष्ट कल्पना, दौल कहै झट भेट हमारी ॥ मैं० ॥ ३ ॥

(१९)

मैं हरख्यौ निरख्यौ मुख तेरो। नासन्यस्त नयन भ्रू हलयन, वहन निवारन मोह अंधेरो॥ मैं०॥ १॥ परमें कर मैं निजबुधि अबलों, भव सरमें दुख सह्यौ घनेरो। सो दुख भानन स्वपर पिछानन, तुमविन आनन कारन हेरो॥ मैं०॥ २॥ चाह भई शिवराहलाहकी गयौ उछाह असंजमकेरो। दौलत हितविराग चित आन्यौ, जान्यौ रूप ज्ञानदृग मेरो मैं०॥ ३॥

(२०)

ध्यानकृपान पानि गहि नासी, त्रेसठ प्रकृति अरी। शेष पचासो लाग रही है, ज्यौं जेवरी जरी॥ ध्यान०॥ टेक॥ दुठ अनंगमातंगभंगकर, है प्रबलंगहरी। जा पद भक्ति भक्त जनदुख—दावानल मेघझरी॥ ध्यान०॥ १॥ नवल धवल पल सोहै कलमें, क्षुधतृषव्याधि टरी। हलत न पलक अलक नख बढ़त न गति नभमाहिं करी॥ ध्यान०॥ २॥ जा विन शरन

मरन जर थरथर, महा असात भरी । दौल तास पद दास होत है, वास मुक्तिनगरी ॥ ३ ॥

(२१)

दीठा भागनतैं जिनपाला, मोहनाशनेवाला । दीठा० ॥ टेक ॥ सुभग निशंक रागविन यातै, वसन न आयुध बाला ॥ मोह० ॥ १ ॥ जास ज्ञानमें युगपत भागत, सकल पदारथमाला ॥ मोह० ॥ २ ॥ निजमें लीन होन इच्छा पर,— हितमितवचन रसाला ॥ मोह० ॥ ३ ॥ लखि जाकी छवि आतमनिधि निज, पावत होत निहा- ला ॥ मोह० ॥ ४ ॥ दौल जासगुन चिंतत रत है, निकट विकट भवनाला ॥ मोह० ॥ ५ ॥

(२२)

चलि सखि देखन नाभिरायघर, नाचत हरि नटवा चल० ॥ टेक ॥ अदभुत ताल मान शुभ लययुत, चवत राग षटवा । चलि सखि० ॥ १ ॥ मनिमय नूपुरादिभूषनदुति, युत सुरंग पटवा । हरिकर नखन नखनपै सुरतिय, पगफेरत कटवा

॥ चलि० ॥ २ ॥ किन्नर करधर बीन बजावत, लावत लय झटवा । दौलत ताहि लखैं चख तृपते, सूझत शिवबटवा ॥ चलि० ॥ ३ ॥

(२३)

आज मैं परम पदारथ पायौ, प्रभुचरनन चित लायौ । आज० ॥ टेक ॥ अशुभ गये शुभ प्रगट भये हैं सहजकल्पतरु छायौ । आज० ॥ १ ॥ ज्ञानशक्ति तप ऐसी जाकी, चेननपद दरसायो । आज० २ ॥ अष्टकर्म रिपु जोधा जीते, शिव अंकूर जमायौ । आज० ॥ ३ ॥

(२४)

नेमिप्रभूकी श्यामवरन छवि, नैनन छाय रही ॥ टेक ॥ मणिमय तीनपीठपर अंबुज तापर अधर ठही । नेमि० ॥ १ ॥ मार मार तप धार जार विधि, केवलऋद्धि लही । चारतीस अतिशय दुतिमंडित, नवदुगदोष नही । नेमि० ॥ २ ॥ जाहि सुरासुर नमत सतत, मस्तकतैं परस मही । सुरगुरुवर अम्बुजप्रफुलावन अद्‌भुत भान सही ।

नेमि० ॥ ३ ॥ धर अनुराग विलोकत जाको, दुरित नसै सब ही। दौलत महिमा अतुल जासकी, कापै जात कही। नेमि० ॥ ४ ॥

(२५)

प्रभु मोरी ऐसी बुधि कीजिये। रागदोषदावानलसे बच, समतारसमें भीजिये। प्रभु० ॥ टेक ॥ परमें त्याग अपनपो निजमें, लाग न कबहूं छीजिये। कर्म कर्मफलमाहिं न राचत, ज्ञान सुधारस पीजिये। प्रभु मोरी० ॥ १ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरननिधि, ताकी प्राप्ति करीजिये। मुझ कारजके तुम बड़ कारन, अरज दौलकी लीजिये। प्रभु मोरी० ॥ २ ॥

(२६)

हे मन तेरी को कुटैव यह, करनविषयमें धावै है, हे मन० ॥ टेक ॥ इनहीके वश तू अनादित निजस्वरूप न लखावै है। पराधीन छिन छीन समाकुल, दुर्गति विपति चखावै है। हे मन० ॥ १ ॥ फरस विषयमे कारन बारन, गरत परत

ख पावै है। रसनाइन्द्रीवश झष जलमें कंटक कं-
ठ छिदावै है। हे मन० ॥ २ ॥ गन्धलोल पंकज
मुद्रितमें, अलि निज प्रान खपावै है। नयनविष-
यवश दीपशिखामें, अंग पतंग जरावै है ।हे मन०
॥ ३ ॥ करनविषयवश हिरन अरनमें, खलकर
प्रान लुनावै है। दौलत तज इनको जिनको भ-
ज, यह गुरु सीख सुनावै है। हे० ॥ ४ ॥

(२०)

हो तुम त्रिभुवनतारी हो जिनजी, मो भव-
जलधि क्यों न तारत हो ॥ टेक ॥ अंजन कियो
निरंजन तातैं, अधमउधार विरद धारत हो। हरि
वराह कर्कट झट तार, मेरी वेर ढील पारत हो।
हो तुम० ॥ १ ॥ यौं बहु अधम उधारे तुम तो,
मैं कहा अधम न मुहि टारत हो। तुमको करनो
परत न कछु शिव, पथ लगाय भव्यनि तारत
हो। हो तुम० ॥ २ ॥ तुम छवि निरखत सहज
टरैं अघ, गुण चिंतत विधि—रज झारत हो।
दौल न और चहै मो दीजै, जैसी आप भावना-
रत हो। हो तुम० ॥ ३ ॥

(३०)

मान ले या सिख मोरी, झुकै मत भोगन ओरी। मान ले० ॥ टेक ॥ भोग भुजंगभोगसम जानो, जिन इनसे रति जोरी। ते अनन्त भव भीम भरे दुख, परे अधोगति पोरी, बंधे दृढ़ पातकडोरी ॥ मान० ॥ १ ॥ इनको त्याग विरागी जे जन, भये ज्ञानवृषधोरी। तिन सुख लह्यौ अचल अविनाशी, भवफांसी दई तोरी, रमै तिनसंग शिवगोरी। मान० ॥ २ ॥ भोगनकी अभिलाष हरनको, त्रिजगसंपदा थोरी। यातैं ज्ञानानंद दौल अब, पियौ पियूष कटोरी, मिटै भवव्याधि कठोरी ॥ ३ ॥

(३१)

छांड़ि दे या बुधि भोरी, वृथा तनसे रति जोरी। छाँड़ि ॥ टेक ॥ यह पर है न रहै थिर पोषत, सकल कुमलकी झोरी। यासौं ममताकर अनादितैं, बंधो कर्मकी डोरी, सहै दुख जलधि हिलोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी। वृथा० ॥१॥

यह जड़ है तू चेतन यौं ही, अपनावत बरजोरी सम्यकदर्शन ज्ञान चरण निधि, ये हैं संपत तोरी, सदा विलसौ शिवगोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी ॥ वृथा० ॥ २ ॥ सुखिया भये सदीव जीव जिन, यासौं समता तोरी । दौल सीख यह लीजे पीजे, ज्ञानपियूष कटोरी, मिटै परचाह कठोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी ॥ वृथा० ॥ ३ ॥

(३२)

जीव तू अनादिहीतैं भूल्यौ शिवगैलवा । जीव० ॥ टेक ॥ मोहमदवार पियौ, स्वपद विसार दियौ, पर अपनाय लियौ इन्द्रिसुखमें रचियौ, भवतैं न भियौ न तजियौ मनमैलवा । जीव० ॥ १ ॥ मिथ्या ज्ञान आचरन, धरि कर कुमरन, तीन लोककी धरन, तामें कियो है फिरन, पायो न शरन न लहायौ सुखशैलवा । जीव० ॥ २ ॥ अब नरभव पायौ, सुथल सुकुल आयौ, जिन उपदेश भायौ, दौल झट छिटकायौ, परपरनति दुखदायिनी चुरैलवा । जीव० ॥ ३ ॥

(३३)

आपा नहिं जाना तूने, कैसा ज्ञानधारी रे ॥ टेक ॥ देहाश्रित करि क्रिया आपको, मानत शिवमगचारी रे। आपा० ॥ १ ॥ निजनिवेदविन घोर परीषह विफल कही जिन सारी रे। आपा ॥ २ ॥ शिव चाहे तो द्विविधमर्मतैं, कर निज-परनति न्यारी रे। आपा० ॥ ३ ॥ दौलत जिन निजभाव पिछान्यौ तिन भवविपति विदारी रे ॥

(३४)

शिवपुरकी डगर समरससौं भरी, सो विषयविरसरचि चिरविसरी। शिव० ॥ टेक ॥ सम्यकदरश-बोध-व्रतमय भव, दुखदावानल-मेघझरी शिवपुर०॥१॥ ताहि न पाय तपाय देहु,बहु—जनममरन करि विपति भरी। कालपाय जिन-धुनि सुनि मैं जन, ताहि लहूं सोई धन्य घरी शिव० ॥ २ ॥ ते जन धनि या माहिं चरम नित, तिन कीरति सुरपति उचरी। विषयचाह भवराह त्याग अब, दौल हरो रज रहसिअरी ॥शिव०३॥

(३५)

तोहि समझायो सौ सौ वार, जिया तोहि समझायो० ॥ टेक ॥ देख सुगुरुकी परहितमें रति, हितउपदेश सुनायो । सौ सौ वार ॥ १ ॥ विषयभुजंग सेय सुख पायो पुनि तिनसौं लपटायो । स्वपद विसार रच्यौ परपदमें, मदरत ज्यौं बोरायो । सौ सौ वार० ॥ २ ॥ तन धन स्वजन नहीं हैं तेरे, नाहक नेह लगायो । क्यों न तजै भ्रम चाखसमामृत, जो नित संतसुहायो ॥ सौ सौ वार० ॥ ३ ॥ अबहूं समझ कठिन यह नरभव जिन वृष विना गमायो । ते बिलखैं मनि डार उदधिमें, दौलतको पछतायो ॥ सौ सौ०४॥

(३६)

हे नर, भ्रमनींद क्यों न, छांड़त दुखदाई । सेवत चिरकाल सोंज, आपनी ठगाई । हे नर० ॥ टेक ॥ मूरख अघ कर्म कहा, भेदै नहिं मर्म लहा, लागै दुखज्वालकी न, देहकै तताई ॥ हे नर० ॥ १ ॥ जमके रव बाजते, सुभैरव अति गा

जते, अनेक प्रान त्यागते, सुनै कहा न भाई ॥ हे नर० ॥ २ ॥ परको अपनाय आप,—रूपको भुलाय हाय, करनविषय दारु जार, चाहदौं बढ़ाई ॥ हे नर० ॥ ३ ॥ अब सुन जिनवान, राग द्वेषको जघान, मोक्षरूप निज पिछान दौल, भज विरागताई ॥ हे नर० ॥ ४ ॥

(३७)

न मानत यह जिय निपट अनारी। सिख देत सुगुरु हितकारी ॥ मानत० ॥ टेक ॥ कुमति कुनारि संग रति मानत, सुमतिसुनारि विसारी ॥ न मानत० ॥ १ ॥ नरपरजाय सुरेश चहैं सो, तजि विषविषय विगारी। त्याग अनाकुल ज्ञान चाह पर-आकुलता विसतारी ॥ न मानत० ॥२॥ अपना भूल आप समतानिधि, भवदुख भरत भिखारी। परद्रव्यनकी परनतिको शठ, वृथा बनत करतारी ॥ न मानत० ॥ ३ ॥ जिस कषाय—दव जरत तहां अभिलाष छटा घृत डारो। दुखसौं डरै करै दुखकारन,—तैं नित प्रीति क-

रारी ॥ न मानत० ॥ ४ ॥ अतिदुर्लभ जिनवैन श्रवनकरि, संशयमोह निवारी। दौल स्वपर-हित अहित जानके, होवहु शिवमगचारी ॥ न मा०५

(३८)

तुम सुनियो श्रीजिननाथ, अरज इक मेरी जी। तुम० ॥ टेक ॥ तुम विन हेत जगत उपकारी, वसुकर्मन मोहि कियो दुखारी, ज्ञानादिक निधि हरो हमारी, द्यावौ सो मम फेरी जी ॥ तुम सुनि० ॥ १ ॥ मैं निज भूल तिनहि संग लाग्यो, तिन कृत करन विषय रस पाग्यौ, तातैं जन्म—जरा दव—दाग्यौ, कर समता सम नेरी जी ॥ तुम सु० ॥ २ ॥ वे अनेक प्रभु मैं जु अकेला, चहुंगति विपतिमाहिं मोहि पेला, भाग जगे तुमसौं भयो भेला, तुम हो न्यायनिवेरी जी। तुम सु० ॥ ३ ॥ तुम दयाल वेहाल हमारो, जगतपाल निज विरद समारो, ढील न कीजे बेग निवारो, दौलतनी भवफेरी जी ॥ तुम०

(३६)

अरे जिया, जग धोखेकी टाटी। अरे० ॥ टेक ॥ झूठा उद्यम लोक करत हैं, जिसमें निश-दिन घाटी ॥ अरे० ॥ १ ॥ जान बूझके अन्ध बने हैं, आंखन बांधी पाटी ॥ अरे० ॥ २ ॥ निकल जांयगे प्राण छिनकमें, पड़ी रहैगी माटी। अरे० ॥ ३ ॥ दौलतराम समझ मन अपने, दिलकी खोल कपाटी ॥ ४ ॥

(४०)

हम तो कबहुं न निज घर आये। परघर फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये ॥ हम तो० ॥ टेक ॥ परपद निजपद मानि मगन है, परपरनति लपटाये। शुद्ध बुद्ध सुख कन्द मनोहर, चेतन भाव न भाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ नर पशु देव नरक निज जान्यो, परजय बुद्धि लहाये। अमल अखण्ड अतुल अविनाशी, आतमगुन नहिं गाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ यह बहु भूल भई हमरी फिर, कहा काज पछताये।

दौल तजौ अजहूं विषयनको, सतगुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥

(४१)

हे हितवांछक प्रानी रे, कर यह रीति सयानी। हे हित ॥ टेक ॥ श्रीजिनचरन चितार धार गुन, परम विराग विज्ञानी। हे हित० ॥ १ ॥ हरन भयामय स्वपरदयामय, सरधौ वृष सुखदानी दुविध उपाधि बाध शिवसाधक, सुगुरु भजौ गुणाथानी। हे० ॥ २ ॥ मोह-तिमिर-हर मिहर भजो श्रुत स्यात्पद जास निशानी। सप्ततत्त्व नव अर्थ, विचारहू, जो वरनै जिनवानी। हे हित० ॥ ३ ॥ निज पर भिन्न पिछान मान पुनि होहु, आप सरधानी। जो इनको विशेष जानन सो, ज्ञायकता मुनि मानी। हे हित० ॥ ४ ॥ फिर व्रत समिति गुपति सजि, अरु तजि प्रवृति शुभास्रवदानी। शुद्ध स्वरूपाचरन लीन है, दौल वरौ शिवरानी। हे हित० ॥ ५ ॥

(४२)

जानत क्यौं नहिं रे, हे नर आतमज्ञानी। जानत० ॥ टेक ॥ रागदोष पुद्गलकी संपति, निहचै शुद्धनिशानी। जानत० ॥ १ ॥ जाय नरकपशुनरसुरगतिमें, यह परजाय विरानी। सिद्धसरूप सदा अविनाशी, मानत बिरले प्रानी ॥ जानत० ॥ २ ॥ कियौ न काहू हरै न कोई, गुरु—शिख कौन कहानी। जनममरनमलरहित विमल है, कीचबिना जिमि पानी ॥ जानत० ॥ ३ ॥ सार पदारथ है तिहुं जगमें, नहिं क्रोधी नहिं मानी। दौलत सो घटमाहिं विराजे, लखि हूजे शिवथानी ॥ जानत० ॥ ४ ॥

(४३)

विषयोंदा मद भानै, ऐसा है कोई वे ॥ टेक विषय दुःख अर दुखफल तिनको, यौं नित चित्त न ठानै। विषयोंदा० ॥ १ ॥ अनुपयोग उपयोग स्वरूपी, तनचेतनको मानै। विषयोंदा० ॥ २ ॥ बरनादिक रागादि भावतैं, भिन्न रूप तिन जा-

नैं। विषयोंदा० ॥ ३॥ स्वपर जान रुषराग हान, निजमें निज परनति सानै। विषयोंदा० ॥ ४ ॥ अन्तर बाहरको परिग्रह तजि, दौल वसै शिव-थानै। विषयोंदा० ॥ ५ ॥

(४४)

और सबै जगद्वन्द मिटावो, लो लावो जिन आगमओरी। और० टेक ॥ है असार जगद्वन्द बन्धकर, यह कछु गरज न सारत तोरी। कमला चपला, यौवन सुरधनु, स्वजन पथिकजन क्यों रति जोरी ॥ और० ॥ १ ॥ विषय कषाय दुखद दोनों ये, इनतैं तोर नेहकी डोरी। परद्रव्यनको तू अपनावत, क्यों न तजै ऐसी बुधि भोरी ॥ और० ॥ २ ॥ बीत जाय सागरथिति सुरकी, नरपरजायतनी अति थोरी। अवसर पाय दौल अब चूको, फिर न मिलै मणि सागरबोरी ॥

(४५)

और अबै न कुदेव सुहावै, जिन थाके चरनन रतिजोरी। और० ॥ टेक ॥ कामक्रोधवश

गहैं असन असिअंक निशंक धरैं तिय गोरी। औरनके किम भाव सुधारैं, आप कुभाव—भार-धर– धोरी। और० ॥ १ ॥ तुम विनमोहअकोहछोहविन, छके शांत रस पीय कटोरी। तुम तज सेय अमेय भरी जो, जानत हो विपदा सव मोरी। और० ॥ २ ॥ तुम तज तिनै भजै शठ जो सो दाख न चाखत खात निमोरी। हे जगतार उधार दौलको, निकट विकट भवजलधि हिलोरी ॥ और ॥ ३ ॥

(४६)

गुरु कहत सीख इमि बार बार, विषसम विषयनको टार टार ॥ टेक ॥ इन सेवत अनादि दुख पायो, जनम मरन बहु धार धार ॥१॥ कर्माश्रित बाधा जुत फांसी, बन्ध बढावन द्वन्दकार ॥ ॥२॥ ये न इन्द्रिके तृप्तिहेतु जिमि, तिसन बुझावत क्षारवार ॥३॥ इनमें सुख कलपना अबुधके, बुधजन मानत दुख प्रचार ॥४ ॥ इन तजि ज्ञान पियूप चख्यौ तिन, दौल लही भववार पार ॥

(४७)

घडि घडि पल पल छिन छिन निशदिन, प्रभुजीका सुमरन करले रे । घडि० ॥ टेक ॥ प्रभु सुमिरेत पाप कटत हैं, जनममरनदुख हरले रे ॥ घडि घडि० ॥ १ ॥ मनवचकाय लगाय चरन चित, ज्ञान हिये विच धर ले रे ।घडि घडि०॥२॥ दौलतराम, धर्मनौका चढ़ि, भवसागरतैं तिर ले रे ॥ घडि घडि० ॥ ३ ॥

(४८)

चिन्मूरत दृग्धारीकी मोहि, रीति लगत है अटापटी । चिन्मूये ॥ टेक ॥ बाहिर नारकिकृत दुख भोगै, अंतर सुखरस गटागटी । रमत अनेक सुरनि संगपै तिस, परनतितैं नित हटाहटी ॥ चिन्मू० ॥ १ ॥ ज्ञानविरागशक्तितैं विधिफल, भोगतपै विधि घटाघटी । सदननिवासी तदपि उदासी तातैं आस्रव छटाछटी ॥ चिन्मू० ॥ २ ॥ जे भवहेतु अबुधके ते तस, करत बन्धकी झटाझटी । नारक पशु तिय षट विकलत्रय, प्रकृति-

नकी ह्वै कटाकटी ॥ चिन्मू० ॥ ३ ॥ संयम धरन सकै पै संयम, धारनको उर चटाचटी। तासु सुयश गुनकी दौलतके लगो, रहै नित रटारटी ॥

(४६)

चेतन यह बुधि कौन सयानी, कही सुगुरु हित सीख न मानी ॥ टेक ॥ कठिन काकताली ज्यौं पायौ, नरभव सुकल श्रवण जिनवानी। चेतन० ॥ १ ॥ भूमि न होत चांदनीकी ज्यौं, त्यौं नहिं धनी ज्ञेयको ज्ञानी। वस्तुरूप यौं तू यौं ही शठ, हटकर पकरत सोंज विरानी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ ज्ञानी होय अज्ञान राग रुष-कर निज सहज स्वच्छता हानी। इन्द्रिय जड़ तिन विषय अचेतन, तहां अनिष्ट इष्टता ठानो ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ चाहै सुख, दुख ही अवगाहै, अब सुनि विधि जो है सुखदानी। दौल आपकरि आप आपमें, ध्याय लाय समरससरससानी ॥ चेतन० ॥

(५०)

चेतन कौन अनीति गही रे, न मानैं सुगुरु

कही रे चेतन० ॥ जिन विषयनवश बहु दुख पायो, तिनसौं प्रीति ठही रे। चेतन० ॥ १ ॥ चिन्मय है देहादि जडनकौं तो मति पागि रही रे ॥ चेतन० ॥ २ ॥ जिनवृष पाय विहाय रागरुष निजहित हेत यही रे। दौलत जिन यह सीख धरी उर, तिन शिव सहज लही रे॥ चेतन० ॥३॥

(५१)

चेतन तैं या ही भ्रम ठान्यो,ज्यों मृग मृगतृष्णा जल जान्यो। चेतन० टेक ॥ ज्यौं निशितममैं निरख जेवरी, भुजग मान नर भय उर आन्यो। चेतन० । १ । ज्यौं कुध्यान वश महिष मान निज, फँसि नर उरमाहीं अकुलान्यौ। त्यौं चिर मोह अविद्या पेर्‌यो,तेरो तैं ही रूप भुलान्यो ॥ चेतन० ॥ २ ॥ तोय तेल ज्यौं मेल न तनको, उपज खपजमें सुखदुख मान्यो। पुनि परभावनको करता ह्वैं, तैं तिनको निज कर्म पिछान्यो॥ चेतन० ॥ ३ ॥ नरभव सुफल सुकुल जिनवानी, काललब्धि बल योग मिलान्यो। दौल सहज भ-

ज उदासीनता योष—रोष दुखकोष जु भान्यो ॥

(५२)

प्यारी लागै म्हाने जिन छवि थारी ॥ टेक ॥ परम निराकुलपद दरसावत, वर विरागता-कारी । पट भूषन विन पै सुन्दरता, सुरनरमुनिमनहारी ॥ प्यारी० ॥ १ ॥ जाहि बिलोकत भवि निज निधि लहि, चिरविभावता टारी । निरनिमेषतैं देख सचीपती, सुरता सफल विचारी ॥ प्यारी० ॥ २ ॥ महिमा अकथ होत लख ताकी, पशु सम समकितधारी । दौलत रहो ताहि निरखनकी, भव भव टेव हमारी ॥

(५३)

निरखत सुख पायौ, जिन मुखचन्द । नि० ॥ टेक ॥ मोह महातम नाश भयौ है, उर अम्बुज प्रफुलायौ । ताप नस्यौ बढ़ि उदधि अनन्द निरख० ॥ चकवी कुमति बिछुर अति विलखै, आतमसुधा सवायौ । शिथिल भए सब विधि-

गनफन्द ॥ निरख० ॥ २ ॥ विकट भवोदधिको तट निकट्यौ, अघतरुमूल नसायौ । दौल लह्यौ अब सुपद स्वछन्द ॥ निरख० ॥ ३ ॥

(५४)

जिन रागदोषत्यागा वह सतगुरू हमारा । जिन राग० ॥ टेक ॥ तज राजरिद्ध तृणवत निज काज संभारा । जिन राग० ॥ १ ॥ रहता है वह वनखंडमें, धरि ध्यान कुठारा । जिन मोह महा तरुको, जडमूल उखारा ॥ जिन राग ॥२ ॥ सर्वांग तज परिग्रह दिगअंबर धारा । अनंतज्ञानगुनसमुद्र चारित्र भंडारा ॥ जिन राग० ॥ ३ ॥ शुक्लाग्निको प्रजालकें वसु कानन जारा । ऐसे गुरुको दौल है, नमोऽस्तु हमारा । जिन राग० ॥

(५५)

जिन छवि लखत यह बुधि भयी । जिन० ॥ टेक ॥ मैं न देह चिदंकमय तन, जड़ फरसरसमयी । जिन छवि० ॥ १ ॥ अशुभशुभफल कर्म

दुखसुख, पृथकता सब गयी। रागदोष विभाव-चालित, ज्ञानता थिर थयी॥ जिन छवि०॥ २॥ परिगहन आकुलता दहन, विनशि शमता लयी। दौल पूरबअलभ आनंद, लह्यो भवथिति जयी॥ जिन०॥ ३॥

(५६)

जिनवैन सुनत, मोरी भूल भगी। जिनवैन०॥ टेक॥ कर्मस्वभाव चेतनको, भिन्न पिछानन सुमति जगी। जिन०॥ १॥ जिन अनुभूति सहज ज्ञायकता, सो चिर रुष तुष मैल-पगी। स्याद्वाद-धुनि-निर्मल-जलतें, विमल भई सम-भाव लगी॥ जिन०॥ २॥ संशयमोहभरमता विघटी, प्रगटी आतमसोंज सगी। दौल अपूरव मंगल पायो, शिवसुख लेन होंस उमगी॥

(५७)

जिनवानी जान सुजान रे। जिनवानी०॥ टेक॥ लाग रही चिरतैं विभावता, ताको कर अवसान रे। जिनवानी०॥ १॥ द्रव्य क्षेत्र अरु

काल भावकी, कथनीको पहिचान रे जाहि पिछाने स्वपरभेद सब, जाने परत निदान रे। जिनवानी० ॥ २ ॥ पूरब जिन जानी तिनहीने, भानी संसृतिबान रे। अब जानै अरु जानैंगे जे, पावैं शिवथान रे ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥ कह 'तुषभाष' मुनी शिवभूति, पायो केवलज्ञान रे। यौं लखि दौलत सतत करो भवि, चिद्वचनामृतपान रे ॥ जिनवानी० ॥ ४ ॥

(५८)

जम आन अचानक दावैगा। जम आन० ॥ टेक ॥ छिनछिन कटत घटत थित ज्यौं जल, अंजुलिको झर जावैगा। जम आन० ॥ १ ॥ जन्म तालतरुतैं पर जियफल, कोंलग बीच रहावैगा। क्यौं न विचार करै नर आखिर, मरन महीमें आवैगा ॥ जम आन० ॥ २ ॥ सोवत मृत जागत जीवत ही, श्वासा जो थिर थावैगा। जैसैं कोऊ छिपै सदासौं, कबहूं अवशि पलावैगा ॥ जम आन० ॥ ३ ॥ कहूं कबहुं कैसें हू

कोऊ, अंतकसे न बचावैगा। सम्यकज्ञानपियूष पियेसौं, दौल अमरपद पावैगा॥ जम आ० ४॥

(५९)

राचि रह्यो परमाहिं तू अपनो रूप न जानै रे। राचि रह्यो०। टैक। अविचल चिनमूरत विनमूरत, सुखी होत तस ठानै रे। राचि रह्यो० ॥ १ ॥ तन धन भ्रात तात सुत जननी, तू इनको निज जानै रे। ये पर इनहिं वियोगयोगमें यौं ही सुख दुख मानै रे॥ राचि० ॥ २ ॥ चाह न पाये पाये तृष्णा, सेवत ज्ञान जघानै रे। विपति-खेत विधिबंधहेत पै, जान विषय रस खानै रे॥ राचि० ॥ ३ ॥ नर भव जिनश्रुतश्रवण पाय अब, कर निज सुहित सयानै रे। दौलत आतम ज्ञान सुधारस, पीवो सुगुरु बखानैरे॥ राचि रह्यो० ॥४॥

(६०)

तू काहेको करत रति तनमें, यह अहिलमु-ल जिम कारासदन। तू काहेको०॥ टेक॥ चर-मपिहित पलरुधिरलिप्त मल,—द्वार स्रवै छिन-

छिनमें। तू काहेको० ॥ १ ॥ आयु-निगड फंसि विपति भरै सो, क्यों न चितारत मनमें। तू काहेको० ॥ २ ॥ सुचरन लाग त्याग अब याको, जों न भ्रमै भववनमें। तू काहेको० ॥ ३ ॥ दौल देहसौं नेह देहको,—हेतु कह्यौ ग्रन्थनमें। तू काहैको० ॥ ४ ॥

(६१)

थारा तौ वैनामें सरधान घणो छै, म्हारे छवि निरखत हिय सरसावै। तुमधुनिघन परच-हन-दहनहर, वर समता-रस-झरबरसावै। थारा० ॥ १ ॥ रूपनिहारत ही बुधि ह्वै सो निजपरचिह्न जुदे दरसावै। मैं चिंदक अकलंक अमल थिर, इन्द्रियसुखदुख जड़फरसावै। थारा० ॥ २ ॥ ज्ञान विरागसुगुनतुम तिनकी, प्रापतिहित सुरपति तरसावै। मुनि वड़भाग लीन तिनमें नित, दौल धवल उपयोग रसावै ॥ थारा० ॥ ३ ॥

(६२)

जिन छवि तेरी यह, धन जगतारन। जिन

छवि० ॥ टेक ॥ मूल न फूल दुकूल त्रिशूल न, शमदमकार भ्रमतमवारन। विन० ॥ १ ॥ जाकी प्रभुताकी महिमातैं सुरनधी शिता लागत सार न। अवलोकत भविथोक मोख मग, चरत बरत निजनिधि उरधारन। जिन० ॥ २ ॥ अजत भजत अघ तौ को अचरज ? समकित पावन भावनकारन। तासु सेव फल एव चहत नित, दौलत जाके सुगुन उचारन ॥ जिन छवि० ॥३॥

(६२)

धनि मुनि जिनकी लगी लौ शिवओरनै। धनि० ॥ टेक ॥ सम्यगदर्शनज्ञानचरननिधि, धरत हरत भ्रमचोरनै ॥ धनि० ॥ १ ॥ यथा जात मुद्राजुत सुन्दर, सदन विजन गिरिकोरनै। तृन कंचन अरि स्वजन गिनत सम, निंदन और निहोरनै। धनि० ॥ २ ॥ भवसुख चाह सकल तजि बल सजि, करत द्विविध तप घोरनै ॥ परमविरागभाव पवितैं नित, चूरत करम कठोरनै। धनि० ॥ ३ ॥ छीन शरीर न हीन चिदानन, मो

हत मोहझकोरनैं ॥ जग-तप-हर भवि कुमुद निशाकर मोदन दौल चकोरन ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(६४)

धनि मुनि जिन यह, भाव पिछाना । धनि० ॥ टेक ॥ तनव्यय वांछित प्रापति मानी, पुण्य-उदय दुख जाना । धनि० ॥ १ ॥ एकविहारी सकल ईश्वरता, त्याग महोत्सव माना । सब सुखको परिहार सार सुख, जानि रागरुष भाना ॥ धनि० ॥ २ ॥ चितस्वभावको चिंत्य प्रान निज विमलज्ञानदृगसाना । दौल कौन सुख जान लह्यो तिन करो शांतिरसपाना ॥ धनि० ॥ ३ ॥

(६५)

धनि मुनि निज आतमहित कीना । भव असार तन अशुचि विषय विष, जान महाव्रत लीना ॥ धनि मुनि जिन आतमहित० ॥ टेक ॥ एक विहारी परीगह छारी परिसह सहत अरीना पूरब तन तपसाधन मान न, लाज गनी परवीना धनि मुनि० ॥ १ ॥ शून्य सदन गिर गहन गु-

फामें, पद्मासन आनीना। परभावनतैं भिन्न आपपद, ध्यावत मोहविहीना॥ धनि मुनि० ॥२ स्वपरभेद जिनकी बुधि निजमें पागी बाहि लगीना, दौल तास पद वारिजरजसे किस अघ करे न छीना॥ मुनि० ॥ ३ ॥

(६६)

नितहितकारज करना भाई! निजहित कारज करना॥ टेक॥ जनममरनदुख पावत जातैं, सो विधिबंध कतरना निज०॥ १॥ ज्ञानदरस अर राग फरस रस, निजपरचिह्न भ्रमरना। संधिभेद बुधिछैनीतैं कर, निज गहि पर परिहरना निजहित०॥ २॥ परिग्रही अपराधी शंकै, त्यागी अभय विचरना। त्यौं परचाह बंध दुखदायक, त्यागत सबसुख भरना॥ निजहित० ॥३॥ जो भवभ्रमन न चाहे तो अब, सुगुरुसीख उर धरना। दौलत स्वरस सुधारस चाखो, ज्यौं विनसै भवमरना॥ निजहित०॥ ४॥

(६७)

मेरे कब ह्वै वा दिनकी सुधरी। मेरे०॥टेक

तन बिन बसन असनविन वनमें, निवसों नासा दृष्टिधरी। मेरे० ॥ १ ॥ पुण्यपापपरसौं कब विरचों, परचों निजनिधि चिरविसरी। तज उपाधि सजि सहजसमाधी, सहों घाम हिममेघझरी ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब थिरजोग धरों ऐसो मोहि, उपल जान मृग खाज हरी। ध्यान-कमान तान अनुभव शर छेदौं किहि दिन मोह अरी ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ कब तृनकंचन एक गनो अरु, मनिजड़ितालय शैलदरी। दौलत सत गुरुचरन सेव जो पुरवो आश यहै हमारी ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

(६८)

लाल कैसे जावोगे, असरनसरन कृपाल लाल० ॥ टेक ॥ इक दिन सरस वसंतसमयमें, केशवकी सब नारी प्रभुप्रदच्छनारूप खड़ी है, कहत नेमिपर वारी। लाल० ॥ १ ॥ कुंकुम लै मुख मलत रुकमनी रंग छिरकत गांधारी। सतभामा प्रभुओर जोर कर छोरत है पिचकारी ॥ लाल० ॥ २ ॥ व्याह कबूल करो तौ छूटौ, इतनी अरज

हमारी। ओंकार कहकर प्रभु मुलके, छांड़ दिये जगतारी ॥ लाल० ॥ ३ ॥ पुलकितवदन मदन-पितु-भामिनि, निज निज सदन सिधारी। दौलत जादववंशव्योम शशि, जयौ जगत हितकारी ॥ लाल० ॥ ४ ॥

(६६)

चित चिंतकैं चिदेश कब, अशेष पर वमू। दुखदा अपार विधि दुचार,—की चमूंदमू ॥ चित चिं० ॥ टेक ॥ तजि पुण्यपाप थाप आप, आपमें रमू। कब राग-आग शम-वाग, दागिनी शमू ॥ चित चिंतकैं० ॥ १ ॥ दृगज्ञानभानतैं मिथ्या, अज्ञानतम दमू। कब सर्व जीव प्राणी-भूत, सत्त्वसौं छमू ॥ चित चिंतकैं० ॥ २ ॥ जल मल्ललिप्त कल सुकल, सुबल्ल परिनमू। दलकै त्रिशल्लमल्ल कब, अटल्लपद पमू ॥ चित चिंतकैं० ॥ ३ ॥ कब ध्याय अज अमरको फिर न, भव-विपिन भमू। जिन पूर कौल दौलको यह, हेतु हौं नमू ॥ चित चिंतकैं० ॥ ४ ॥

(७०)

उरग-सुरग- नरईश शीस जिस, आतपत्र त्रिधरे । कुंदकुसुमसम चमर अमरगन, ढारत मोदभरे ॥ उरग० ॥ टेक ॥ तरु अशोक जाको अवलोकत, शोकथोक उजरे । पारजातसंतानकादिके, बरसत सुमन वरे ॥ उरग० ॥ १ ॥ सुमणिविचित्र पीठअंबुजपर, राजत जिन सुमिरे । वर्णविगत जाकी धुनिको सुनि, भवि भवसिंधुतरे ॥ उरग० ॥ २ ॥ साढे वारह कोड़ जातिके वाजत तूर्य स्वरे । भामंडलकी दुतिअखंडने रविशशि मंद करे । उरग० ॥ ३ ॥ ज्ञान अनंत अनंत दर्श बल, शर्म अनंत भरे । करुणामृतपूरित पद जाके, दौलत हृदय धरे । उरग० ॥ ४ ॥

(७१)

अरिरजहंस हनन प्रभुअरहन, जैवंतो जगमें देव अदेव सेव कर जाकी, धरहिं मौलि पगमें अरिरज० ॥ टेक ॥ जो तन अष्टोत्तरसहस्र लक्खन लखि कलिल शमें । जो वचदीपशिखातैं

मुनि विचरैं शिवमारगमें ॥ अरिरज० ॥ १ ॥ जास पासतैं शोकहरन गुन, प्रगट भयो नगमें। व्यालमराल कुरंगसिंधको, जातिविरोध गमें ॥ अरिरज० ॥ २ ॥ जाजस-गगन उलंघन कोऊ, च्छम न मुनिखगमें। दौल नाम तसु सुरतरु है या भवमरुथलमें ॥ अरि० ॥ ६ ॥

(७२)

जबतैं आनंद-जननि दृष्टि परी माई। तबतैं संशय विमोह भरमता बिलाई ॥ जबतैं० ॥ टेक मैं हूं चितचिह्न, भिन्न परतें, पर जड़स्वरूप, दो- उनकी एकता सु, जानी दुखदाई। जबतैं० ॥१॥ रागादिक बंधहेत, बंधन बहु विपति देत, संवर हित जान तासु, हेतु ज्ञानताई। जबतैं ॥ २ ॥ सब सुखमय शिव है तसु, कारन विधिझारन इमि, तत्त्वकी विचारन जिन,—वानि सुधिकराई जबतैं० ॥ ३ ॥ विषयचाहज्वालतैं, दह्यो अनंत- कालतैं सु, धाँबुस्यात्पदांकगाह, तें प्रशांति आई। जबतैं ॥ ४ ॥ या विन जगजालमें न शरन तीन-

कालमें स,—म्हाल चित भजो सदीव, दौल यह सहाई जबतैं० ॥ ४ ॥

(७३)

भज ऋषिपति ऋषभेश ताहि नित, नमत अमर असुरा । मनमथ-मथ दरसावत शिवपथ, वृष-रथ-चक्रधुरा॥ भज० ॥ टेक ॥ जा प्रभु गर्भ छमासपूर्व सुर, करी सुवर्ण धरा । जन्मत सुर-गिर धर सुरगनयुत, हरि पय न्हवन करा ॥ भज० ॥ १ ॥ नटत नर्त्तकी विलय देख प्रभु, लहि विराग सु थिरा । तवहिं देवऋषि आय नाथ शिर, जिनपर पुष्प धरा ॥ भज० ॥ २ ॥ केवल समय जास वच रविने, जगभ्रम-तिमिर हरा । सुदृग—बोध—चारित्र पोतलहि, भवि भवसिंधु तरा ॥ भज० ॥ ३ ॥ योगसंहार निवार शेषविधि-निवसे वसुम धरा । दौलत जे याको जस गावैं, ते ह्वैं अज अमरा ॥ भज०॥ ४ ॥

(७४)

हो तुम शठ अविचारी जियरा, जिनवृष

पाय वृथा खोवत हो। हो तुम० ॥ टेक ॥ पी अनादि मदमोहस्वगुननिधि, भूल अचेत नींद सोवत हो। हो तुम० ॥ १ ॥ स्वहित सीखवच सुगुरु पुकारत, क्यों न खोल उर—दृग जोवत हो। ज्ञान विसार विषयविष चाखत, सुरतरु जारि कनक बोवत हो ॥ हो तुम० ॥ २ ॥ स्वारथ सगे सफल जनकारन, क्यों निज पापभार ढोवत हो। नरभव सुकुल जैनवृष नौका, लहि निज क्यों भवजल डोवत हो ॥ ३ ॥ पुण्यपापफल बातव्याधिवश, छिनमें हँसत छिनक रोवत हो। संयमसलिल लेय निज उरके, कलिमल क्यों न दौल धोवत हो। हो तुम० ॥ ४ ॥

(७५)

आज गिरिराज निहारा, धनभाग हमारा। श्रीसम्मेद नाम है जाको, भूपर तीरथ भारा ॥ आज गिरि० ॥ टेक ॥ तहां बीस जिन मुक्ति पधारे, अवर मुनीश अपारा। आरजभूमिशिखानि सोहै, सुरनरमुनि—मनप्यारा ॥ आज

गिरि ० ॥ १ ॥ तहं थिर योग धार योगीसुर, निज परतत्व विचारा । निज स्वभावमें लीनहोयकर, सकल विभाव निवारा ॥ आज गिरि० ॥ २ ॥ जाहि जजत भवि भावनतैंजव, भवभव-पातक टारा । जिनगुन धार धर्मधन संचो, भव-दारिदहरतारा ॥ आज गिरि० ॥ ३ ॥ इक नभ नव इकबर्ष (१६०१) माघवदि, चौदश बासर सारा । माथ नाय जुत साथ दौलने, जय जय शब्द उचारा ॥ आज गिरि० ॥ ४ ॥

(७६)

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायौ, ज्यौं शुक नभचाल विसरि नलिनी लटकायो ॥ अपनी० ॥ टेक ॥ चेतन अविरुद्ध शुद्ध दरश-बोधमय विशुद्ध, तजि जड—रस फरस रूप, पुद्गल अपनायौ । अपनी० ॥ १ ॥ इन्द्रियसुख दुखमें नित्त, पाग रागरुखमें चित्त, दायक भवविपतिबृन्द, बन्धको वढायौ ॥ अपनी० ॥ २ ॥ चाहदाह दाहै, त्यागौ न ताह चाहै, समतासुधा

न गाहै जिन, निकट जो बतायौ ॥ अपनी० ॥ ३ ॥ मानुषभव सुकुल पाय, जिनवरशासन लहाय, दौल निजस्वभाव भज, अनादि जो नध्यायौ ॥ अपनी० ॥ ४ ॥

(७७)

हम तो कबहूँ न हित उपजाये । सुकुल-सुदेव-सुगुरु-सुसंग हित, कारन पाय गमाये । हम तो० ॥ टेक ॥ ज्यों शिशु नाचत, आप न माचत, लखनहार बौराये । त्यों श्रुत वांचत आप न राचत, औरनको समुझाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ सुजस-लाहकी चाह न तज निज, प्रभुता लखि हरखाये । विषय तजे न रजे निज पदमें, परपद अपद लुभाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ पाप त्याग निज-जाप न कीन्हौं, सुमनचाप-तप ताये । चेतन तनको कहत भिन्न पर, देह सनेही थाये । हम तो० ॥ ३ ॥ यह चिर भूल भई हमरी अब कहा होत पछताये । दौल अजौं भवभोग रचौ मत, यौं गुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

(७८)

हम तो कबहुं न निज गुन भाये । तन निज मान जान तनदुखसुख-में विलखे हरखाये । हम तो० ॥ टेक ॥ तनको मरन मरन लखि तनको, धरन मान हम जाये । या भ्रम-भौंर परे भवजल चिर, चहुंगति विपत लहाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ दरशबोधव्रतसुधा न चाख्यौ, विविध विषय-विष खाये । सुगुरु दयाल सीख दइ पुनि पुनि, सुनि सुनि उर नहिं लाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ बहिरात-मता तजो न अन्तरदृष्टि न ह्वै निज ध्याये । धा-म-काम-धन-रामाकी नित, आश-हुताश जलाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ अचल अनूप शुद्ध चिद्रूपी, सब सुखमय मुनि गाये । दौल चिदानँद स्वगुन मगन जे, ते जिय सुखिया थाये ॥ हम तो०॥४॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

महाचन्द जैन भजनमाला ।

(१) बधाई ।

बधाई आली नाभिराय घर आज ॥ टेर ॥ मरुदेवी सुत ऊपजो है आदि जिनेंद्र कुमार । इन्द्रपुरी तैं हू भली है आज अयोध्या द्वार ॥ बधाई० ॥ १ ॥ जन्मत सुरपति आइये हैं ले ले सब परिवार । मेरु शिखरपै न्हवन कियो है चीरो-दधिजल धार ॥ बधाई० ॥२॥ रूप जिनेंद निहारके है तृप्त न हुवो सुरराय । सहस्र नयन तबही रचे हैं देखनको जिनराय ॥ बधाई० ॥ ३ ॥ नाम दियो तब इन्द्रने है ऋषभदेव महराज । सौंपि नृपति कौं नाचिके हैं निज निज स्थान विराज ॥ बधाई ॥ ४ ॥ बीन बांसुरी नोवत्यां है बाजत सुन झ-नकार । नर नारी सबही चले हैं देखनको जिन

द्वार ॥ बधाई० ॥ ५ ॥ आधि व्याधि सबही तजे हैं तज दिये घरके काज। बालक छोड़े रोवते हैं देखनको महाराज ॥ बधाई० ॥६॥ जाचक जन बहु पोषिये हैं दान देय राजेन्द्र। दी अशीस यों जिनबधो ज्यों दोयजको महाचंद्र ॥ बधाई० ॥७॥

(२) बधाई।

सिद्धारथ राजा दरबारैं बटत बधाई रंग भरी हो ॥ टेक ॥ त्रिसला देवीनैं सुतजायो वर्द्धमान जिनराज बरी हो। कुंडलपुरमें घर घर द्वारे होय रही आनंद घरी हो ॥ सिद्धा० ॥ १ ॥ रत्नकी वर्षाको होते पन्द्रह मास भये सगरी हो। आज गगन दिश निरमल दीखत पुष्प बृष्टि गंधोद झरी हो ॥ सिद्धा० ॥ २ ॥ जन्मत जिनके जग सुख पाया दूरि गये सब दुक्ख टरी हो। अन्तर मुहूर्त नारकी सुखिया ऐसो अतिशय जन्म धरी हो ॥ सिद्धा० ॥ ३ ॥ दान देय नृपने बहुतेरो जाचिक जन मन हर्ष करी हो। ऐसे बीर जिनेश्वर चरणौं बुध महाचंद्र जु सीस धरी हो ॥४॥

(३) बधाई।

धन्य घड़ी याही धन्य घड़ीरी। आज दिवस याही धन्य घड़ी री ॥ टेर ॥ पुत्र सुलक्षमण महासैन घर जायो चंद्रप्रभ चन्द्रपुरी री ॥ धन्य० ॥१॥ गजके बदन शत बदन रदन बसु रदनपै तरवर एक करीरी। सरवर सत पण-बीस कमलिनो कमलिनी कमल पचीस खरीरी ॥ धन्य० ॥ २ ॥ कमल पत्र शत आठ पत्र प्रति नाचत अपसरा रंग भरीरी। कोडि सताइस गज सजि ऐसो आवत सुरपति प्रीत धरीरी ॥ धन्य ॥३॥ ऐसो जन्म महोत्सव देखत दूरि होत सब पाप टरीरी। बुध महाचन्द्र जिके भव मांही देखे उत्सव सफल परीरी ॥ धन्य० ॥ ४ ॥

(४) बिहाग।

चिदानन्द भूलि रह्यो सुधि सारी। तू तो करत फिरै म्हारी म्हारी ॥ चिदा० ॥ टेर ॥ मोह उदय तैं सबही तिहारो जनक मात सत नारी। मोह दूरि कर नेत्र उघारो इनमें कोइ न तिहारी

॥ चिदा० ॥ १ ॥ झाग समान जीवना जोविन परबत नाला कारी । धन पद रंज समान सबन को जात न लागे वारी ॥ चिदा० ॥ २ ॥ जूवा मांस मद्य अरु वेश्या हिंसा चौरी जारी । सप्त व्यसनमें रक्त होयके निज कुल कीनी कारी ॥ चिदा० ॥ ३ ॥ पुन्य पाप दोनों लार चलत हैं यह निश्चय उर धारी । धर्म द्रव्य तोय स्वर्ग पठावै पाप नर्कमें डारी ॥४॥ आतम रूप निहार भजो जिन धर्म मुक्ति सुखकारी । बुध महाचन्द्र जानि यह निश्चय जिनवर नाम सम्हारी ॥५॥

(५) सोरठ ।

जीव निज रस राचन खोयो, योतो दोष नहीं करमनको ॥ जीव०॥ टेर॥ पुद्गल भिन्न स्वरूप आपणूं सिद्ध समान न जोयो ॥ जीव ॥१॥ विषयनके संग रक्त होयके कुमती सेजां सोयो । मात तात नारी सुत कारण घर घर डोलत रोयो ॥ जीव ॥ २ ॥ रूप रंग नव जोबिन परकी नारी देख रमोयो । परकी निन्दा आप बड़ाई करता

जन्म विगोयो ॥ जीव० ॥३॥ धर्म कल्पतरु शिव फल दायक ताको जरतैं न टोयो। तिसकी ठोड महाफल चाखन पाप बमूल ज्यों बोयो ॥ ४ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म सेयके पाप भार बहु ढोयो। बुध महाचन्द्र कहे सुन प्रानी अंतर मन नहीं धोयो ॥ जीव० ॥ ५ ॥

(६)

निज घर नाय पिछान्यारे, मोह उदय होने तैं मिथ्या भर्म भुलानारे ॥ निज० ॥ टेर ॥ तूंतो नित्य अनादि अरूपी सिद्ध समानारे। पुद्गल जड़में राचि भयो तूं मूर्ख प्रधाना रे ॥निज०॥१॥ तन धन जोबिन पुत्र बधू आदिक निज मानारे। यह सबजाय रहनके नांई समझ सियानारे ॥ निज० ॥२॥ बालपने लड़कन संग जोबिन त्रिया जवानारे। वृद्धभयो सब सुधिगई अब धर्म भुलानारे ॥ निज ॥ ३ ॥ गई गई अबराख रही तू समझ सियानारे। बुद्ध महाचंद्र बिचारिर जिन पद नित्य रमानारे ॥ निजघर ॥ ४ ॥

(७)

पूजा रचाऊं जो पूजन फल पाऊं तुमपद चाहूंजी ॥ पूजा० ॥ टैर ॥ निरमल नीर धार त्रय देकर चंदन पद चर्चाऊंजी । उज्वल तन्दुल पुंज बनाकर पुष्प चढ़ाऊंजी ॥ पूजा० ॥ १ ॥ नानारस नैवेद्य मंगाऊं दीपक जोति जगाऊं जी । धूप अनंग मद संग खेयफल अर्घ धराऊं-जी ॥ पूजा० ॥२॥ अष्टद्रव्यको अर्घ बनाऊं नाचि नाचि गुण गाऊंजी । बुधमहाचंद्र कहै कर-जोड्या तुम पद चाहूंजी ॥ पूजारचाऊजी ॥३॥

(८)

और निहारोजी श्रीजिनवर स्वामी अंतर-यामीजी ॥ ओर नि० ॥टेर ॥ दुष्टकर्म मोय भव भव मांही देत रहैं दुखभारी जी । जरा मरण संभव आदि कछु पार न पायोजी ॥ और नि० १ ॥ मैं तो एक आठ संग मिलकर सोध सोध दुख सारोजी । देते हैं बरज्यो नहीं मानैं दुष्ट हमारोजी ॥ और ॥ २ ॥ और कोऊ मोय दीस-

त नांही सरणागत प्रतपालोजी। बुधमहाचन्द्र चरणढिग ठाड़ो शरण थांकोजी ॥ और ॥ ३ ॥

(९) धमाल।

धरमीके धर्म सदा मनमें। धरमीके ॥ टेर॥ रामचन्द्र अरु सीताराणी जाय बसे दंडकबनमें ॥ धरमी० ॥ १ ॥ द्वारापेक्षण ताहूं कीनू मुनिवर एक मिले क्षणमें ॥ धरमी० ॥ २ ॥ मास एक उपवासी मुनि लखि हरषे दोउ मन बच तनमें धरमी० ॥ ३ ॥ दोष रहित मुनिदान निरखके पक्षी जटायु अनुमोदनमें ॥ धरमी० ॥ ४ ॥ बुधमहाचन्द्र कहांहूजावो धरमीके धरम सदा मनमें ॥ धरमी ॥ ५ ॥

(१०)

मैं कैसे शिवजाऊंरे डिगर भूलावनी ॥ मैं कैसे० ॥ टेर ॥ बालपने लरकन संग खोयो, त्रिया संग जवानी ॥ मैं कैसे० ॥ १ ॥ वृद्धभयो सब सुधिगई भजि जिनवर नाम न जानी ॥ मैं कैसे० ॥ २ ॥ भवबनमें डिगरी बहु परती दुख-

कंटक भरितानी ॥ मैं कैसे० ॥ ३ ॥ कामचोर ढिग मोह बढै दोउ मारगमांही निसानी ॥ मैं कैसे० ॥ ४ ॥ ऐसे मारग बुधमहाचन्द्र तूं जि-नवरबचन पिछानी ॥ मैं कैसे० ॥ ५ ॥

(११)

सुफल घड़ी याही देखे जिनदेव ॥ टेर ॥ मनतो सुफल तुम चिंतवन करतैं पदजुग तुमपे आइ नयन सुफल तुम पद दरशेव ॥ सुफल० ॥ १ ॥ सीस सुफल तुम चरणन मनतैं जीभसुफल गुणगाइ हस्तसुफल तुम पदकरशेव ॥ सुफल० ॥ २ ॥ श्रवण सुफल तुम गुण सुणनेमें जन्म सुफल भजि साँइ बुधमहाचन्द्रजु चर्णनमेव ॥ सुफल० ॥ ३ ॥

(१२)

येही अज्ञान पना जिवड़ा तूने निजपर भेद न जानारे ॥ येही ॥ टेर ॥ तूतो अनादि अमर अरूपी निर्जर सिद्ध समानारे ॥ येही० ॥ १ ॥ पुद्गलजड़में राचिके चेतन होयरहा मूर्ख प्रधाना

रे ॥ येही० ॥ २ ॥ कहत सबैं जगवस्तु हमारी जैसे बकत अयानारे ॥ येही० ॥ ३ ॥ आतमरूप सम्हारि भजो जिन बुधमहाचन्द्र बखानारे ॥ येही अज्ञान० ॥ ४ ॥

(१३)

जिनवानी सदासुखदानी, जानि तुम सेवो भविक जिनवानी ॥टेर॥ इतरनित्य निगोदमांहि जे जीव अनंत समानी। एक सांस अष्टादश जामण मरण कहे दुखदानी ॥ जानि० ॥ १ ॥ पृथ्वी जल अरु अग्नि पवनमें और बनस्पति आनी। इनमें जीव जिलाय जिलायर, जीवदयाकी कहानी ॥ जानि० ॥ २ ॥ नित्य अकारण आदिनिधनकरि तीन लोक त्रयमानी। करता हरता कोउनाय याको, ऐसो भेद जतानी ॥जानी० ३ ॥ वात वलत्रय वेढ़ि धनोदधि धन तनु तीन रहानी। इन आधार लोक त्रय राजत, और कछू न वखानी ॥ जानितुम० ॥४॥ ऐसी जानि जिनेश्वरवानी, मिथ्यातमकी मिटानी। बुधमहा-

चन्द्र जानि जिनसेवे, धारि धारि मन मानी ॥ जनि तुमसेवो ॥ ५ ॥

(१४)

उदयज्यांको पापको बानैं कुण समभावेरे ॥ उदय ॥ टैर ॥ मंत्री मिल जरासंधसे कही कृष्ण बली जगमाय । गोबरधन चिंट अंगुली धर्‍यो कंसको मार्‍यो आय ॥ उदय० ॥ १ ॥ लघु तुम भाई है बली अपराजित नाम कहाय । ताँको मार्‍यो खड्गतैं जांकी नखन भई तुम थाय ॥ उदय० ॥ २ ॥ समभायो समभे नहीं प्रानी कर्म उदय जब आय । कर्म किया सोहीभोगल्यो बुधमहाचन्द्र यूं गाय ॥ उदय जाको० ॥३॥

(१५)

भूल्योरे जीव तूं पदतेरो । भूल्योरे ॥ टेर॥ पुद्गल जड़में राचि राचिकर, कीनों भवबनफेरो । जामण मरण जरा दोउ दाझूयो भस्मभयो फल नरभव केरो ॥ भूल्योरे० ॥ १ ॥ पुत्र नारि बान्धव धन कारण पापकियो अधिकेरो । मेरो

मेरो यूं करिमान्यु इनमें नहीं कोई तेरो न मेरो भूल्योरे० ॥ २ ॥ तीन खंडको नाथ कहावत मंदोदरी भरतेरो । कामकलाकी फोज फिरी तब, राज खोय कियो नर्क बसेरो ॥ भूल्योरे० ॥ ३ ॥ भूलि भूलिकर समझ जीव तूं अबहू औसर हेरो । बुधमहाचन्द्र जाणि हित अपणू पीवो जिनबानी जलकेरो ॥ भूल्योरे० ॥ ४ ॥

(१६)

कुमतिको छाडो भाई हो ॥ कुमति ॥ टेर ॥ कुमति रची इक चारुदत्तने, बेश्या संग रमाई । सब धन खोय होय अति फीके गुंथ ग्रह लटकाई ॥ कुमति ॥१॥ कुमति रची इक रावण नृपनैं सीताको हर ल्याई । तीन खंडको राज खोयके दुरगति बास कराई ॥२॥ कुमति रची कीचकने ऐसी द्रोपदि रूप रिझाई । भीम हस्ततैं थंभ तले गड़ि दुक्ख सहे अधिकाई ॥ कुम० ॥ ३ ॥ कुमति रची इक धवल सेठने मदन मजूसा ताई । श्रीपालकी महिमा देखिर डील फाटि मरजाई ॥

कुमति० ॥ ४ ॥ कुमति रची इक ग्राम कूटने रक्त कुरंगी माई । सुन्दर सुन्दर भोजन तजके गोबर भक्ष कराई ॥ कुमति० ॥५॥ राय अनेक लुटे इस मारग बरणत कोन बड़ाई । बुध महाचन्द्र जानिये दुखकों कुमती द्यो छिटकाई ॥६॥

(१७) माड़ ।

ऋषभ जिन आवता ये माय, अमा मोरी नग्न दिगम्बर काय ॥ ऋषभ० ॥ टेर ॥ सब नर नारि मिल देखिया ए माय, अमा मोरी नजर भेट बहू लेय ॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ कइ गज कइ अश्व देवैं ये माय, अमा मोरी कइ यक कन्या देत ॥ऋष० ॥२॥ कइ रतन नजर कस्या हे माय अमा मोरी केई वस्त्र अपार ॥ ऋषभ० ॥ ३ ॥ इत्यादिक वस्तु देवैं हे माय, अमा मोरी वे कछू लेते नांय ॥ ऋषभ० ॥४॥ क्या जानैं क्या चाहि है ए माय, अमा मोरी धन वे कछू यन लेय ॥ ऋषभ० ॥५॥ ऐसे जिन मोकूं मिलो ऐ माय, अमा मोरी बुध महाचन्द्रके भाव ॥ऋषभ०॥६॥

(१८)

शीख सुगुरू नित्य उर धरो सुन ज्ञानी जी। एक भजो तज दोय ज्ञानीजी ॥ शीख ॥ टेर ॥ तीन सदा उरमें धरो सुन ज्ञानीजी, तजो चारको हेत ज्ञानीजी ॥शीख॥१॥ पंचमको नित संग करो सुन ज्ञानीजी, षट तज नीका जानि ज्ञानीजी ॥२ सातनको चितवन करो सुन ज्ञानीजी, आठ तजो दुख कार ज्ञानीजी ॥ शीख ॥३॥ नौ हृदय नित धारिये सुन ज्ञानीजी, दश फुनि ग्यारा धारि ज्ञानी जी ॥ शीख ॥ ४ ॥ बारह फुनि तेरह भजो सुन ज्ञानीजी, बुधमहाचन्द्र निहार ज्ञानीजी ॥ शी०५

(१९)

देखो पुद्गलका परिवारा जामें चेतन है इक न्यारा ॥ देखो ॥ टैर ॥ स्पर्श रसना घ्राण नेत्र फुनि श्रवणपंच यह सारा। स्पर्श रस फुनि गंध वर्ण स्वर यह इनका विषयारा ॥ देखो० ॥ १ ॥ क्षुधातृषा अरु राग द्वेष रुज सप्तधातु दुखकारा बादर सूक्ष्मस्कंध अणु आदिक मूर्तिमई निरधा-

रा ॥ देखो० ॥ २॥ काय बचन मन स्वासोछ्वा-
सजू थावर त्रसकरि डारा । बुधमहाचन्द्र चेत-
करि निशदिन तजि पुद्गलपतियारा ॥ यह० ॥३॥

(२०)

अमृत झर झुरिझुरि आवे जिनबानी ॥ अमृत
टेर ॥ द्वादशांग बादल व्हे उमड़े ज्ञान अमृत
रसखानी ॥ अमृत० ॥ १ ॥ स्याद्वाद विजुरी
अति चमके शुभ पदार्थ प्रगटानी । दिव्यध्वनी
गंभीर गरज है श्रवण सुनत सुखदानी ॥अमृत॥
२ ॥ भव्यजीव मन भूमि मनोहर पाप कूड़कर
हानी । धर्म बीज तहां ऊगत नीको मुक्ति महा-
फल ठानी ॥ अमृत० ॥ ३ ॥ ऐसो अमृत झर
अति शीतल मिथ्या तपत भुजानी । बुधमहा-
चन्द्र इसी झर भीतर मग्न सफल सोही जानी ॥
अमृतझर० ॥ ४ ॥

(२१)

सीतासती कहत है रावण सुनरे अभिमानी
तुम कुलकाष्ट भस्मके कारण हमें आगि आनी ॥

टेर ॥ कहा दिखावत हमको तेरी लंकाराजधानी तेरा राज्य बिभो हम दीसे जूं जीर्णतृण समानी ॥ सीता० ॥ १ ॥ शीलवंत पुरषनके दारिद सोहू सुखदानी । शील हीन तुमसे पापिनके सम्पति दुखदानी ॥ सीता० ॥ २ ॥ हमरे भरता रामचन्द्र देवर लच्छमण जानी । महा बलवंत जगतमें नामी तोसे नहीं छानी ॥ सीता० ॥ ३ ॥ चन्द्रनखा तेरी बहिन तासको पुत्ररहित ठानी ॥ खरदूषण हति रंडाकीनी सोतैं नहींमानी ॥ सीता० ॥४॥ जोतूं कहै हम हैं विद्याधर चलत-गगन पानी । काग कहा नहीं गगन चलत है सौ औगुन खानी ॥ सीता० ॥ ५ ॥ प्रतिनारायण नकभूमिमें कहती जिनबानी । बुधमहाचन्द्र कहत है भावी मिटै न मेटानी ॥ सीता० ॥ ६ ॥

(२२)

रावण कहत लंकापति राजा सुन सीताराणी । काम अग्नि भस्मित हमको तूं दे सरीर पानी ॥ टेर ॥ देख हमारी तीनखंडको लंका

राजधानी । भूमिगोचरी अरु विद्याधर रहत छं-दिखानी ॥ रावण० ॥ १ ॥ राज हमारो तीन खंड मंदोदरीसी रानी । इन्द्रजीतसे पुत्र बिभो-षणसे भाई ज्ञानी ॥ रावण० ॥ २ ॥ इन्द्र आदि विद्याधर हमने जीते सब जानी । छत्र फिरत इक हमरे ऊपर और नही ठानी ॥ रावण० ॥३॥ रंक कहां तेरो भर्ता हमसे रामचन्द्र मानी । महा दुर्बल बनबासी दीसे हमसे रहे छानी ॥ रावण० ॥ ४ ॥ इत्यादिक मानी नही सीता शीलरत्न खा-नी । बुधमहाचन्द्र कहत रावणकी सुधि बुधि बिसरानी ॥ ५ ॥

(२३)

विषय रस खारे, इन्हें छाड़त क्यों नहिं जीव । बिषयरस खारे ॥ टेर ॥ मात तात नारी सुत बांधव मिल तोकूं भरमाई ॥ विषय भोगर-सजाय नर्क तूं तिल तिल खंड लहाई ॥ बिष-य० ॥ १ ॥ मदोनमत्त गज बस करनेकूं कपट-की हथनी बनाई । स्पर्शन इन्द्रिय बसि होके

आय पड़त गजखाई ॥ विषय० ॥ २ ॥ रसनाके वसिहोकर मांछल जाल मध्य उलझाई। भ्रमर-कमलविच मृत्यु लहत है विषय नासिका पाई ॥ विषय० ॥३॥ दीपक लोय जरत नैनू बसि मृत्यु पतंग लहाई। कानन के बसि सर्प हायके पींजर मांहि रहाई ॥ विषय० ॥ ४ ॥ विषखायेतैं इक भव माही दुख पावै जीवाई। विषय जहर खा-येतैं भव भव दुख पावै अधिकाई ॥ विषय० ॥५॥ एक एक इन्द्रीतैं यह दुख सबकी कौन कहाई। यह उपदेश करत है पंडित महाचन्द्र सुखदाई ॥

(२४)

भवि तुम छाड़ि परत्रियाभाई निश्चय बि-चारकरो मनमेरे ॥ टेर ॥ जप तप संजम नेम आकड़ी ध्यान धरत मुसानन मेरे। परत्रिय सं-गतसे सब निष्फल ज्यों गज जल डारे तनमेरे ॥ भवि० ॥ १ ॥ पुज्यपना अरु मानपना फुनि ध-न्यपनार बड़ापन मेंरे। परत्रिय संगतसे सबनासे गगनमें धनुष पवन थकि तेरे ॥ भवि० ॥ २ ॥

सिंह बघेरी और सर्पणी इनहीकी संगत दुख गिन तेरे । इनहूकी संगत दुख हैं थोड़े परत्रिय संग लगे घनमेरे ॥ ३ ॥ भवि० ॥ परत्रिय संगत रावण कीनी सीता हरलायो बन मेंरे । तीन खंडको राज गमायो अपजस लेगयो नर्कन मेंरे ॥ भवि० ॥ ४ ॥ ज्यों ज्यों परत्रिया संगति करि हैं त्यों त्यों काम बढ़ा अंगमेंरे । बुधमहाचन्द्र जानिये दूषण परत्रिय संग तजो छिनमेंरे ॥भ०५

(२५) रेखता ।

देखि जिनरूप द्वै नयना हर्ष मनमें न माया हो ॥ टेर ॥ इन्द्रहु सहस्र नेत्रन रच तुम्हें जिन देखन ध्यायाहो ॥ देखि० ॥ १ ॥ धन्यहो आजका यह दिन तुम्हारा दर्श पाया हो । रंक घर ज्यों सुऋद्धि होतै त्यों हमैं हर्ष आया हो ॥ देखि० ॥ २ ॥ सफल पद थान यह आतैं सफल नयनों दर्श पातैं । सफल रसना जु पदगातैं सफल कर पद पर्शवातैं ॥ देखि० ॥ ३ ॥ और कछु नांहि मोबांछ्या सेवा तुम चरण पावांहो ।

मिलो भव भव हमें येही सीस महाचन्द्र नाया-हो ॥ देखि जिन० ॥ ४ ॥

(२६)

जिनबाणी गंगा जन्म मरण हरणी । जन्म टेर ॥ जिन उर पद्म कुंडमेंतैं निकसी मुखहीमें गिर गिरणो ॥ जन्म० ॥ १ ॥ गौतम मुख हेम कुल परबत तल दरह बिंचमें ढरणी ॥ जन्म० ॥ २ ॥ स्यादवाद दोऊ तट अति दृढ़ तत्व नीर झरणी ॥ जन्म० ॥ ३ ॥ सप्तभंग मय चलत तरंगिनी तिनतैं फैल चलणी ॥ जन्म० ॥ ४ ॥ बुधमहाचन्द्र श्रवण अंजुली तैं पीवो मोक्षकर-णी ॥ जन्म मरण ॥ ५ ॥

(२७)

भाई चेतन चेत सकै तो चेत अब नातर होगी खुवारीरे । भाई चेतन ॥ टेर ॥ लख चौरा-सीमें भ्रमता भ्रमता दुरलभ नरभव धारीरे । आयुलई तहां तुच्छ दोषतैं पंचम काल मझारी रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ अधिक लई तब सौ बरसन-

की आयु लई अधिकारीरे । आधी तो सोनेमें खोई तेरा धर्म ध्यान बिसरारीरे ॥ भाई० ॥ २ ॥ बाकी रही पचास वर्षमें तीन दशा दुखकारीरे । बाल अज्ञान जवान त्रियारस वृद्धपने बलहारीरे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ रोग अरु शोक संयोग दुःख बसि बीतत हैं दिनसारी रे । बाकीरही तेरी आयु किती अब, सोतैं नाहिं विचारीरे ॥ भाई० ॥ ४॥ इतनेहीमें किया जो चाहै सो तू कर सुखकारीरे ॥ नहीं फंसेगा फंद बिच पंडित महाचन्द्र यह धारीरे ॥ भाई० ॥ ५ ॥

(२८)

जीव तू भ्रमत भ्रमत भव खोयो जब चेत भयो तब रोयो ॥ जीव तू ॥ टेर ॥ सम्यकदर्शन ज्ञान चरण तप यह धन धूरि बिगोयो । विषय भोग गत रसको रसियो छिन छिनमें अति सोयो ॥ जीव० ॥ १ ॥ क्रोध मान छल लोभ भयो तब इनहीमें उर भोयो । मोहरायके किंकर यह सब इनके बसिव्हे लुटोयो ॥ जीव० ॥ २ ॥ मोह

निवार संवारसु आयो आतम हित स्वर जोयो। बुधमहाचन्द्र चन्द्रसमहोकर उज्वल चित रखो-यो ॥ जीव तू भ्रमत० ॥ ३ ॥

(२६)

मन बैरागीजी नेमीश्वरस्वामी शिवपुर गा-मीजी। मनबै० ॥टैर॥ अपनूं राज राखनके कारण कृष्ण कपट करलीनूंजी ॥ उग्रसैन पुत्री राजुलसे व्याह रचीनूंजी ॥ मन० ॥ १ ॥ छपन कोड़ि जादवमिल भेला खूब बरात बणाईजी। तौरण आय देख पशुदु खिया बंद छुड़ाईजी ॥ मन० ॥ २ ॥ तौरणसे रथ फेर जिनेश्वर उर्जयंतगिरि ठाड़ेजी। कांकण डोरा तोड़ मोड़कर दिक्षा मांड़ीजी ॥ मन० ॥ ३ ॥ घातिया घाति अघाति बहुबिधि मोक्ष महल गिर ठाड़ेजी। बुधमहाचन्द्र जान जिनसेवे नोनिध लागीजी ॥ मनबैरा० ॥ ४ ॥

(३०)

जगमें जगती जिनबानीरे जगमें जगती

जिनबानी, भवतारण शिव सुखकारण ॥ जगमें टेर ॥ स्यादवादकी कथनी वाली सप्तभंगजानी सप्त तत्व निर्णयमें तत्पर नव पदार्थ दानी ॥ भवतार० ॥ १ ॥ मोह तिमर अंधनको जो है ज्ञान शलाकानी । मिथ्या तप तप तनको जो है मलियागर खानी ॥ भवता ॥ २ ॥ इस पंचम कलिकाल मांहि जे हैं केवली समानी । धर्म कु-धर्म कुदेव देवगुरु कुगुरु वतानी ॥ भवता० ॥३॥ इन्द्र धरणेन्द्र खगेन्द्रादिक पदकी निसानी । वि-षयादिक विष बिध्वंस करसेव सुख सुधापानी ॥ भवता० ॥ ४ ॥ कुमग गमन करता भविजनकूं सुद्ध मग जितानी । जड़ पुद्गल रत बुध महाच-न्द्रकूं निजपर समझानी ॥ भव० ॥ ५ ॥

(३१

जिया तूने लाख तरह समझायो, लोभीड़ा नाही मानैरे ॥ टेर ॥ जियातैं ॥ जिन करमन संग बहु दुख भोगे तिनहीसे रुचि ठानै, निज स्वरुप न जानैरे ॥ १ ॥ विषय भोग विष सहित

अन्नसम बहु दुख कारण खाने, जन्म जन्मान्त-
रानैंरे ॥ २ ॥ शिव पथ छाड़ि नर्कपथ लाग्यो
मिथ्या भर्म भुलानैं, मोहकी घैल आनैंरे ॥ ३ ॥
ऐसी कुमति बहुत दिन बीतै अबतो समझ स-
याने, कहैं बुधमहाचन्द्र छानैंरे ॥ ४ ॥

(३२)

ओर निहारो मोरे दीनदयाला ॥ ओर ॥
टेर ॥ हम कर्मनतैं भव भव दुखिया, तुम जगके
प्रतिपाला ॥ ओर० ॥ १ ॥ कर्मन तुल्य नहीं
दुखदाता, तुमसम नहिं रखवाला ॥ ओर० ॥२॥
तुमतो दीन अनेक उधारे, कौन कहैतैं सारा ॥
ओर० ॥ ३ ॥ कर्म अरीकौं बेगि हटाऊं, ऐसी
कर प्रभु म्हारा ॥ ओर० ॥ ४ ॥ बुधमहाचन्द्र
चरण युग चर्चैं, जाचतहै शिवमाला ॥ ओर०

(३३)

ओर तोर निरधारा जिनजी सच्चादेव हमारा
है। ओरतोर ॥ टैर ॥ दोष अठारा रहित बिरा-
ज छियालीस गुण सारा है ॥ ओर० ॥ १ ॥

क्षुधा तृषा भय द्वेष मोह मद स्वेद खेद निरबारा है। जन्म जरा अर मरण अरतिकरि रहित भये भव पारा है॥ ओर० ॥ २ ॥ रोग शोक बिस्मय निद्रा फुनि चिन्ता राग बिदारा है। यह अष्टादश दोष तिनूं करि रहित निरंजन कारा है॥ ओर० ॥ ३ ॥ स्वेद रहित मलमूत्र रहित तनु रुधिर दूध आकारा है। बज्र बृषभनाराच संहनन सम चतुर तनु धारा है॥ ओर० ॥ ४ ॥ रूप अनंत सुगंध सुलक्षण मंड अतुल बल भारा है। सबकौं प्रिय हित मधुर बचन यह दश अतिशय जन्मारा है॥ ओर०॥५॥ बृक्ष अशोक चमर भामंडल छत्र सिंघासण न्यारा है। पुष्पबृष्टि दुन्दुभि दिव्यध्वनी प्रातिहार्य अठकारो हैं॥ ओर० ॥ ६ ॥ जोजन शत दुर्भिक्ष गगन चल प्राणी बधकौं टारा है। निरुपसर्ग निहार चतुर्मुख सब विद्या आधारा हैं ॥ ओर० ॥ ७॥ छाया रहित शरीर फटिक सम नयन पलक नहिं डारा है। बढ़ै नही नख केश ये केवल उपजे

दशही प्रकारा हैं ॥ अरो० ॥ ८ ॥ मागधि भाषा सब जीव मैत्री सब ऋतु फूल फलारा हैं । दर्पणभू अनु पवन हर्ष सवैं जोजन मरुत सवारा है ॥ ओर० ॥ ९ ॥ मेघागंधो पदतले कमल नभ श्रुभंजय देवारा है । धर्मचक्र आगे मंगल वसु यह चौदाजु सुरारा हैं ॥ १०॥ ज्ञान अनंत बीर्य सु अनंता दर्श अनंत सुखारा है । ऐसा देव निरंजन लखि बुधिमहाचन्द्र सिरधारा है ॥ ११ ॥

(३४)

मुनिजन जगजीव दयाधारी । मुनि ॥ टेर॥ पची जटाउ ज्ञान बसत बन ताको जैन धर्मकारी ॥ मुनि० ॥ १ ॥ सम्यक् दर्शन प्रथम बतायो पांच अणुव्रत बिस्तारी ॥ मुनि० ॥ २ ॥ धर्मध्यान रतकरके ताको हिंसक भाव सब निवारी ॥ मुनि० ॥ ३ ॥ ऐसे मुनिवर पुन्य उदयतैं भवि जीवनको मिलतारी ॥ मुनि० ॥ ४ ॥ बुधमहाचन्द्र मुनीश्वर ऐसे हम मिलनेकी बांछा भारी ॥ मुनिजन० ॥ ५ ॥

(३५) लावनी मरहठी ।

तजो भविव्यसन सात सारी ॥ लगे निज कुलकै अतिकारी ॥ टेर ॥ जुवातैं सरब द्रव्यनाशे ॥ करै नर मिल तांकी हाँसै ॥ सबनमें नहीं प्रतीत तांसै ॥ जुवारी घलै राज फांसैं ॥ दोहा ॥ पांडवसे हो गये बली जूवातैं अतिख्वार । बारा बरसतक राज हारके भ्रमे महा बनचार ॥ तजो जूवा बहु दुखकारी । तजो० ॥१॥ माँसतैं जीव घातते हैं ॥ जीभके लम्पट सेवै हैं ॥ नर्कमें दुक्ख लहेव हैं ॥ पिंड अघको मुखलेवैं हैं ॥ दोहा बक राजा बहु पुरूषहते मांस भक्षणके काज । पांडव भीमबलीसे पाये मरण नर्क दुख पाज ॥ मांसतैं दुखपावै भारी ॥ तजो० ॥ २ ॥ होत मदिरासे मति हानी ॥ मात अरु युवती समजानी वस्त्र की भी न शुद्धिठानी ॥ कहो बृषकी सुधि क्यों मानी ॥ दोहा ॥ जादव कुल मद्दय पीयके द्वीपायणके योग । भश्म भये हैं सहित द्वारिका फेर नही संयोग ॥ मद्य सबसुधि नाशकारी ॥

तजो ॥ ३ ॥ नीच कुक्कर खप्पर ज्यों हैं ॥ रजक की शिलाहोत त्यों हैं ॥ नीच अर उच्च सेय यों हैं ॥ तजो वैश्या बहु दुखकौं है ॥ दोहा ॥ चारुदत्तसे सेठहुये बेश्यातैं दुखरूप। सब धन खोय होय अति फीका पड़े गुंथग्रह कूप ॥ तजो तातैं गनिका यारी ॥ तजो० ॥ ४ ॥ रोज मृग आदि जीवघातैं ॥ शिकारी कहैं लोग तातैं ॥ हो तबहु पाप खानि यातैं ॥ पापकरि जाय नर्क सातैं ॥ दोहा॥ ब्रह्मदत्त नृप खेटतैं दंड लहे विधि पंच। परभवमें अति दुक्ख भोगिकै लह्यो खेट फल-संच ॥ खेटतैं होत बहुतख्वारो ॥ तजो० ॥ ५ ॥ लोभके लम्पट जीव जेहैं ॥ कपटकी खानि सदा तैं हैं॥ करैं चौरीपर गृहतैं हैं ॥ खाय परिवार सहित वे हैं ॥ दोहा ॥ सत्य घोष मंत्री लहे चोरिरल शुभपंच। मल्ल मुष्टि गोमय हराधन दंड तीन लहे खैंच ॥ होय यही दुक्ख भयकारी ॥ तजो ॥ ६ ॥ परत्रिया सेवन दुखकारी ॥ बिचारी ना कछु अबिचारी ॥ पति निज संग बिचारथा

हारी ॥ कहो कैसे होय तिहारी ॥ दोहा ॥ रावणसे बलवंत महा तीनखंडके ईश । परत्रिया वाँछे दुखभोगे नर्कमांहि बहुरीस ॥ पराई नारि तजो प्यारी ॥ तजो० ॥ ७ ॥ जुवातैं पांडव बक पलतैं ॥ मद्यसे जादव बहु गिलतैं ॥ वैश्यां चारूदत्त मलतैं ॥ ब्रह्मदत्त नृप खेट बलतैं ॥ दोहा ॥ चोरीतैं शिवभूति दुखी रावण परत्रिय संग । एक एकसे हो अति दुखिया सातनको कहा रंग कहत बुध महाचन्द्र हारी ॥ तजोभवि० ॥ ८ ॥

(३६) धमाल ।

नेमि रमते बालब्रह्मचारी ॥नेमि० टेर॥ हांस्य बिनोद करै हरि रामा देवर लखि निज संसारी ॥ नेमि० ॥ १ ॥ कोऊ कहत देवर तुम परणू देखो षोड़स सहस्र कृष्णधारी ॥ नेमि० ॥ २ ॥ कोई कहैं देवर तुम नहीं सूर ये कहु तिय तुम नहिकारी ॥ ३॥ काम खेल करती कर करसे नेमिनाथ न भये बिकारी ॥ ४ ॥ बुध महाचन्द्र शीलकी महिमा तियमधि रहते अबिकारी ॥५॥

(३७)

मिटत नही मेटेसै याती होणहार सोई हो-य ॥ मिटत न० ॥ टेर ॥ माघनंद मुनिराजवैंजी भये पारणौ हेत । व्याह रच्यो कुमहार की धीसूं वासणा घड़ि घड़ि देत ॥ मिटत० ॥ १ ॥ सीता सती बड़ी सतवंती जानत है सब कोय । जो उदियागत टलै नहीं टाली कर्म लिखा सो ही होय ॥ मिटत० ॥ २ ॥ रामचन्द्रसे भर्ता जाके मंत्री बड़े विशेष । सीता सुख भुगतन नहीं पायो भावनि बड़ी बलिष्ट ॥ मिटत० ॥ ३ ॥ कहां कृष्ण कहां जरद कुंवरजी कहां लोहाकी तीर । मृगके धोके बनमें मार्यो बलभद्र भरण गये नीर मिटत० ॥ ४ ॥ महाचन्द्रतैं नरभव पायो तू नर बड़ो अज्ञान । जे सुख भुगले भाव प्रानी भजलो श्रीभगवान ॥ मिटत० ॥ ५ ॥

(३८)

तुम्हैं देखि जिन हर्ष हुवो हम आज ॥ टेर जन्मत सहस्र नयन हरि रचिये तुम छवि देखन

काज ॥ तुम्हैं० ॥ १ ॥ तुम तनतेज शीतल तल लखिके रवि शशि छबि कृत लाज ॥ तुम्हैं०॥२॥ रंक रत्न ऋद्धि धरि घरनतैं होतैं आनंद समाज तुम्हैं० ॥ ३ ॥ चातक चितमें हर्ष होत है ज्यों सुनि सुनि घन गाज ॥ तुम्हैं ॥ ४ ॥ तुम जग तारण तिरण भवोदधि कीनी धर्म जिहाज ॥ तुम्हैं० ॥ ५ ॥ तुम भवि भाव भक्ति बसि बंदत तिनैं पाई भव पाज ॥ तुम्हैं० ॥ ६ ॥ बुध महा-चन्द्र चरण अर्चन करि जाचै अजाचिक राज ॥ तुम्हैंजि० ॥ ७ ॥

(३६) बधाई ।

देखो आज बधाई रंगभीनी हो ॥ देखो ॥ टेर ॥ समद बिजै शिवादेवीने सुत नेमीश्वर प्रभू कीनी हो ॥ देखो० ॥ १ ॥ इन्द्र ही नाचत इन्द्र बजावत बीन बंसी सुर झीनी हो ॥ देखो० २ ॥ कई सचि नाचत कई सचि गावत कई कर-ताल बजीनी हो ॥ देखो० ॥३॥ जादवकुल आ-कास चन्द्रसम उपजे हर्ष नवीनी हो ॥ देखो० ॥

४ ॥ ऐसे हर्ष देखनेमें बुध महाचन्द्र मति दीनी हो ॥ देखो० ॥ ५ ॥

(४०)

अरज मोरी एक मानूंजी, होजिन जी चमत्कारि महाराज ॥ टेर ॥ तुम तोशिव पुर बास कीनूंजी, होजिनजी हम डूबैं भवमांहि, तार मोहि दीन जानूंजी ॥ होजिनजी ॥१॥ तुम निजरूपी व्हे रहेहो राज होजिनजी, हम पर परिणति लीन करो निजरूप बानूंजी ॥ होजिनजी ॥ २ ॥ तुमतो कर्म बिनाशियेजी राज हो प्रभूजी हमको करम दुख देत, जन्म जन्मांतरानोंजी ॥ होजिनजो ॥ ३ ॥ भव भवमें तुम चरणकी होराज होजिनजी सेबाबुध महाचन्द्रक मांगत सो मिलानूंजी ॥ होजिनजी ॥ ४ ॥

(४१)

देखो काल बली भव बनमें। नही कछु जीव दया जांके मनमें ॥ टेर ॥ राव रंकसब गिणत एकसे अधिक हीन न गिणनमें ॥ देखो० ॥१

॥ इन्द्र धरणेन्द्र नरेन्द्र खगेन्द्र जूते जीते सवरण-में । बाल जवान बृद्ध नहीं पूछै निरधन सधन गिलनमें ॥ देखो० ॥ २ ॥ साह चोर सूरे कायर सब तिष्ठै जाके बदनमें । रोगी सोगी भोगी दीन सब चरबस किये जिही छिनमें ॥ देखो० ॥ ३ ॥ उर्द्ध अधः सागर गिर गहरे कहांहु नाहि सरनमें । जहां जहां जाय जीव सरनाके तहां तहां खाक जगनमें ॥ देखो० ॥४॥ ऐसो काल बलीको जीते तिष्टे शिव महलनमें । तिनको देखि हर्ष है पंडित महाचन्द्रके तनमें ॥देखो० ॥ ५ ॥

(४२)

मिथ्याती जीवड़ा मुनि बचन न मानैरे ॥ मिथ्या० ॥ टेर ॥ अंति मुक्ति मुनियूंकहीजी जो देवकी सुतहोय। सोही हणै जीवंजिसा तेरा नाथ तात यह दोय ॥ मिथ्या० ॥ १ ॥ कंस जा-य बसुदेव सेकही जाचतहैं हम तोय । देवकी कै सुत मोघरा होवै यह बर दीजो मोय ॥ मिथ्या० ॥ २ ॥ मल्ल युद्ध के मायनैजी हरिवृन्दा बनतैं

आय । पकडि चरण पृथ्वी पटकि मास्यो महाचंद्र कंसराय ॥ ३ ॥ मिथ्याती० ॥

(४३)

विवेकी जीव गुरु उपगारी मानू हो ॥ टेर ॥ देव स्वर्ग तैं आयके जी बंदे श्रीजिनराय । चारुदत्तको बंदके फिर बंदे श्रीमुनिराय ॥बिबे०॥१ मुनिसुत पूछी देवसूं तुम हो अविवेक लखाय । प्रथमहि गृहस्थि बंदिकेजी बंदे श्रीमुनिराय ॥ विवे० ॥२॥ देव कही हमरे गुरू यह प्रथम चारुदत्त राय । कान मंत्र नवकार दियो उपगार कियो मुझ थाय ॥ बिबे० ॥ ३ ॥ एकहि अक्षर देय सो गुरु जिनबाणीमें गाय । शिक्षा दे सो धर्मकी जानैं, भूले पापी थाय ॥ बिबे० ॥ ४ ॥ देव बचन ऐसे कहोजो समझे खग दोऊं भाय । बुध महाचंद्र न भूलिये उपगार कियो मुझथाय ॥ बिबेकी जीव० ॥ ५ ॥

(४४)

सदा दुख पावेरे प्रानी तूतो चौरासी लख

योनिमें ॥ टेर ॥ द्वै निगोद वसि एक स्वास, अ-
ष्टादस मरण लहानी । सात सात लख योनि
भोगिकैं पडियो थावर आनी ॥ सदा० ॥ १ ॥
पृथ्वी जल अरु अग्नि पवनमैं, सात सात लख
जानी । बनस्पती की काय मैं रे दश लख
योनि करानी ॥ सदा० ॥ २ ॥ बेइन्द्री संखादि
जीवकी द्वै लख योनि बखानी । तेइंद्री चोइन्द्री
जूक, अली च्यारि लाख परवानी ॥ ३ ॥ तिरजं-
च माहि च्यारि लख धारी योनि महादुख दानी,
भूख तृषा अरु शीत उष्णता अधिके भार लदा-
नी ॥ सदा० ॥ ४ ॥ पाप उदै जब नर्क योनिमें
च्यारि लाख ठहरानी । छेदन भेदन ताड़न ता-
पन दुक्ख सहे अधिकानी ॥ सदा० ॥ ५ ॥ किं-
चितपुन्य वसाय देव पद योनि च्यारि लख मानी
परकी ऋद्धि देखि अतिझूरयो फूलमाल कुम्हला-
नी ॥ सदा ॥६॥ मनुष योनि लख चौदह सोतैं
बहुबेर पाय अज्ञानी । जैन धर्मको मर्म न जा-
न्यौं मिथ्या भर्म भुलानी ॥ सदा० ॥ ७ ॥ पुन्य

उदय श्रावक कुल पायो जैन धर्म चितलानी।
चौरासीके दुक्ख हरन बुध महाचन्द्र कहै बानी॥
सदादुख पावेरे ॥ ८ ॥

(४५) प्रभाती।

विपुलाचल शिखर आजि और रूप राजै ॥
टेर ॥ आये जिन वर्द्धमान समवसरण युत
महान सुरनर तिर्यंच आनि निजस्थान बिराजे ॥
विपुला ॥ १ ॥ षट ऋतु फल फूल सबैं फलिये
इक काल अबैं दाडिम अरु दाख फबैं आम्र पुंग
ताजे ॥ विपुला० ॥ २॥ सिंह गौवत्स हेत मूषक
मार्जार पेत न्योला अरु नाग केत बैर रहित
छाजै ॥ विपुला० ॥ ३ ॥ सुणियो अतिशय प्रवी-
न श्रेणिक नृप धर्म लीन करमे बसु द्रव्य कीन,
पूजन के काजै ॥ बिपुला० ॥ ४ ॥ कीनूं बहु पु-
न्य जिनै तप करिकैं रैन दिनैं पंडित महाचन्द्र
तिनैं देखे महाराजै ॥ बिपुला० ॥ ५ ॥

(४६)

राग द्वेष जाके नहिं मनमैं हम ऐसेके चा-
करहैं ॥ टेर ॥ जो हम ऐसेके चाकरतो कर्म

रिपू हम कहा करि हैं ॥ राग ॥ १ ॥ नहिं अष्टा दश दोष जिनूमें छियालीस गुण आकर हैं ॥ सप्त तत्व उपदेशक जगमें सोही हमारे ठाकुरहैं ॥ राग ॥ २ ॥ चाकरिमें कछु फल नहिं दीसत तोनर जगमें थाकि रहैं ॥ हमरे चाकरिमें है यह फल और जगतके ठाकर हैं ॥ राग ॥ ३ ॥ जांकी चाकरि बिन नहि कछु सुख तातैं हम सेवा करिहैं ॥ जाके करणे तैं हमरे नहिं खोटे कर्म विपाक रहैं ॥ राग ॥ ४ ॥ नरकादिक गति नाशि मुक्ति पद लहैं जु ताहि कृपाधरहैं ॥ चंद्र समान जगतमें पंडित महाचन्द्र जिनस्तुति करिहैं ॥ राग०

(४७)

याही अरज हो मोरी श्रीजिन सांई ॥ टेर अबलौं हम तुम भेदन जान्यों मिथ्या भर्म भुलाई ॥ याही ॥ १ ॥ अन्य देवकी सेवा करिके लख चौरासी भरमाई ॥ याही० ॥ २ ॥ जाके सेवनतैं भव भव दुख सोही हमने सुहाई ॥ याही० ॥ ३ ॥ धन्य घड़ी पल आज दिवसकी तु-

म पद मस्तक नाई ॥ याही० ॥ ४ ॥ जन्म मरण दुख बेगि मिटावो करि त्रिभुवनमें राई ॥ याही० ॥ ५ ॥ बुध महाचन्द्र चरण पै ठाडी जाचत है शिव सुख दाई ॥ याही० ॥ ६ ॥

(४८)

कैसे कटै दिन रैन दरस बिन, कैसे ॥ टेर जोपल घटिका तुम बिन बीतत सोही लगै दुख देन ॥ दरश० ॥ १ ॥ दरशन कारण सुरपति रचिये सहस नयन की लैन ॥ दरव० ॥ २ ॥ ज्यों रवि दर्शन चक्र वाक युग चाहत नित प्रनि सैन। दर्श० ॥ ३ ॥ तुम दर्शन तै भव भव सुखिया होत सदा भवि मैन ॥ दर्श० ॥ ४ ॥ तुमरो सेवक लखि हैं जिन बुध महाचन्द्र को चैन ॥ दरशविन० ॥ ५ ॥

(४६)

जिनराज अरज हमरी याही ॥ टेर ॥ आप तो नाथ मुकतिपुर बैठे हम भव रूप परे खाई जिन० ॥ १ ॥ तारण तरण बिरद तुम सुणियो

तातैं आयो सरणाई ॥ जिन० ॥ २ ॥ पशुवादि-
क कोभी तुम तारे हमरी वेर मून कांई ॥ जिन०
३ ॥ मोह अरी को हनि कैं हम को वेगहि सुखि
या करि सांई ॥ जिन० ॥ ४ ॥ तुम पै ठाड़ो जा
चत शिव सुख बुध महाचन्द्र जु सिरनाई ॥ जिन०

(५०) बसंत ।

खेलैं नेम महा मुनि मन बसंत तजि रा-
जुल शिव सुंदरि तैं संत ॥ खेलैं ॥ टेर ॥ अनित्य
असत्यहि जग लखंत, असरण रण जिम जोधा
लरंत । संसार असार लखे महंत, खेलैं नेम ॥१॥
जीव एक अनादि भ्रमैं अनंत, पुद्गल खलु
भिन्न अभिन्न अनंत । अपवित्र वपु मल मूत्र
भ्रंत, खेलैं नेम ॥ २ ॥ कर्म द्वार सतावनतैं
डरंत, संबर अंबर तैं नित रुकंत । तप प्रबल ब-
ली निर्जर करंत, खेलैं नेम ॥ ३ ॥ लोक कर्त्ता
हर्त्ता हीन मंत, है दुर्लभधर्म प्रबोध मंत । बुध
महाचन्द्र प्रभूको नमंत, खेलैं नेम० ॥ ४ ॥

॥ इति ॥

बाल-शिक्षा।

कररहे बालक हाहाकार, अबतो चेत मूर्ख मतवाले ॥ टेर ॥ बालापनमें लाड़ लड़ाया, जेवर तनपै खूब सजाया, फूटा अक्षर नाहिं पढ़ाया झूठा मोह बढाने बाले ॥ १ ॥ फिर सादीकी धूम मचाई, नृत्यको वैश्या भी बुलवाई। खासी फुलवाड़ी लुटवाई, धनकी धूर उड़ाने वाले ॥२॥ यूंही बाली उमर बिताई, विद्या कुछ भी नाहिं पढ़ाई फिरतो जोर जवानी छाई, अबतो बार बार पछिताले ॥ ३ ॥ रहगये पूरे मूर्ख गंवार, न जाना जैन धर्मका सार। कर लिया विषयन को अखत्यार, पड़गये दुरमति के अब पाले ॥ ४ ॥ होवे इनका जब अपमान, रोवैं मात पिताकी जान। आया लाड़ प्यार क्या काम, दर दर भीख मंगानेवाले ॥ ५ ॥ छोडो लडुवोंका गटकाना, बिगड़े सम्पति फिर पछताना। खोटी रूढी रोक अयाना, दुखमें दुख भुगतानेवाले ॥ ६ ॥ आवो व्यथ व्ययसे बाज, तुमको तनिकन आवे लाज। अब तो गहरा हुवा अकाज, मोटी तूंद हिलाने वाले ॥ ७

करदो विद्या दान महान,यह सब दाननमें परधान तभीहो जैन धर्मका ज्ञान, संतति सुखके चाहने वाले ॥ ८ ॥ तुम सब धनमें माला माल, देरी हानहि होत कंगाल । कहता येही छोगालाल, लोभी मूंजी पैसे वाले ॥ ६ ॥ कर रहे बालक हा हाकार, अबतो चेत मूर्ख मतवाले ॥

आत्म-शिक्षा ।

मना तूने यह क्या काम किया । तूतोरे बिषियनमें राच गयारे ॥ टेर ॥ कपट क्रोध मद लोभ बसी हो झूठ ही बंध कियारे । हिंसा चोरी झूठ परिग्रह व्यभिचार का यत्नकियारे । मना० ॥१॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म सेयकरि मिथ्यातको धार लियारे मना० ॥२॥ रात दिवस धंधामें डोलत नाम प्रभू न लियारे । हीन भया तब विलखन लाग्या कोइयन साथ हुवारे ॥ मना० ॥ ३ ॥ गुप्तित्रय आचार पंच नहिं सम्यक ग्रहण कियारे । दश लक्षण वृष धारि नांहि प्रभू साहू शरण लियारे ॥ मना० ॥ ४ ॥